मूल लेखक

श्री देवेशचन्द्र दाश

अनुवादक

श्री इन्दुभूषण भट्टाचार्य

१९५०

द्वितीय संस्करण

मूल्य ३ रूपया

कल्याणीयेषु,

तुम्हारी यूरोपा पढ़कर विशेष आनन्द प्राप्त हुआ, उसका कारण यह है कि तुमने अपने देश के और लेखकों के समान यूरोप को खर्व करने की चेष्टा नहीं की है। तुमने उसके माहात्म्य एवं सौन्दर्य को सचन्तिःकरण से स्वीकार किया है,—दृष्टि को प्रसन्न न रखने पर किसी समय नूतन देश को सत्य रूप मे नहीं देखा जा सकता है। तुमने आनन्दित मन से यूरोप को देखा है और वही आनन्द पाठकों को वितरित किया है। मेरी दुर्बल लेखिनी इससे अधिक लिखने मे असमर्थ है।

इति—

रवीन्द्रनाथ

Rashtrapati Bhavan,
NEW DELHI.
5th March 1952.

इस पुस्तक के विषय के सम्बन्ध में कुछ कहना ढिठाई होगी जब इसको कवीन्द्र रवीन्द्र का आशीर्वाद मिल गया है। पाठक उसी से समझ लेंगे कि साहित्यिक क्षेत्र में इसका कितना महत्व है। मेरी दिलचस्पी विशेषकर इसके हिन्दी संस्करण में है क्योंकि इस संस्करण द्वारा यह हिन्दी जगत को मिल रही है और सबसे बड़ी बात यह है कि इसके लेखक बंगला भाषी हैं और बराबर आसाम में रहते आये हैं। वह सरकारी नौकरी करते हैं पर साहित्य और सांस्कृतिक विषयों में विशेष रस लेते हैं। और इसी का यह फल है कि इन्होंने हिन्दी भाषा सीखी है और अपने ग्रन्थ का अनुवाद किया है। मैं विश्वास करता हूँ कि हिन्दी पाठक ऐसे प्रयास का स्वागत करेंगे।

राजेन्द्र प्रसाद

"यूरोपा" में लेखक ने अपनी यूरोप यात्रा का चित्रण किया है किन्तु यह यात्रा पुस्तकों से सर्वथा भिन्न है। यूरोप के विभिन्न स्थलों, दृश्यों, घटनाओं आदि को देखकर लेखक के मन पर जो चित्र अंकित हुए हैं, उन्हें वह अपनी लेखनी द्वारा प्रतिबिम्बित करने में सफल हुआ है। अपने अनुभवों को व्यक्त करने में लेखक का ध्यान यूरोप के ऐहिक रूप की ओर गया ही नहीं है। उसने उसके सौंदर्य से प्रभावित होकर अपने भाव व्यक्त किये हैं, जो कवि की भावुकता से भरा हुआ है।

इस पुस्तक में पाठक को नये क्षितिज की ओर संकेत करता हुआ नया दृष्टिकोण देखने को मिलेगा। इसके द्वारा उसे संस्कृति एवं बौद्धिकता के एक नये जगत का परिचय मिलेगा, जिसको हम अपने स्वतंत्र देश में उत्पन्न करना चाहते हैं।

पुस्तक मूल रूप में बँगला में लिखी गयी थी। अनुवाद में नव वाक्य-विन्यास, मौलिक प्रकाश भंगि एवं प्रचुर जीवनी शक्ति की दृष्टि से पुस्तक की भाषा अपनी विशिष्टता रखती है। बंगला साहित्य में इस पुस्तक को जो सम्मान प्राप्त हुआ है वह उसे राष्ट्रभाषा में प्राप्त होगा, ऐसी मेरी हार्दिक कामना है।

कवीन्द्र रवीन्द्र नाथ ठाकुर ने स्वयं लेखक का परिचय साहित्य जगत से कराया है, उसके सम्बन्ध में अधिक कहने की आवश्यकता नहीं है।

राय कृष्ण दास

सभापति, नागरी प्रचारिणी सभा,

बनारस

श्री देवेशचन्द्र दास का "यूरोपा" देखकर और उसके कुछ अंश पढ़कर तथा सुनकर मुझे परम हर्ष हुआ। श्री दास आई० सी० एस० हैं और ऐसे पद पर कि उन्हें लिखने पढ़ने का अवकाश ही कठिनाई से मिलता होगा, फिर यदि वे अपनी मातृभाषा अथवा अंग्रेजी में लिखते हों तो भी कदाचित् विशेषता की बात न हो, परन्तु अपनी मातृभाषा तथा अंग्रेजी में लिखने के अतिरिक्त वे राष्ट्रभाषा हिन्दी में भी लिखते हैं और ऐसी वैसी हिन्दी में नहीं पर ऐसी हिन्दी में जो कई स्थानों पर तो गद्य काव्य का रूप ले लेती है। मैंने किसी अनुवाद में ऐसी परिष्कृत और काव्यात्मक भाषा नहीं देखी। "यूरोपा" एक सुन्दर ग्रन्थ है। लेखक ने यूरोप में जो कुछ देखा है और देखकर लेखक के कवि हृदय में जो भावनाएँ उठी हैं उनका इस पुस्तक में इतना सुन्दर समावेश हुआ है कि अनेक स्थानों पर तो पाठक मुग्ध हो जाता है, और केवल मुग्ध होता है इतना ही नहीं, उन स्थलों को पढ़कर वह पुस्तक बन्द कर लेता है और जो कुछ पढ़ता है उसमें तल्लीन हो उसका रस स्वादन करता रहता है। यात्राओं पर इस प्रकार की पुस्तकें मैंने बहुत कम पढ़ी हैं।

श्री दास अपनी मातृभाषा और राष्ट्रभाषा दोनों के प्रासादों को इसी प्रकार भरते रहें, यही मेरी कामना है।

गोविन्द दास

(भु: सभापति हिन्दी साहित्य सम्मेलन)

हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग

(हिन्दी विश्वविद्यालय)

श्री देवेशचन्द्र दास की 'यूरोपा' को देखकर अत्यन्त कौतूहल हुआ और ज्यों ज्यों पुस्तक के अन्तराल में प्रविष्ट होता गया त्यों त्यों मेरा कौतूहल क्रमशः आश्चर्य, उल्लास और तन्मयता के भावों के साथ रससिक्त होता गया। ग्रन्थकार महोदय ने इस ग्रन्थ में यूरोप के भौतिक, स्थूल और जड़ स्वरूप में से सौंदर्य का मंथन किया है और अत्यन्त सहृदयता और सरसता के साथ अपनी कोमल-कान्त-पदावली-मंडित हिन्दी में उसे अभिव्यक्त किया है। जिस ग्रन्थकार ने चित्र की कविता का भाष्य मन्त्रद्रष्टा ऋषि की भाँति आत्मसात् कर लिया और चित्र में अंकित 'प्राण चञ्चल किशोरी' के 'हाथ में सकेत में सुदूर का आह्वान' सुना, देखा और अनुभव किया उस कवि-हृदय की कोमल कृति 'यूरोपा' का मैं अभिनन्दन करता हूँ और हिन्दी संसार में सहर्ष स्वागत करता हूँ।

सीताराम चतुर्वेदी

परिचय

लेखक स यदि मेरा परिचय न होता तो 'यूरोपा' को पढ़कर सोचता कि ग्रन्थकार बहुत दिन से साहित्य सृष्टि कर रहे हैं और वर्तमान पुस्तक उनके परिणत वयस की परिपक्व रचना है। किन्तु उनसे बात करने पर ज्ञात हुआ कि यही उनका प्रथम प्रयास है और प्रवीण होने के लिए अभी पर्याप्त समय है। अतएव अनुमान करता हूँ कि वे शुकदेव के समान पूर्व संस्कार लेकर पैदा हुए हैं, अथवा शिशुकाल से ही चुपके चुपके अपनी लेखिनी में परिपूर्णता लाते रहे हैं।

'यूरोपा' में सर्व प्रथम भाषा की निर्मल प्रकाशभंगी पर दृष्टि पड़ती है जिसमें किसी प्रकार की कृत्रिमता, मुद्रादोष अथवा उत्कट मौलिकता की चेष्टा नहीं की गयी है। इसकी भाषा मौलिक है, अंग्रेजी के मेल से इसने जात नहीं खो दी, फिर भी इसमें असाधारणता के लक्षण सुस्पष्ट हैं। लेखक ने आवश्यक स्थलों पर नूतन शब्द गठन किया है, नूतन रूप से वाक्य विन्यास किया है, किन्तु वे सब ही भाषा की प्रकृति से निर्विरोध मेल खा गये हैं।

यह पुस्तक साधारण भ्रमण वृत्तान्त नहीं है। यूरोप के गिर्जा, मठ, दुर्ग, सेतु, प्रासाद, चित्रशाला आदि का वर्णन भी इसका मुख्य विषय नहीं है। यूरोप ने कितनी उन्नति की है और साथ ही हम कितने पीछे हैं, इस प्रकार का विलाप भी इसमें नहीं है। लेखक ने प्रत्येक दिन क्या किया, केदार-बदरी यात्री के समान किस चट्टी पर विश्राम किया और कितनी बार खिचड़ी खायी। इस प्रकार की विश्वस्त खबर भी इसमें नहीं है।

लेखक का कृतित्व यही है—वे यूरोप का जो वैचित्र्य देख स्वयं मुग्ध हुए उसी रस का उन्होंने लेखन शक्ति से पाठकों के मन में भी संचार किया है। यूरोपीय प्रकृति का जो रूप लेखक ने वाह्य एवं अन्तर्दृष्टि से प्रत्यक्ष किया है वह केवल निसर्ग शोभा नहीं है, ऐतिह्य मानव प्रकृति जातीय साधना सब ही उनकी अन्तर्भुक्त हैं। तीर्थयात्री स्पेशल ट्रेन के समान वे पाठकों की चोटी पकड़ बीस दिन में विलायत घूमकर नहीं आ गये हैं। इस पुस्तक में जो चित्र परम्परा देखता हूँ वह संक्षिप्त एवं निर्वाचित, किन्तु जीवन्त एवं हृदयग्राही है। यूरोप दर्शन का मेरा सौभाग्य नहीं हुआ है। किन्तु 'यूरोपा' पढ़कर ऐसा लगता है कि मनश्चक्षुओं से मैं उसे देख रहा हूँ।

राजशेखर बसु

लेखक का निवेदन

यूरोप का जो चित्र इस पुस्तक में पाठक के सम्मुख उपस्थित किया गया है, गत महायुद्ध के बाद उसकी कुछ सार्थकता है अथवा नहीं, इस प्रश्न का होना स्वाभाविक है। और जो यूरोप लुप्त हो रहा है, और युद्ध के बाद पुनर्गठन करने पर भी जिसको प्राप्त नहीं किया जा सकता, एक मात्र उसी का चित्र इस पुस्तक में चित्रित नहीं किया गया है। मेरी तरह अनेकानेक कल्पनाभिलाषियों के कैशोरिक स्वप्न का तीर्थ बहुधा नाना कारणवश भग्न भू-लुण्ठित तथा शान्ति के सुख-स्वर्गच्युत हो जाता है फिर भी तो मानव उस अतीत तथा शाश्वत के चित्र या कहानी के क्षीण तथा असम्पूर्ण होने पर भी उसका आन्तरिक परिचय बार बार प्राप्त करना चाहता है। इसी प्राप्ति-स्पृहा में 'यूरोपा' की कुछ सार्थकता हो तो मैं अपने को सौभाग्यवान् समझूंगा।

इसको छोड़कर चिरचंचल में जो चिरंतन का स्पर्श मिलता है उसकी माधुरी तथा महिमा का यूरोप जैसे बहुमुखी जीवनी शक्ति सम्पन्न देश में सन्धान करने का प्रयोजन है। वह सन्धान अगर हम लोगों को मिले तो विशेषतः इस नवलब्ध स्वाधीनता के युग में भारत तथा यूरोप केवल आनन्द के अन्न-सत्र में नहीं, ज्ञान के यज्ञ-सत्र में भी अनायास ही ससम्मान सम्मिलित हो सकेंगे।

मैं यूरोप में परदेशी की तरह रहा हूँ यह मैं नहीं मानना चाहता। केवल मानसलोक में ही विहार करना चाहा था। उसके साथ जो स्मृति एवं श्रद्धा विजड़ित है उसने मुझे भारत-

वर्ष को नूतन आलोक में पहिचानने में सहायता की है। अतः मैं यूरोप के निकट कृतज्ञ हूँ।

अत्यन्त संकोच के साथ मैं यह स्वीकार करता हूँ कि मूल रचना बंगला से हिन्दी में अनुवाद करने के लिए जिस भाषा का व्यवहार किया गया है वह साधारणतः प्रचलित तथा सरल हिन्दी नहीं है। परन्तु राष्ट्र-भाषा में असीम जीवनी शक्ति तथा ग्रहण शक्ति रहना आवश्यक है। एक सद्योजागरित एवं जीवित महाजाति की राष्ट्रभाषा के प्रधान उपकरण हैं—मौलिक प्रकाशन विधि, नव शब्द गठन तथा नूतन भाव विन्यास। इस विषय में इस पुस्तक में परीक्षामूलक जो चेष्टा की गयी है, पाठकगण से निवेदन है कि वे उसपर सहानुभूति पूर्वक विचार करते हुए क्षमा करेंगे।

'यूरोपा' को हिन्दी में प्रकाशित करने के लिए आरम्भ से ही नागरी प्रचारिणी सभा के सभापति महोदय श्री राय कृष्णदासजी तथा माननीय श्री श्रीप्रकाशजी ने जो साहस तथा उत्साह दिलाया है उसके लिए मैं उनका कृतज्ञ हूँ। माननीय श्री श्रीप्रकाशजी के संस्पर्श में आने से हिन्दी-साहित्य जगत् से मेरा जो प्रथम परिचय हुआ है वह मेरे जीवन में परमानन्द का उत्स बना रहेगा।

श्री देवेशचन्द्र दाश

सूचीपत्र

मरना मैं नहीं चाहता

सुन्दर संसार में मरना मैं नहीं चाहता। सवेरे से यही बात सोच रहा हूँ। एक पुरानी चिट्ठी सामने खुली पड़ी है और आंखों के सामने एक अनुपम चित्र नाच रहा है। पाँच वर्ष पूर्व लिखी एक मित्र की चिट्ठी है, वह सेना में भर्त्ती होने के पूर्व रात्रि को लिखी गई आसन्न विरह से विह्वल और जीने की इच्छा से व्याकुल एक नव विवाहित की चिट्ठी है। उसकी नव विवाहिता पत्नी के देश पर जर्मनी का अधिकार हो गया है। अपने देश में उसकी स्थिति मुखरित जल-प्रलय के बीच अन्तिम वृक्ष की भांति डगमगा रही है। कल सवेरे उसे सेना में भर्त्ती होना होगा। उसने लिखा है—"मेरे चारों ओर पतनोन्मुख पृथ्वी है, प्रलयोच्छ्वास का जल-कल्लोल कानों में गूंज रहा है। नव-परिणिता को अकेला छोड़कर जाना अत्यन्त दुखदायक है। फिर भी अपने देश के जिस कवि का गीत तुम प्रायः मुझे सुनाते रहे उसीको मैं तुम्हें अपने इस अन्तिम पत्र में लिखकर जाना चाहता हूँ—'सुन्दर संसार में मरना मैं नहीं चाहता'।" पांच वर्ष पूर्व नीरव मृत्यु की आह्वान-रात्रि की भाषा आज सवेरे मेरे सामने शून्य जीवन की आकांक्षा प्रकाशित किये दे रही है। मरना मैं नहीं चाहता।

तथापि युद्ध के इन छः वर्षों में मृत्यु और मृत्यु से बढ़ कर ध्वंस की कितनी क्रीड़ायें यूरोप में अभिनीत हुईं, और उनका परिमाण कितना व्यापक और गंभीर है इस समय भी कोई नहीं जानता। युद्ध से पूर्व का मेरा यूरोपा सुदूर अतीत के मिथ्या सुख-स्वप्न की तरह पास आने के लिए संकेत करता कहाँ छिपा जा रहा है कहा नहीं जा सकता।

युद्धक्षेत्र, उजड़े देश एवं संत्रस्त शहरों में वियोग-कातर अन्वेषी मन लिये घूमता फिरता हूँ। किन्तु कहाँ है वह यूरोपा जिसके मोहन माधुर्य्य एवं अनन्त जीवन ने अन्तर-लोक में नवीन आलोक भर दिया था, जिसके दिये हुए कल्पनामाल्य एवं आनन्द अलक्तक रणक्षेत्र के सैकड़ों धूम्रजाल में भी अमलिन रहेंगे, जिसके छोटे छोटे चित्र, तुच्छ कल्पना लहरी अकारण आनन्द एवं विफल वेदना की घड़ियाँ स्मृति के कोने कोने में अनन्त रूप धारण कर बार बार जाग्रत हो उठती हैं। उनके विस्मरण के सुदूर प्रभात की माया से आज के अचिरस्थायी ध्वंस-उत्सव और मानवता के इस अनभिप्रेत सर्वनाशक मृत्यु अभियान को मिलाया जा सकता है? संत्रस्त वसुन्धरा के बीच ही मैं उस यूरोपा को खोजूंगा।

चिर चंचलता के मध्य यूरोप ने नित्यता का जो आभास पाया है वही है मानव के अनुभव सुख दुख और प्रेम का विचित्र विकास। शताब्दी के पश्चात् शताब्दियों तक युद्ध और विप्लव की वास्तविकता के बीच भी यूरोप मानव के बारे में भूला नहीं है। अतएव दस वर्ष पूर्व के भी चित्रों का शाश्वत रूप अति निकट से बार बार देख रहा हूं। दूर से एक ऐतिहासिक दुर्ग के रहस्य का उद्घाटन करने के पश्चात् न्यूरेमबर्ग के एक अपरिचित पथ पर अकेला चल रहा हूं। जिस घर में कैदियों पर मध्ययुगीन प्रथा के अनुसार अत्याचार किया गया, ठीक उसके पास के घर में, अतीत की किसी राजकुमारी की चम्पक तुल्य अंगुलियों के स्पर्श से

अभ्यस्त, एक विचित्र वीणा रखी हुई थी। उस पर किस प्रकार चुपके चुपके कठोर अंगुलियों के आघात से सुर झंकृत करने की चेष्टा की एवं कई दर्शक उसे सुनकर किस प्रकार कौतूहल-वश दौड़े, वह बात सोचकर विदेशी जनोचित गंभीरता के आवरण से आवेष्टित मुख पर भी असंभव रूप से जो हंसी खेल उठी उसे मैं समझ रहा हूं और उसे अत्यन्त स्पष्ट करते हुए चल रहा हूं।

इसी समय पीछे की ओर से किसी ने पुकार कर इस मानसिक विपत्ति से मेरा उद्धार किया। एक बिस्कुटी-खण्ड के मनुष्य ने अर्थात् स्काटलैंड के बाहर के एक स्काट छात्र ने मुस्क-राते हुए मुझे बुलाया। उसने सोचा था कि किसी विशेष कारण वश मैं कौतूहल अनुभव कर रहा हूं, और यद्यपि मैं अपरिचित हूं, तथापि मैं इस विदेश में उसके लिए परिचित हूं, कारण अंग्रेजी में निश्चित रूप से उससे बातचीत कर सकूंगा। और यदि मैं अपरिचय का बांध लांघ कर उसके आह्वान का उत्तर दूं, तो वह मेरे कौतुक का अंश ग्रहण करने को उत्सुक था। ऐसे मनुष्य से मित्रता न कर और करता ही क्या? इसके अतिरिक्त जर्मन-जीवन के बीच प्रवेश करने की समुचित कुञ्जी निश्चय ही इसके पास है। वह इस प्रकार विदेशीयता का आवरण हटाकर आगे आया था। वह अवश्य ही इन लोगों में घुल-मिल गया था। सम्भवतः इसके मन में भी रवि बाबू की वही कविता घूम रही थी—

'कितने अनजानों को जताया तूने'

रात्रि को हम दोनों पृथ्वी के नीचे छिपे सत्रहवीं शताब्दी के पुराने एक 'सेलर' में ब्यालू करने गये। उस काल में व्यवहृत होने वाले पात्र में समयानुकूल पेय है। दो जनों को परस्पर बाँहों में बाँहें डाल इसे पीना होता है। कारण बिलकुल सामान्य कहा जा सकता है अथवा विशेष असामान्य भी। वाद्य की ताल पर सब मिलकर जिस गान को एक सुर से गा रहे थे, उसका अर्थ इस

प्रकार है—राइन नदी की जलधारा सुन्दर है, किन्तु उससे भी सुन्दर है वह राइन-बाला जिसके नयनों में उस जल का प्रतिबिम्ब पड़ता है, जिसके सुनहरे केश राइन-धारा के समान कन्धों पर क्रीड़ा करते हुए बिखरे पड़े हैं; अतएव तुम सब 'स्पार्कलिंग-राइन' पान करो। ऐसे गान, ऐसे उल्लास और पेय के विनिमय में इस प्रकार की रुचि की प्रथा देखते देखते आशा नहीं मिटती। राइन के नाम से सभी विह्वल है, गान और वाद्य से सभी मुग्ध। बर्न्स के देश के मित्र का मुख देखकर ऐसा लगता कि यद्यपि वह बहुत प्रसन्न है फिर भी उसके मन में कहीं एक कांटा चुभकर उसे पीड़ित कर रहा है। यह क्या किसी के प्रेम की स्मृति है? यह क्या किसी की भूली प्रीति है? यह स्मरण-विस्मरण, प्रकाश-अन्धकार में जड़ित आनन्द-वेदना की अन्ध अव्यक्त अनुभवराशि तो नहीं जो उसके मौखिक गीत उच्चारण के बीच रूप ग्रहण कर रही है। बर्न्स की कविता याद आगई—

"My heart is sair
I dare na, tell."

उसके मन से पीड़ा निकल जाय। इस विह्वल रजनी के आनन्द एवं चांचल्य के स्त्रोत के समान सबको ही बहाये लिये जा रही है। देशी विदेशी का कोई अन्तर नहीं; यह केवल भोजनशाला नहीं, यह है चित्त के विश्राम के लिए आश्रम। गीत-सुधा और प्रीति-सुरा से सब के ही 'प्राण हुए अरुण वर्ण'। कौन कहता है, टूटा कांच और टूटा हृदय नहीं जुड़ता? भग्न और वेदना पर यूरोप का नया दावा है, नूतन दृष्टिभंगी और जीवन को अनेक प्रकार से देखने की दार्शनिकता नित्य प्रलेप देती रहती है। इसी की रासायनिक क्रिया मन को एक दिन गतिशील और दुख को सहनीय बना देगी। इस प्रकार ही केवल व्यक्ति विशेष अथवा देश विशेष नहीं, अपितु समस्त

यूरोप बार बार विपर्यस्त एवं युद्ध-त्रस्त होकर भी संगीत की लय में, आनन्द की झंकार में उल्लास से जाग उठेगा। आज के ध्वंस-वर्धक वायुयानों से पीड़ित आकाश की मोहक नीलिमा में मनुष्य लघुपक्ष वाले पक्षियों के समान विहार करेगा। भग्न, लुण्ठित एवं प्राचीन स्थान पर नवीन कल्पना के अनुसार ग्राम और नगर बनेंगे। ध्वंस के मरु पर नवश्याम तृणदल का वपन होगा।

युद्ध की बात सोचते सोचते याद आया उस जर्मन-फ्रांसीसी नवदम्पति का क्या हुआ जिसने राइन के वक्ष पर मेरे साथ एक जहाज में जल-विहार के लिए योग प्रदान किया था। उस दिन भी इसी प्रकार की घनघोर घटायें जर्मनी के भाग्याकाश को मलिन कर रहीं थीं। आशंका एवं संशय से 'सार' के रहने वाले इस दम्पति की तरह उद्विग्न थे। वर ने मुझसे पूछा, "क्या तुम्हें ऐसा लगता है कि निकट भविष्य में युद्ध छिड़ेगा ?"

जर्मन वर और फ्रांसीसी वधू। यदि युद्ध छिड़ा तो हृदय और कर्त्तव्य का द्वन्द्व किसको कहाँ तक खींच ले जायगा यह विचार मन में उठा। वे नहीं जानते थे, उनकी पहले की अनेक बातें द्रुतगामी स्टीमर की वायु में तैरती मेरे अवांछित कानों में आपड़ी थीं। मन ही मन सोचा था, इनका एकान्त आलाप सुनना नहीं चाहिए, किन्तु उस समय की मेरी दशा कालिदास द्वारा वर्णित 'न ययौ न तस्थौ'-सी थी। यदि हट जाता हूं तो ये समझेंगे, क्यों चला गया। कौन जाने इससे इस 'क्रौञ्च-मिथुन' कथोपकथन में यति भंग हो जाय और मुझे इस जीवन में प्रतिष्ठा लाभ न हो। और यदि विदेशी मानकर कुछ भी देखता नहीं, सुनता नहीं, समझता नहीं, ऐसा प्रकट कर जहाज की रेलिंग पर टिककर राइन की शोभा देखता खड़ा

रहता हूँ तो इससे उनके मधुचन्द्र यापन में कोई यति अथवा छन्द ही क्यों मानवशास्त्र की कोई व्याकरण सम्बन्धी भूल भी न होगी, केवल एक प्रवञ्चना को छोड़कर। अतएव उनकी सुविधा के लिए चलो पाप ही कमा लिया।

वधू—सुनो! वह बात अभी तक मेरे मन में चुभ रही है, आजके 'टागेब्लाट' का समाचार अच्छा नहीं है। बताओ तो क्या होगा?

वर—कुछ भी न होगा। आज हम मधुचन्द्र यापन करने चल रहे हैं। आज कुछ भी न होगा।

वधू—आज तो कुछ भी न होगा, किन्तु फिर तो हो सकता है?

वर—पता नहीं। यदि कुछ होता भी है तो हम दोनों तो इसी प्रकार रहेंगे। हम तो बिछुड़ेंगे नहीं।

वधू—क्या तुम मुझे अपने पास रख सकोगे? तुम्हें तो तुम्हारा देश मुझसे छीन ले जायगा।

वर—न, न, यह न हो सकेगा। तुम तो इस समय फ्रांसीसी नहीं, तुम तो मेरी विवाहिता स्त्री हो।

वधू—युद्ध होने पर इससे भी काम न चलेगा। विदेशी स्त्रियां पिछली बार रोक ली गई थीं।

वर—न, न, आज यह बात मत सोचो।

वधू—तुम यह क्या कहते हो। मैं क्या यह बात सोचती हूँ? तुम्हारे पास मैं हूँ, हमारे पास सोचने का समय कहाँ?

वर—ठीक यही; हमारे लिये यह सब सोचने का समय नहीं है।

कुछ क्षणों के लिए पूर्ण शान्ति। केवल राइन के वक्ष पर उद्वेलित हृदय के समान दो तुच्छ भग्न लहरियाँ स्टीमर के पीछे की ओर आघात करती चली जा रही थीं। उनकी

चिन्ता मुझे भी उद्वेलित कर रही है। दोनों ओर पहाड़ी दुर्ग इतिहास के पृष्ठों से नीचे उतर कर शत-शत आशाओं के संहार एवं हृदय की भग्नता के साक्षी के समान खड़े हैं। धीरे धीरे नव-दम्पति का रूपान्तर हो गया।

वर—सुनती हो, बड़ी चिन्ता हो रही है। किन्तु यदि युद्ध छिड़ता है तो उसके लिए चिन्ता करने से क्या होगा? उसके आगे अनन्तकाल है। उस अनन्तकाल का आस्वाद आज पा रहा हूँ। थोड़ा पास आ जाओ।

वधू—तुम क्यों सोचते हो। कुछ भी न होगा। मैंने ही झूठ मूठ समाचार की बात चलाकर दिन बरबाद कर दिया।

वर—ना, ना, तुमने ठीक ही कहा है। ये सब बातें हमें सोचना आवश्यक है। तभी तो हम अपने देश की जनता को युद्ध के विरुद्ध कर सकेंगे।

वधू—युद्ध, युद्ध, केवल युद्ध! बचपन में देखा और सम्भवतः फिर देखना होगा।

वर—कौन जाने, सम्भवतः हमारे बच्चे भी देखें।

वधू—ना, यह नहीं होने दूंगी। तोपों की रसद संग्रह करने के लिए हमारे बच्चे नहीं होंगे। आजकल सभी स्त्रियाँ ऐसा कहती हैं। भविष्य में स्त्रियाँ ही शान्ति को अटूट रखेंगी। तुम देख लेना।

भविष्य के इस आश्वासन से वर को वर्तमान में विश्वास हुआ ऐसा नहीं जान पड़ा। केवल स्त्री-आदर्श के आलोक से उद्दीप्त हो कर विक्षुब्ध जलराशि पर फेन समूह के समान उद्भासित हो उठीं। वर इस समय मेरे अस्तित्व के सम्बन्ध में चैतन्य होकर थोड़ा पास आकर मुझसे बोला, "तुम्हें कैसा लगता है, निकट भविष्य में युद्ध होगा?"

इसी नव दम्पति की युगल-हस्ताक्षर सहित उपहार स्वरूप राइन तीरवाली चिट्ठी इस समय भी मेरे पास है।

राष्ट्रतन्त्र हृदय की सुकुमार वृत्तियों को सुप्त कर देता है, राजनीति प्रीति को निर्ममता के साथ कुचल देती है। मानो मनुष्य जन्म लेते ही इसी के लिए उत्सर्गीकृत हो जाता है। फिर भी इसके विरुद्ध विद्रोह होता है, राज्य और राजनीति के सृजन-ध्वंस की उपेक्षा कर नूतन मिलन के बन्धन में नवीन यात्रा-पथ की पथिक होकर मानवात्मा जाग उठती है। इसीसे यूरोप में युद्ध, युद्धोत्तर के क्लेश और द्वेष पर नव नव युगल हस्ताक्षर विजयी होकर हृदय की निविड़, निगूढ़ और निःसीम प्रतिलिपि में पढ़े जाँयगे। यूरोप तो मरना नहीं चाहता।

आज के इस स्वप्नमय आश्विन के शारदीय उच्छ्वास के आवरण को भेदकर एक और चित्र आगे आ रहा है। पुरानी पुस्तकों की दुकान मुझे सदैव आकर्षित एवं कल्पना को गतिशील करती है। शून्यमन से पुरानी पुस्तकें उलटते पुलटते सम्भवतः एक दिन किसी पुस्तक की पाण्डुलिपि हाथ में आ जाय जो मुझे विख्यात और सम्भव है अमर करदे। छात्रावस्था में सोचा करता था अनेक ऐतिहासिक एवं वैज्ञानिक आविष्कार के मूल में आकस्मिक घटना रहती है, कौन जाने मैं भी अज्ञात रूप से पुरानी पोथियों के क्षेत्र में कुछ आविष्कार कर उठूं। कहा नहीं जा सकता उस नाटे और कुबड़े दूकानदार की अल-मारियाँ जो पुराने हस्तान्तरित ज्ञान भण्डार से ठसाठस भरी हुई हैं उनमें की किस पुस्तक से एक गुलाब का सूखा दल किसी मिश्र की राजकुमारी अथवा ग्रीक महिला कवि की सुरभित स्मृति का इतिहास लाकर प्रकट कर दे। अथवा सम्भव है किसी गुप्तचर का गुप्त संकेत चित्र जो आज ही संध्या के समय किसी निर्दिष्ट एवं अज्ञात आगन्तुक की प्रतीक्षा कर रहा है

उसके बदले सहसा मेरे सामने प्रकाशित हो जाय। अतएव पुरानी पुस्तकों की दूकान देखने में उसके भीतर जाता हूँ। ज्ञान का प्रकाश एवं आभ्यन्तरिक अन्धकार दोनों ही मुझे जगा देते हैं। इसीलिये पैरिस की एक लैटिन क्वार्टर की दूकान पर गया जिसके एक कोने में पृथ्वी के अन्दर एक काफीशाला भी है। वहाँ लोक-चक्षुओं से अगोचर किसी विराट् गोपन तथ्य के प्रदेश में अज्ञात रूप से प्रवेश कर गया था, इसे क्या तब मैं स्वयं जानता था।

उसी एकान्त कोने में विज्ञान चर्चा में रत अनेक छात्र आणविक शक्ति का विस्फोट और आलोड़न हो सकता या नहीं इसी बारे में—व्यर्थ में अनेक चेष्टाओं सहित बातें कर रहे थे। वे सोच रहे थे इसमें सृष्टि की जो आदिम शक्ति निहित है उसे यदि मुक्त कर दिया जाय तो संसार में असाध्य कार्य किये जा सकते हैं। वे लोग आज कहाँ चले गये ? उन्होंने क्या केवल ज्ञान की पिपासा अथवा युद्धोन्मुख राष्ट्रों के स्वार्थ के लिए यह अनुसन्धान किया था अथवा उनकी वैज्ञानिक खोजों पर शत्रु के गुप्तचरों की वक्र दृष्टि पड़ गई। अथवा क्या वे अपने यंत्रालय में जीव-कल्याण के जिस रहस्य में संलग्न थे उसका रहस्य उद्‌घाटन कर सके अथवा उन्होंने मंगल-पथ से गिर कर वज्र के समान अमोघ मृत्युतुल्य निष्ठुर अणु बम के आविष्कार का पथ सुगम कर दिया। आज समस्त संसार वैज्ञानिकों से पूछ रहा है, हे पाश्चात्य-वस्तु-वैज्ञानिको! जीवन के रहस्य का उद्‌घाटन करते जाकर यह कैसा मारण-अस्त्र बना डाला ? संहति के स्थान पर संहार का पथ क्यों प्रशस्त किया, हे प्रतीची, जिसके फलस्वरूप एक बम के आकस्मिक प्रकाश से विश्व की आँखें विश्वास के प्रति अन्धी हो गईं, प्रलय के घोर रव ने हमारे कानों को ज्ञान की वाणी के प्रति बहरा कर दिया।

०

यदि यही अन्तिम फल हो तो इस श्यामल सुन्दर धरनी को, तथा उसके प्रेम रस से फूले फले विकसित जीवन के विहार क्षेत्र, प्रिय गृह एवं संयोग को लेकर क्या होगा? इन सब का निर्माण क्या हमने संहार करने के लिये किया है? इतने काव्यगाथा, मूर्त्तिकला, ज्ञान-विज्ञान, हृदय की इतनी भावनाओं का उदय एवं स्वीकृति और इतनी उपयोगी विद्या का आविष्कार एवं प्रसार—ये सब क्या जिस अणु से मनुष्य की सृष्टि हुई उसी अणु से उसे ही नहीं, अपितु उसके साथ युग-युग से सञ्चित सृष्टि और सभ्यता को निमेष मात्र में निर्मम भाव से मिटा देने के लिए हुआ है? कवियों का कथन है, प्रत्येक मनुष्य एक एक द्वीपखण्ड है, उसे विरह का खारा समुद्र घेरे रहता है। हमने इसी व्यवधान की समाप्ति के लिए सभ्यता की सृष्टि की। जहाज़ और विमान दूरी को घटा कर भाई-भाई को एक स्थान पर लाने के लिये बने हैं। और अब क्या जहाज़ केवल शत्रु-वाहिनी को लादकर लाने के लिए ही बनाये जाते हैं? यह तो नहीं हो सकता। अपितु आज पूर्व और पश्चिम का जन समाज इसीलिए उठ खड़ा हुआ है कि पृथ्वी मनुष्य की ही रहे, दानवों के हाथ न बिक जाय।

मनुष्य में उसके प्राण और प्रतिभा ही उसका सबसे बड़ा परिचय है। प्राण उसे सृष्टि देता है और प्रतिभा उसकी प्रतिष्ठा करती है। अपनी प्रवास यात्रा में इन दो की ही लीला और माधुरी देखी है और यूरोपा में इसी को प्रकाशित करने का प्रयास किया है। किन्तु पृथ्वी त्रिसोता है। इसीसे संहार की लीला पास सट कर चल रही है, जिसे संसार में न तो हम चाहते हैं और न उसका निवारण कर पाते हैं। किन्तु इतनी शताब्दियों की साधना के पश्चात् प्रलय ही क्या सृष्टि

और स्थिति पर विजय पाया जा सकेगा? यह बात पृथ्वी पर कोई भी मानने को तैयार न होगा। अतएव इतना आगे आकर आज वापिस जाने का पथ नहीं। हम सब इस समय चाहते हुए भी महाभारत के महायुद्ध के परवर्त्ती काल के समान सब अस्त्र-शस्त्र समुद्र के गर्भ मे फेंक कर महाप्रस्थान करने की चेष्टा नहीं करेंगे। किन्तु संहार के पथ पर, और कितनी दूर, और कितनी दूर करते हुए हम आगे बढ़ते हुए चलते जायेंगे।

प्रतीची स्वार्थ के होते भी इसी बीच में जाग उठी है। यूरोप में आज यह प्रश्न उठ रहा है कि जिस विद्या का उत्सर्ग मानव के कल्याण के लिए होने वाला था उसे पृथ्वी को श्मशान बनाने में क्यों किया गया? अणु के विस्फोट के बीच यूरोप ने शिव देखना चाहा था, किन्तु आँख खुलने पर सामने चारों ओर दिखाई पड़े ढेर के ढेर शव। इसीसे वह कहता है कि केवल शत्रु पर विजयी होने से शान्ति स्थापित न होगी, मानवात्मा को अपने पर विजयी होना होगा। यह चेष्टा सार्थक हो। इसी चेष्टा में पूर्व शताब्दियों से रत था।

येनाहं नामृता स्याम्
तेनाहं किं कुर्य्याम्।

उस अमृत की खोज अब भी समाप्त नहीं हुई है। चारों ओर जबकि ध्वंस और अशान्ति की लीलायें चल रही हैं, पूर्व की प्राचीन साधना और पश्चिम के नवीन अनुसन्धान, शान्ति और कल्याण के पथ का आविष्कार करें। इन दोनों में कोई भी दूसरे को छोड़कर स्वयं सम्पूर्ण न हो सकेगा। परमात्मा का ज्ञान एवं परमाणु विज्ञान दोनों ही सभ्यता की परमायु के लिए आवश्यक हैं। उसीको प्राप्त कर हम मृत्यु-ञ्जय-जीवन प्राप्त कर सकेंगे।

निरुद्देश यात्रा

सुदूर के लिए दोलायमान मन, और इंगलैण्ड का अपरूप ऋतु उत्सव के जुलूस परीक्षार्थियों के खिड़कियों के सामने होकर प्रतिमास चला गया है। प्रथम वसन्त के भीरु उल्लास के बीच मैंने लौटना चाहा।

वृक्ष वृक्ष में फूल खिले हैं। भविष्य की सम्भावना की सूचना खोजने के लिए, 'स्वालो' पक्षी के वापिस आने के लिए, 'सीगल' की जलकेलि के लिए, और अपने खिड़की के सामने के 'बर्च' वृक्ष के पत्ते पत्ते के रंग परिवर्तन के साथ 'ब्लैकबर्ड' के आगमन के लिए अपने को प्रस्तुत किये हूँ। सबेरे के 'स्काईलार्क' की पुकार सुनने में एक दिन की भी भूल नहीं हुई; 'स्नोड्राप' और 'क्रोकस' के सहसा विकास के सन्धान की उपेक्षा करने की एक दिन भी इच्छा नहीं हुई।

आज छुट्टी है, छुट्टी। मन ही मन जिस वसन्त-व्याकुलता का अनुभव करता था उससे आज बन्धन मुक्त होऊँगा। काम की बाधा दूर हो गई—, वह किसी प्रकार भी क्यों न हुई हो—आंधी में उड़कर अथवा वर्षा में घुलकर—और मैं अनिर्दिष्ट पथ पर बाहर निकल आया हूँ। आज से अपनी छुट्टी किस प्रकार बिताऊंगा? दोनों ओर लतागुल्म और 'हेज' की सीमा

से बंधे छाया-सुनिबिड़ ग्राम-पथ पर पैदल चलते चलते कब मृदु कम्पित 'वायलेट' का शेष स्पर्श प्राप्त होगा अथवा दीर्घ से दीर्घतर होते दिन के उत्ताप से कब 'लाइलक' और 'लैबर्नम' विकसित हो उठेंगे, इसका ध्यान रखते हुए आज यात्रा करूँगा। 'सरे' के एकान्त निद्रामग्न 'नाइटिंगेल' मुखरित नदी के किनारे? 'ससेक्स' के सानुदेश के हरित प्रान्तर में?

यह देश एक दिन के लिये भी नूतन अथवा अपरिचित नहीं लगा। मेरी बहुत दिनों की कल्पना के ग्राम—टामस हार्डी के ग्राम, चेरी-मैपिल-पापलर के सुन्दर लीला चञ्चल हास्यमय मे-उत्सव के ग्राम के चित्र के साथ इंगलैण्ड के ग्राम मानो घुल-मिल गये। साहित्य के पृष्ठों मे इंगलैण्ड के इन ग्रामों से परिचय था। जहाँ धूप में दीप्ति है—दाह नहीं, प्रकृति का उल्लास है—उन्मत्तता नहीं, जहाँ कृषक बालकों के समान "गर्स" के सौरभ से आमोदित प्रदेश मे पेड़ की छाया के नीचे सोकर सुमधुर आलस्य में गुन-गुन कर गीत गाया जायगा—

> Lying in the hay all day
> I feel as lazy as the hazy summer day—

जहाँ शीत की समाप्ति पर बसन्त के चुम्बन-पुलक में प्रकृति जब परिणत शोभा में मधुर हो उठती है, उसी समय चार्ल्स लैम्ब के समान दिन के प्रसन्न आलोक का अनुभव करूँगा—
I feel ripening with the orangery.

शरत्काल के बन्धन-मुक्त मन ने लंदन में और पड़ा रहना नहीं चाहा। इसी समय प्राचीन भारत के राजा दिग्विजय के लिए बाहर निकल जाते थे मेरा मन भी यूरोप के सब देशों में घूमने के लिए उत्सुक हो उठा। चंचल होकर उठ बैठा, जहाँ इच्छा होगी चला जाऊँगा, जितनी दूर इच्छा

होगी चला जाऊँगा—जहाँ मेरे चारों ओर की यह अवस्था न रहेगी, परिचित लोग न होंगे, और न यूरोप की सतर्क समयनिष्ठा और सुकठिन आचारशीलता होगी।

एक दिन संध्या के समय 'यूथ होस्टल एसोसिएशन' के हम तीन नये सदस्य पीठ पर बंधे झोले में कपड़े लत्ते तथा अन्य वस्तुएं लिए 'एडिनबरा' के अतुलनीय राज-पथ प्रिंसेस स्ट्रीट को पार करने लगे। लंदन से सिर्फ कई घंटे की यात्रा, इसके अतिरिक्त इतना बड़ा शहर। फिर भी प्रिंसेस स्ट्रीट से एडिनबरा के गिरि-दुर्ग देख मन में ऐसा होने लगा मानो इसके बीच में मेरा अरण्यवास आरम्भ हो गया है। जनारण्य के बीच ही में यह दुर्ग माथा ऊँचा किये खड़े है—यह तो विचित्रता का आरम्भ है। साथ ही साथ मन में आता है इसी शहर के उपकण्ठ में रानी मेरी का हालीरुड प्रासाद। सोचते ही मन कैसा चंचल हो उठता है।

एडिनबरा में अड्डा बनाकर इंगलैण्ड और स्काटलैण्ड के सीमा प्रदेश में कुछ घूमना हुआ। इस सीमान्त को "स्काट" का देश कहा जा सकता है, कारण "स्काट" की लेखिनी ही इस स्थान को इतना विचित्र, रोमाञ्चकर एवं प्राणवन्त कर गई है। 'स्काट' के वर्णन में जिस देश और दृश्य को पाता हूँ, वह अब भी अटूट है, केवल नहीं हैं उस अद्भुत युग के मनुष्य। मेलरोज़ एबि के भग्नस्तूप अब भी खड़े हैं; 'शेषचारण के गीतों' में, ज्योत्स्ना में इसका' जैसा सुन्दर वर्णन है वही सुन्दर म्लान महिमा अब भी इस भग्नस्तूप की है। किन्तु मायावी माइकेल स्काट को प्राप्त नहीं किया जा सकता। चेवियट हिल्स की नदियां वर्षा में आज भी चेस्टनट रंग के फेन से आकुल हो उठती हैं, किन्तु उसमें किसी जादूगर का मंत्र मिश्रित नहीं है। 'ट्रसाक्स' झील के शान्त सौन्दर्य

के बीच से अचानक क्या आज भी कोई सुन्दरी उठकर आ सकती है। न आ सके—किन्तु इससे स्काट और बर्न्स का देश पहले से कम सुन्दर है ऐसा नहीं प्रतीत हुआ। किन्तु मेरा गन्तव्यस्थल तो इस समय भी समाप्त नहीं हुआ। सभ्यता के बाहर हाईलैण्ड्स के जन-प्राणी रहित पर्वतों से मुझे जाना होगा—यहाँ पर्वतों स घिरी झील की नीरवता को और आकाश निर्निमेष नेत्रों से ताकता है, और अतलान्त महासागर उसे पुकारता रहता है।

मेघैर्मेदुरमम्बरम्। मेरी ट्रेन ग्रामपियन शैलमाला के नीचे से जाती है। पथ में कितने निर्झरों की क्रीड़ा होती रहती है, कितने 'हेदारों' की मृदु अस्पष्ट गन्ध है। और समस्त आकाश को घेरे हुए विख्यात 'कैलेडोनिया' के बादलों की स्निग्ध शोभा है। मरुभूमि में ऊंट को बताना नहीं पड़ता कि वह कहाँ आया है। उसी प्रकार 'हाईलैण्ड्स' में किसी को बताना नहीं पड़ता कि वह कहाँ आया। यह देश मानों समस्त इन्द्रियों से चित्त को छू लेता है, अपने को अभिभूत कर देता है। आकाश में मेघों की सघन नीलिमा, पहाड़ों पर हेदारों की म्लान लालिमा, वन्य हिरणों का स्वेच्छाविहार और उस पर मेघों की गंभीर डमरू-ध्वनि। अपने मन में जागता है कालिदास का—

आषाढ़सिक्तक्षितिबाष्पयोगात्
कादम्बमर्द्धोद्गतकेशरं च
स्निग्धाश्च केकाः शिखिनाम्—

रामायण के मेघ-श्याम विटपी बहुल अरण्यों का स्मरण करते करते सोचा, यह है यूरोप का 'जनस्थान', संध्या के समय 'आखनाशेलाख' नाम के एक अज्ञात स्टेशन पर उतर पड़ा। जान पड़ता है यह नाम यहाँ के भूगोल के पृष्ठों पर

प्राप्त न होगा। इस अभियान का वर्णन देने के लिए किसी संवादपत्र का निज संवाददाता भी वहाँ नहीं था। उसकी आवश्यकता भी नहीं थी। यह बात शीघ्र ही समझ गया था।

वह रास्ता किसी को 'रोम' न ले जायगा। जिस पहाड़ी पर ले जायगा वहाँ है सुप्त नीरवता, हेदार की वर्ण-गरिमा और वर्षासिक्त 'पीट' मिट्टी की एक अवर्णनीय सुगन्ध। यहाँ एक प्राचीन अक्षुण्ण शान्ति का आभास होता है, फिर भी जानता हूँ यहाँ की भीषण रमणीयता के बीच अतीत काल की विभिन्न जातियों के हिंसा और रक्तपात का इतिहास उसी हेदार के रंग में छिपा हुआ है। पहाड़ के कन्धे के ऊपर से घूमता हुआ रास्ता ऊपर उठता है किन्तु उसके बाट पर अचानक किसी अतिथि परायण कुटीर के 'हनिसकल' एवं 'हालीहक' समूह माथा झुकाये क्लान्त पथिक को विश्राम के लिये निमंत्रित नहीं करेंगे। कोई समुद्र-यात्रा-श्रान्त नाविक लोकवार्ता के अनुसार न तो यहाँ किसी गृहस्वामी से प्रश्न ही पूछ सकेगा और न उत्तर प्राप्त करेगा—'हे श्रान्त नाविक, मेरे एक रूपसी कन्या है, यदि तुम भीषण समुद्र यात्रा न करो तो उसे पा जाओगे।' उस पौराणिक गृहस्वामी और उसकी कन्या की अतिथि परायणता तो दूर रही, दोनों पैर जब थकावट से अवसन्न हो जाते हैं तो उस निर्जन और निष्करुण पर्वत पर एक घोड़ा भी नहीं मिलता। मन ही मन सोचता रहा—'हे पाद पद्मयुगल, तुम तो मेरे नहीं, मेरे दोनों बूटों के हो, फिर मुझे क्यों कष्ट देते हो?'

सारे दिन पर्वतारोहण करने के पश्चात् एक 'यूथ होस्टल' में जा पहुंचा। ये होस्टल पन्द्रह बीस मील दूर दूर किसी झरने, नदी अथवा समुद्र के किनारे खुले हुए हैं, किसी पुराने किसान के घर अथवा धान की कोठरी को होस्टल बना दिया

गया है; उसमें दो शयन गृह, एक पुरुषों का, और एक स्त्रियों का, तिनकों का गद्दा धरती पर पड़ा है, और प्रत्येक के लिए तीन तीन कम्बल हैं। शीत के अनुसार शरीर के ऊपर-नीचे कम्बल ओढ़ना होता है। अपने सोने के थैले में शरीर घुसा कर तिनकों के तकिये पर सिर रख सारे दिन के परिश्रम के पश्चात् सोना बड़ा सुखदायक है। एक कॉमन रूम है, वहां ही चूल्हा और ईंधन है, काम पड़ने पर साथ ही साथ रसोई और गप चलती रहती है। स्वयं बर्त्तन माँज कर कम्बल आदि धूप में डाल घर साफ करने के बाद दूसरे दिन प्रातः फिर यात्रा प्रारम्भ करनी होती है। तीन रात्रि से अधिक एक होस्टल में टिकना वर्जित है। खाने की वस्तुएँ वहीं खरीदी जा सकती हैं—आलू, अण्डा, दुग्ध, रोटी, मक्खन और डिब्बे की वस्तुएँ आदि मिल जाती हैं, किन्तु इनको अपनी पीठ के झोले पर ले चलना ही सुविधाजनक है। प्रत्येक होस्टल में रात्रिवास और वस्तुओं के व्यवहार के लिए केवल एक शिलिंग दक्षिणा देनी होती है। इस होस्टल समिति के न होने पर दुर्गम हाई-लैण्ड्स साधारण मनुष्य के लिए अज्ञात एवं वास्तव में अगम्य बने रहते। यहाँ होटल जैसा कुछ नहीं—जो हैं भी, सम्भ्रान्त गाँवों में हैं, वहाँ यूरोप के कीमती और सभ्य होटलों की अपेक्षा अधिक व्यय होता है। कोई किसान रात्रि को अतिथि रखना नहीं चाहता, कारण ज़मींदार की कड़ी चेतावनी है। यहाँ के जमींदारों ने इस स्थान में साधारण जनता को शिकार खेलने से वर्जित कर दिया है। अमेरिका के लक्षपति और भारत के महाराजा लोग इनके अतिथि होकर सोने के मूल्य में इन हिरणों और ग्राउजों का शिकार करते हैं। इसी कारण साधारण लोगों का यहाँ आना अवाञ्छनीय है, इससे शिकार नष्ट हो जाता है और धनिकों की सम्मान हानि होती है।

ये देश को प्यार करते हैं। देश के हर एक अज्ञात प्रदेश का अनुसन्धान कर सुन्दरता पूर्वक सजाकर तथा विदेशी को दिखाकर प्रशंसा प्राप्त करना चाहते है। इस देश की सौन्दर्य चर्चा मनुष्य की अस्थिमज्जागत है अतएव ये किसी सुन्दर वस्तु को नष्ट नहीं होने देना चाहते। यौवन के इस देश में ये लोग केवल मोटर और ट्रेन से यात्रा करने में ही संतुष्ट नहीं हैं, पैदल चलकर तथा छानबीनकर ये देश से परिचित होना चाहते हैं। इसके लिए अनेक जातीय समिति संगठित हुई हैं। और यह आनन्द सबके लिए है, जो दरिद्र हैं—जिनकी छुट्टी साल के जून मास में पन्द्रह दिन की होती है वे भी घूमने जाते हैं। उनके लिए कोई होटल न भी हो तो क्या। यदि वे पेरिस और वियना नहीं जा सकते तो अपने देश के मुक्त प्रान्त, पर्वत और वन उनके लिए हैं। देश की समिति उसका भी दावा नहीं भूलती।

संध्या के समय होस्टल के कॉमन-रूम में आकर बैठे। नानाप्रकार के लोगों के साथ बातें होती हैं। यहाँ जाति नहीं, पाण्डित्य का भय नहीं, अर्थ की आघात प्रवणता भी नहीं। जिसकी जितनी अभिज्ञता है, जिसके जीवन में जितनी मजेदार घटनाएँ घटित हुई हैं उन सबका विनिमय होने लगा। इन्होंने पहले किसी को नहीं देखा, किसी का मत और स्वभाव भी नहीं जानते, किन्तु प्रत्येक अपनी प्रकृति की तीक्ष्णता घिसघिसा कर ऐसी कर लेते हैं कि वह दूसरे के सामने जाते समय विरूप न हो उठे। यहाँ यूरोप की सामाजिक निष्कपट सभ्यता का परिचय होता है। हम लोगों के बीच साधारणतः सत्यनिष्ठ एवं आन्तरिकता के नाम पर जिस समालोचना का प्रचलन है उससे यह अकपट आलाप-परिचय बहुत अधिक श्रेष्ठ प्रमाणित होता है।

यूरोप का जीवन नित्य गतिशील है। कौन किसे पहिचानता है। फिर भी एक दिन के मिलने में कितनी बातें हो गई। शहर की स्वल्पभाषिता और गंभीरता दूर कर सभी संलाप करने लगे। किसी का कोई परिचय हमें ज्ञात नहीं। कारण आनन्द के भागी होने के लिए किसी को बाधा नहीं; विशेष रूप से जब कि पथ भिन्न होते हुए भी सभी का उद्देश्य एक है। कोई किस पथ से किस पहाड़ का अतिक्रमण कर आया, कहाँ कौन दुर्लङ्घ्य स्रोतस्विनी है, इसके वर्णन के बीच एक वृद्ध से परिचय हो गया। ये सपरिवार पैदल आये थे। यौवन में विवाह के पश्चात् मधुमास बिताने युगल होकर हाईलेण्ड्स में पैदल आ चुके थे। तब विक्टोरियन युग के सामाजिक बन्धन के कारण इन ो अनेक निन्दाएँ एवं आलोचनाएँ सहनी पड़ी थीं। इस समय वृद्धावस्था में उस मधुमास की स्मृति म ये पुनः यहाँ आये हैं।

एडिनबरा विश्वविद्यालय के विख्यात गणित के अध्यापक की प्रशंसा करनी ही पड़ेगी। उनकी ही छोटी लड़की 'गोएन' एक स्टूल पर खड़ी होकर बच्चों को सुलाने के लिए मीठी लोरी में गा रही थी; 'होस्टल के बाहर झरने के पास एक परी रहती है'। हम सबने साव्यस्त किया कि वह स्वयं वही परी है। और उसका भाई डेविड—किन्तु आकृति से गालियथ जैसा—अपनी ओर किसी का ध्यान न देख खिन्न मन से पहाड़ पर राज्य करने वाली जाति के इतिहास के विषय में जानने की व्यर्थ चेष्टा करने लगा। कौन जानता था कि हमारे काम सदैव कर देने को प्रस्तुत विनयी बन्धु 'बिल' के रूप में एडिनबरा के एक उदीयमान सालीसिटर हैं? कौन जानता था कि चश्मा धारण किये जो सज्जन स्कॉच कहानियों द्वारा सभी को हँसा रहे है, वे हैं एक बैंकर? इस विचित्र दल में हठात् नृत्यछन्द में डॉंडी शहर की तीन हँसमुख स्त्रियों का

आविर्भाव हुआ, एक श्रीमती दण्डी गीत गाती हुई बोल उठी कि उन्होंने अण्डों का प्रबन्ध कर लिया है। आश्चर्य! 'हममें से कोई कहीं न पा सका, तुम लोगों ने कैसे पा लिया।' कुछ परिहास के पश्चात् स्वीकार किया गया कि कल अण्डे दिये जाने की आशा है, उसी के लिए आज पेशगी रुपया दिया गया है।

इसी बीच अनेक देहाती गीत आरम्भ हो गये। सबने उसमें भाग लिया। तत्पश्चात् एडिनबरा का एक छात्र अपने कालेज का नूतनतम 'craze' गीत गाने लगा। वह बोला 'ओ, मेरे सागर पार के बन्धु, तुम्हें यह गान सुनना चाहिए, कारण निश्चय ही इसमें तुम्हारा हाथ है:'

'My bonnie is over the ocean,
My bonnie is over the sea;
Bring back, oh bring back,
Bring back my bonnie to me.'

आज के इस हाईलैण्ड्स में बहुत परिवर्तन हो गया है। सवेरे के 'ग्राउज' अथवा दोपहर के वन्य हरिण की पुकार के साथ साथ कभी कभी मोटर के 'हार्न' से यहाँ की आदिम निस्तब्धता भंग हो जाती है। यहाँ आज जो 'किल्ट' पहने घूमता है, लोग निस्सन्देह समझ लेते हैं कि यही विदेशी है।

यहाँ के सम्पूर्ण पर्वत और झील के ऊपर मानो किसी एक की सत्ता और प्रभाव का आधिपत्य है। वे हैं 'बॉनी प्रिन्स चार्ली'। पृथ्वी के इस भूखण्ड में जितने वीरत्व के गीत हैं, जितनी चारण गाथाएँ हैं सब इन्हीं को लेकर। इस देश के वीर्यमय एवं अत्याचार के युग के केन्द्रस्थल में चार्ली स्थित हैं। आज भी कोई वृद्ध नाविक आँधी के समय नौका डूबने की आशंका होने पर उन्हीं का गीत गा उठेगा, धीरे धीरे उस गीत की ध्वनि समस्त आकाश में प्रतिध्वनित होकर लौट आयगी

"Will he na come back again ?" और मानस पटल पर पहाड़ की चोटी चोटी पर शिंगाध्वनि और अग्निसंकेत के बीच एक तरुण प्रियदर्शन राजकुमार का पलायमान चित्र अंकित हो उठता है जिसके सिर के लिए पुरस्कार की घोषणा हुई, और जिसकी रक्षा के लिए भीषण रात्रि में वात्याविक्षुब्ध जलराशि से होकर एक वीर बाला ने अकेले ही यात्रा की। जब अन्धकार झील के ऊपर घिरने लगता है, जब पहाड़ के नीचे की छाया दीर्घ से दीर्घतर होकर उससे मिल जाती है, तब ऐसा लगता है, मानो गीत की उस धुन के साथ 'बॉनी प्रिन्स चार्ली' अभी अभी वन में अदृश्य हो गये हैं।

स्कॉटलैण्ड के विभिन्न खण्ड में एक एक विशेष व्यक्ति को केन्द्रित कर एक एक युग की कल्पना और इतिहास का निर्माण हुआ। उनके नाम से ही ये व्यवसाय चलाते हैं, उनके कल्याण के लिए ही इनके दिन बीतते हैं। जब तक स्कॉटलैण्ड स्कॉटलैण्ड रहेगा तब तक स्कॉट की स्मृति एक विराट् सत्ता के रूप में वर्त्तमान रहेगी। एक और चित्र ग्राम के प्राणों के कवि 'बर्न्स' का है। इस देश के प्रेमिक और प्रेमिकाएं 'बर्न्स' की रचना उद्धृत कर पत्र लिखेंगे।

"Oh, luve will venture in
Where it daurna weel be seen"

उपहार भेजेंगे हाईलैण्ड्स के 'क्लैनों' के वस्त्र, 'Tartan' से बँधी स्कॉट और बर्न्स की छोटी छोटी पुस्तकें और प्रिया के मुख की तुलना करेंगे रूपसी रानी मेरी से। देश में जहां भी जाइये किसी न किसी रूप में यहाँ भी राजपुत्र चार्ली की कहानी सुन पड़ेगी अथवा उसके स्मृति चिह्न मिलेंगे। हालीरुड के प्रासाद में गाइड इस प्रकार से 'रिक्कियो' की हत्या की कहानी बतायेगा, मेरी का शयन कक्ष दिखलायेगा, जैसे मानो कि वे कल ही विदा

हुए हैं; 'साल्सबरी क्रेग' के उस ओर मानो पलायमाना रानी के अश्वखुरों की ध्वनि अब भी पूर्णरूप से नहीं खोई है।

— २ —

इसी समय इस जनविरल भूमिखण्ड के श्याम वन एवं अकरुण पर्वतमाला के सामने एक और नवीन मूर्त्ति रूप धारण कर रही है।

'ग्राम ग्राम में वही बात चल पड़ी क्रमानुसार'—

क्रमशः इस भारतीय का विज्ञापन चारों ओर होने लगा। इसके लिए किसी संवाददाता की आवश्यकता नहीं हुई, वायु के आगे आगे ग्राम ग्राम में इस अभावनीय आविर्भाव का संवाद पहुँचने लगा। एक दिन धूप कड़ी हो गई, डिब्बे का खाद्य द्रव्य और पोशाक से भरे थैले के भार से प्रस्तरमय पर्वत पथ पर प्रत्येक पदक्षेप पर यंत्रणा होने लगी, और उस पथ की समाप्ति का कोई लक्षण दिखलाई न पड़ा। उस समय पथश्रम कम करने के लिए तथा श्रोताओं के सनिर्बन्ध अनुरोध से बंगला का प्रयाण-गीत नमूने के रूप में गाया—

'चलरे चल चलरे चल'—इत्यादि

इसकी विदेशी कथा और विचित्र स्वर गायक के आगमन के पूर्व ही मानो बेतार के समान सारे होस्टल में पहुँचने लगे एवं प्रत्येक पथचारी और पर्वतवासी के अधरों पर थोड़ी थोड़ी अर्थपूर्ण दबी हँसी खेल उठी, ऐसा सन्देह करने में भूल न होगी।

फिर एकबार जन्मदिवस के उत्सव मनाने की प्रबल इच्छा मन में जाग उठी। मोटा चावल किसी प्रकार मिल गया, किन्तु दाल के अभाव में टूटे चने की खोज में कुछ कष्ट हुआ। समुद्र के किनारे किनारे बाइस मील पैदल चलने पर अटलान्टिक के जिस बन्दरगाह में सप्ताह में एकबार जहाज खाद्य सामग्री

लेकर आता है, वहाँ की एकमात्र अमूल्य दुकान के सामने उपस्थित होकर देखा कि मैक्री साहब के डाकघर, जूता मरम्मत और पंसारी का काम एक ही दूकान में बड़े समारोह के साथ होता है। वहाँ की वस्तुओं से जो रसोई बनी वह अपूर्व थी। मसाला और तेजपात से रहित खिचड़ी की हल्की जली गन्ध समस्त हाईलैण्ड्स के आकाश और हवा में तैरती हुई बिखर गई। तीन दिन पश्चात् बन्धुहीन 'बेन टेरिडन' की चोटी पर विश्राम करते करते जब अपराह्न-सूर्य के प्रकाश में हेदारों का वर्ण परिवर्तन देखा, रोऊन वृक्षों की शाखा शाखा पर जब फूलों की आग बिखरने लगी और सूर्य की विलीयमान रेखा के इस पार नीचे की झील पर एक सांध्य-तन्द्रा का भाव इसके बीच में उतर आया तब दो किशोरी मुस्कराती हुई प्रकट करती हैं कि अपने देश के इस नूतनतम रोमाञ्चकर संवाद से वे भी परिचित हैं।

और एक दिन समस्त समय पहाड़ की चढ़ाई करने के पश्चात् नीचे उतरने के पथ पर एक झरने के किनारे छाया में बैठा रोटी मक्खन और चीनी के सहयोग से राजकीय 'लंच' मध्याह्न-भोजन की चेष्टा में था कि इसी समय झाड़ी की आड़ से एक दीर्घकाय, बुद्धिदीप्त युवक का मुख दिखलाई पड़ा और उसी पेड़ की आड़ से एक सकौतूहल प्रश्न बाहर हुआ—'ए हो, क्या तुम वही भारतीय हो'—इत्यादि। एक बात बहुत अच्छी लगती है। इनकी दृष्टि में औत्सुक्य है, औद्धत्य नहीं; प्रश्न में सम्भाषण है, सन्देह नहीं। ये तो फिर भी हाईलैण्ड्स हैं जहाँ लोग अंग्रेजी समझते हैं। यूरोप में सर्वत्र इस अतिथि-परायणता का भाव पाया जाता है, विशेषकर स्पेन, जर्मनी और इटली में। विदेशी का मुख जब भाषा के अभाव से मूक हो जाता है, तब उसका मन मानसिक भावों के आवेगवश मुखर

हो उठता है, शब्द जब हार मानकर चुप हो जाते हैं तब नीरवता की भाषा हाथ की गति और दृष्टि भंगी से काम निकाल लेती है।

* * *

हाईलैण्ड्स की एक बालिका ने अकेले धान काटते समय गान गाते हुए जिस द्वीपपुञ्ज की कहानी और उसके साथ अकथित वाणी, अश्रुत गीत, अव्यक्त व्यथा और अननुभवनीय रिक्तता की कथा वर्ड्सवर्थ के मन में भर दी थी उसी द्वीप-पुञ्ज ने इस विदेशी यात्री का आह्वान किया। अतलान्त महासागर की कल्लोल को आच्छादित करते हुए उसी अश्रुत गान का आह्वान मेरे कानों तक आ पहुँचा, यह 'स्काई' (Skye) द्वीप कितना अद्भुत है। मेघ और कुहासे के भीतर से पथ पारकर यहाँ पहुंचने पर ऐसा लगा जैसे अरब के उपन्यास की एक जादूगरनी एक सुन्दर निर्जन बाग तैयार कर और विदेशी को वंशी के आह्वान से खींच लाकर, यहां के सब अधिवासियों को लेकर अन्तर्ध्यान हो गई हो। सहस्र रजनी की कोई एक रजनी मानो मुझे कुहासे के एक अन्धकार से ढककर उदित हुई हो।

पैरों के नीचे एक पहाड़ी चढ़ाई है, ऊपर मेघ का चँदोवा है, सामने अदृश्य पर्वत के भीतर सत्रह मील अज्ञात पथ पर दो जातियों में एक विश्वासघातकतामय भीषण युद्ध हुआ था—जिसके फल स्वरूप एक जाति के वंश में दिया (दीप) जलाने वाला भी न बचा। यहाँ से तृषित नयनों से एक बार हाई-लैण्ड्स की ओर घूमकर देखा। इस कुहेलिका के आवरण की दूसरी ओर एक श्यामल सरस देश है इसकी कल्पना भी न कर सका। इस ओर मेघ और धूप का खेल, वारिधारा की सिक्तता एवं 'क्यूलीन' पर्वत की नग्न निष्ठुर ऊसरता उस

पार के लिए अज्ञात रह गई। उसपर ग्रेट ब्रिटेन के सर्व्वोच्च पर्वत 'बेन नेविस' के बीच नदी की कलध्वनि से युक्त हरे भरे पथ पर चलते समय किसी के मन में यह कल्पना न होगी कि, इस पार ऐसे एक विचित्र देश में निर्मम प्रकृति भी क्रीड़ा करती है।

बीच बीच में विख्यात बंगीय नाट्यकार स्वर्गीय डी० एल० राय का नन्दलाल याद आ जाता है। देश के लिए उसे अपने जीवन को सुरक्षित रखने की आवश्यकता हुई थी; अत-एव वह किसी कष्टसाध्य काम में हाथ नहीं देता था। जीवन यदि देता हूँ, अथवा दे दिया, 'किन्तु, अभागे देश का क्या होगा?' तेल-जल सेवी निरीह भारतीय हिन्दु की सन्तान नन्दलाल क्यों क्यूलीन पर्वत पर जीवन संकट में डालने जायगा? किन्तु प्रतीत होता है यूरोप की हवा हमारे सनातन नन्दलाल को निरुद्देश-आह्वान का उत्तर देने के लिए गरदन पकड़कर पथ पर खींच लायगी। यदि ऐसा कर सकें तभी यूरोप की शिक्षा का फल हम पर फलीभूत होगा। युगधर्म के साथ ताल-ताल पर पैर रखते हुए हम आगे बढ़ सकेंगे। विदेश आकर हम केवल अनन्य मन से परीक्षा पास कर सीमाबद्ध कूप-मण्डूक के समान वापिस चले जायँगे। यह बात मुझे बिल्कुल शान्ति नहीं दे रही थी कि वे आहार-अन्वेषी पक्षी के समान आकाश में उड़कर केवल घास तिनके संग्रह कर लौट जायँगे—इस असीम प्रसार और मोहक नीलिमा का थोड़ा भी आस्वाद ग्रहण नहीं करेंगे। सामने का क्यूलीन पर्वत निष्ठुर, भयावह और विप-ज्जनक हो सकता है, किन्तु फिर भी तो प्राण हथेली पर ले, पैर और कमर रस्सी से बाँध लोग उसके ऊपर चढ़ते हैं। वह दृश्य देख पराजय की लज्जा और व्यर्थता की ग्लानि बाईस वर्ष पीछे रह जायगी, यह सब क्या सहा जा सकता है?

हाईलैण्ड्स की उत्तर-पश्चिमी सीमा पर 'लख्मारी' झील के बीच एक 'अप्सरा द्वीप' है। वहाँ से लौटते समय हठात् कालवैसाखी के समान उन्मत्त आँधी में जब नौका डूबने की सम्भावना हुई थी, उस समय हम उत्ताल तरंगों में शिशुओं की तरह तैरने के लिए प्रस्तुत नहीं हुए, और न क्षीण कंठ से दीन-भाषा में भगवान् का नाम पुकारने के लिए व्याकुल ही हुए। उस दिन हम कवि कैम्बेल की 'लार्ड एलिन की कन्या' कविता की आवृत्ति कर उत्साह सञ्चार कर रहे थे; उसके पश्चात् निश्चय किया: आइये, सब मिलकर गायें। उस समय समझ सका कि जड़वाद, वस्तुवाद आदि में डूबा हुआ यूरोप किस प्रकार निर्विवाद रूप से जरा को जीत एवं मृत्यु की उपेक्षा कर जीवित है। इनके पास हमारे समान आध्यात्मिक सम्पत्ति नहीं, तथापि ये हमसे कितना अधिक आनन्द प्राप्त कर जाते हैं। सबके जीवन की शेष परिणति मृत्यु में है, कितने दिन जीवित रहना है, फिर प्राण-प्राचुर्य क्यों न रहे? जिसने कभी भोग ही नहीं किया उसे त्याग के महान् दुख लाभ करने का सौभाग्य कहाँ? मलिन पुष्करिणी के शैवालदल को हटाकर केवल नीचे के जल बिन्दु ग्रहण करने की चेष्टा के अनुसार जिसने संसार को असम्पूर्ण भाव से ग्रहण किया उस संसारी के संन्यास में महिमा कहाँ? जिन आत्मनिर्भरता, साहस और त्याग में हम दुख विपद् को तुच्छ समझ पाते वे हमारे हैं ही नहीं। है केवल दुर्बल रुदन। इसीलिए हम जीवन को असहाय दृष्टि से देखते हैं।

इसी प्रकार यूरोप में मनुष्य की प्रकृति अकारण सुदूर अनिर्दिष्ट के लिए चञ्चल हो उठती है; उसपर बहिःप्रकृति जब अन्तःप्रकृति का आह्वान करती है उस समय मन में जिस विचित्र लीला का आभास पाता हूँ उसका परिचय किस प्रकार

दिया जा सकता है? सारे दिन 'क्यूलीन' पर्वत से युद्ध कर जब नीचे उतरता हूँ, शान्ति के बीच ही कुछ विजय का आनन्द फूट उठता है, और बहुत दूर जहाँ रात्रि का आश्रय मिलेगा उस होस्टल के अनाडम्बर आराम और बाहुल्यहीन विलास की कथा भी जब मन में जागती है, उस समय नीचे के झरने के पास दो बालिकाएँ दिखाई देती हैं। उन स्वर्णकेशिनी बालिकाओं के केशों पर मेघमुक्त सूर्यकिरणें पड़ रही थीं ; उनकी नीली सरल आंखों में मानो उनके देश के मेघान्तराल के नील नभ-स्थल की आभा पड़ रही थी ; और ऐसा लगा मानो समस्त 'हेब्रिडिस' द्वीपपुञ्ज की आत्मा की प्रतीक होकर वे बैठी हुई हैं। एक बात मन में आई—'विदेशिनी'।

इसी विदेशिनी को लेकर कितनी कल्पनाएँ, कितनी काव्य-रचनाएँ, कितने हृदयोच्छ्वास। जिसकी खोज मे कहानी के राजकुमार पक्षीराज घोड़े पर चढ़ सात समुद्र की यात्रा कर घूमते फिरते हैं, यह वही विदेशिनी है। वृक्षलता की अनन्त आनन्द-मुखी मर्मर में, शुभ्र अभ्रदल की लीला कला में, सघन वन शयन की श्यामलता में जिसका आभास पाता हूँ वही विदेशिनी! किन्तु वह चिरकाल तक सबके सन्धान की समाप्ति एवं प्राप्ति का अतीत होकर ही रही—वह आनन्द की केवल एक कणिका है, जिसका अनुमान किया जा सकता है, स्पर्श नहीं किया जा सकता, देखा नहीं जा सकता। गोपन होने के कारण ही वह मधुर है, नीरव होने के कारण ही उसके लिए कवि की वाणी चिरमुखर है, अप्रकाशित होने के कारण ही उसे प्रकाशित होने के लिए ही संसार के इतने आयोजन हैं। किन्तु वह तो मानव देश की नहीं, वह विदेशिनी जो है।

३

एक उज्ज्वल उत्तप्त दिन। लेक डिस्ट्रिक्ट में—डारवेन्ट

वाटर झील के पास निश्चिन्तता से घूम रहा हूँ। स्काई द्वीप के वे पागलपन से भरे दिन बहुत पीछे रह गये हैं। 'ग्लेन विट्ल' नामक स्थान पर जहाँ अतलान्त महासागर और नदी एक होकर वृक्षों की ओट में हो गये हैं उसमें किनारे किनारे सारे दिन कण्टकाकीर्ण जंगल में 'वाइकिंग' की 'कब्र' ढूंढते घूमने की उद्दामता अपने को ही अनुमोदित नहीं होती। वहाँ लोगों का विश्वास था कि, प्रत्येक झील, पर्वत और गिरिगुहा में कोई न कोई, प्रेतात्मा अथवा इसी प्रकार का और कुछ न कुछ है, प्रत्येक स्थान के साथ उपदेवता के आविर्भाव के सम्बन्ध में कहानी जुड़ी हुई है। और प्रत्येक मनुष्य की अपने सर्व-स्वत्व-संरक्षित भूत की कहानी भी प्राप्त होती है। वर्ड्सवर्थ के क्षेत्र में रात्रि का समय काटने के लिए रोमाञ्चकर उपाय नहीं मिलेगा। यह केवल एक मधुर प्रकृति बालिका की आत्मा है—कवि की मानस सृष्टि में 'लूसी ग्रे'। लूसी को पृथ्वी पर बहुत कम लोगों ने देखा है, किन्तु कवि ने उसे जिस रूप में देखा वह हमारे लिए अमर हो गया है। ग्राम की कोई भी वृद्धा शपथ पूर्वक अब भी बता सकती है कि 'लूसी' हम लोगों को दिखलाई न देकर (हमारी दृष्टि के अन्तराल में) पहाड़ी आँधी की रात्रि में सीटी बजाती, नाचती, घूमती रहती है।

हाईलैण्ड्स के साथ लेक डिस्ट्रिक्ट का अन्तर केवल यहाँ ही नहीं है, फिर भी यहाँ से ही प्रभेद का मूल सुर समझा जा सकता है। उत्तराञ्चल में प्रकृति के बीच पाता हूँ भीषण रमणीयता और यहाँ स्निग्ध कमनीयता, वहाँ पाता हूँ आदिम जीवन का उल्लास, यहाँ मार्जित रुचि का विकास, वहाँ आनन्द और यहाँ परितृप्ति।

इन दो अञ्चलों की विशेषता यूथ होस्टल के पास के प्रान्तरों को देखने से ही समझ में आ सकती है। 'केजिक'

मे कवि ने जिस प्रकृति में शान्त और स्निग्ध आनन्द प्राप्त किया, मनुष्य उसे अस्वाभाविक चेष्टाओं द्वारा सुन्दरतर करने में लगे हैं। उत्तराञ्चल में मनुष्य प्राणों की चञ्चलता से वशीभूत होकर जाता है, उसके पदचिह्न प्रकृति अपने हाथ से मिटाकर अपनी गंभीरता मे विलीन रहती है।

इन झीलों के आस पास घूमने वालों में अनेक धनी मानी भी हैं। किन्तु हम पथचारियों के दल में उन्हें गिनते ही नहीं। वे शान्ति भंग करने वाले हैं, वे निर्जनता की पवित्रता नष्ट करते हैं। उनकी मोटरगाड़ी की आकृति और होस्टल के चव्य-चोष्य की तालिका निश्चय ही वर्ड्सवर्थ की आत्मा की अवमानना करती है एवं ग्रासमेयर झील के राजहंस की जलकेलि के साथ भी सामञ्जस्य नहीं रख पाती; इस विचार से सान्त्वना लाभ कर झील में नौका लेकर उतर पड़ता हूं। वे खड़े खड़े देखते रहेंगे अथवा मोटर में बैठे घूमते रहेंगे। 'विनेण्डर' झील के तीरवर्त्ती बालक, पेचकध्वनि के अनुकरण के पश्चात् गंभीर नीरवता एवं सहसा जलोच्छ्वास के बीच प्रकृति के विराट् आह्वान में हृदय के द्वार उन्मुक्त देख पाते हैं, उनके समान यह सौभाग्य एक न एक दिन सम्भव है पा सकूंगा, और इन मोटर विहारियों के समान कवि के घर की दूकान से कविता सञ्चयन की पुस्तक खरीदकर ही वापस न चला आऊँगा। जीवन में परमक्षण अत्यन्त दुर्लभ हैं, ये बड़े अप्रत्याशित भाव से आते हैं। उसके लिए अपने को सदैव तैयार रखूंगा।

ग्रासमेयर के होस्टल में उस दिन महा आनन्द था। जर्मन नर-नारी पथिकों का एक दल आया हुआ था, वे नाना कलाविद् थे। इंगलैण्ड सरीखे देश में भी अपने आत्मविश्वास की गम्भीरता, उत्साह की प्रचुरता एवं नियमानुवर्त्तिता से इन्होंने सभी को चकित कर दिया। रात्रि को इन्होंने कितने ही विभिन्न रसों और भावों

के अनेक गीत अनेक भाषाओं में गाये। देखने से ऐसा लगता मानो ये अपने देश के प्रतिनिधि होकर विदेश आये हैं। जहाँ गये सौजन्य और चरित्र की विशेषता से प्रशंसा अर्जन करते गये। इसी बीच रात्रि में एक और गम्भीर घटना घटी। अँधेरी सीढ़ियों के एक कोने से धीरे धीरे एक स्पेनिश गीतार की ध्वनि उठी, धीरे धीरे वह ध्वनि उच्चतर हुई और उसके साथ यूरोपीय 'टेनर' कण्ठ में एक इटालियन गीत प्रारम्भ हुआ--'सोलो पारा ते लूसिया।' लूसिया, केवल तुम्हारे लिए ही। इस विख्यात गान को इटली के वर्तमान श्रेष्ठ गायक जिली (Gigli) ने स्वयं रेकार्ड पर गाया है ; उस गान ने मानो सारे होस्टल को मंत्रमुग्ध कर दिया। नियम के अनुसार रात्रि के ११ बजे के बाद कोई बाहर नहीं आ सकता, किन्तु हम सभी ने नियम भंग किया। अंधेरे में निःशब्द पैर रखते हुए एक एक मूर्त्ति इकट्ठी होने लगी। विराट्काय अनुभव की चिह्नमात्र हीन मूर्त्ति वार्डन स्वयँ वहाँ आया, उसके मुख पर नियम भंग करने के लिए विरक्ति अथवा भर्त्सना का चिह्न तक न था, उसके मुख पर आनन्द की एक उत्तेजना थी, तृप्ति का एक आभास था। इस इटली के गान ने मानो नीरव रजनी के अन्तर स्वर का मेरे सामने उद्घाटन कर दिया।

उसके दूसरे दिन यहाँ के सर्वोच्च पर्वत 'हेलवेलिन' पर अत्यन्त समारोह के साथ आरोहण किया। किन्तु उसकी चोटी से 'वर्ड्सवर्थ' का देश देखते देखते थकावट की याद भी न आयी। जैसे किसी के स्निग्ध करों का स्पर्श सारी थकावट और ग्लानि को दूर कर गया हो। रात्रि के गीत की झंकार को बार बार याद करने लगा ; अच्छा लगता है, अच्छा लगता है, यूरोप का यह आनन्दमय उल्लास-युक्त, मुक्त जीवन, जो पैदल चलकर और दुखों को दूर रख मृत्यु की उपेक्षा करता है--वह जीवन मुझे अच्छा लगता है। 'सोलो पारा ते', हा यूरोपा !

नगर और नागरिक

सभ्यता के बीच वापस आ गया। किन्तु यह कौन लन्दन है? जिस पत्र-पुष्प-विभूषित उत्सवमय नगरी को पीछे छोड़ गया था वह तो दिखाई नहीं पड़ती। बहुत दिनों से प्रेषितभर्तृका की तरह इसका रूप है; उसे पहिचान कर आज मन में व्यथा होती है। जिस परिपूर्ण यौवन में इसे देख गया था वह शोभा अब नहीं; उत्सव की समाप्ति की दीपमाला के सदृश उसकी वसन्त-सज्जा एक-एक कर खिसकती जा रही है।

जिस प्रकार भारत और यूरोप के ऋतु-विभाग एक प्रकार के नहीं उसी प्रकार अपने यहाँ की शरद् और यूरोप का 'आटम्' बिल्कुल एक-सा नहीं है। वरन् 'आटम्' में हेमन्त का आभास पाता हूँ। हमारे शरद् में जितने कुछ भी मेघ आकाश में रहते हैं उनका प्रकाश क्षीण से क्षीणतर रहता है और उनके हलके श्वेत रंग के भीतर से अम्लान मोहक नीलिमा फूट पड़ती है। इनके शरद् में आकाश तक छोटा दिखलाई पड़ता है, दिन का प्रकाश क्षीण और स्वल्पस्थायी होता है। फिर भी इनका हेमन्तकाल कम प्राणमय नहीं। इसमें प्रथम वसन्त का माधुर्य और परिणत ग्रीष्म की उज्ज्वलता नहीं होती। कभी वृष्टि, कभी मेघ, और कभी कुहासा आता है, फिर भी वातास में मृदुता पाता हूँ। यहाँ सूर्य आंखों को ठण्डक पहुँचाने वाला

प्रकाश देता है, हरिद्राभ पत्रदल को कोमलता के साथ स्पर्श करता है, नहीं तो रूढ़स्पर्श होने से पत्रदल एक दिन पहले ही गिर पड़ें। अभिशप्ता पाषाणीभूता अहिल्या का स्वप्न देखने का समय अभी भी नहीं आया। पर यहाँ पर—

"हँसता परिचित हँसी निखिल संसार।"

किन्तु मैं यह कौन लन्दन में वापस आ गया हूँ। अपने अनजान में सारे मन को परिचालित करते हुए कहाँ आकर खड़ा हो गया हूँ, यह नहीं बता सकता। प्रसन्न आकाश की उदार निर्निमेष दृष्टि से सब कुछ देखना चाहता हूँ, सब इन्द्रियाँ सजग होकर यूरोप को परिपूर्ण भाव से अनुभव करना चाहती हैं; पुरातन को विस्मरण के बीच छोड़ आना चाहता हूँ, और फिर पुरातन की माया में नूतन की छाया की भी उपेक्षा नहीं करना चाहता हूँ। मेरा मन मानो सोती हुई राजकन्या के सन्धान में पक्षीराज घोड़े पर चढ़कर निरुद्देश यात्रा में इतनी दूर चला आया है कि पीछे देखने से कुछ भी दृष्टिगोचर होना सम्भव नहीं।

अब भी मेरी छुट्टी समाप्त नहीं हुई है, किन्तु साल में जो पन्द्रह दिन की छुट्टी पाते हैं वे सब अपने काम में लग गये हैं। क्या उनकी ओर मैं दयापूर्ण दृष्टि से देखूँगा। जिन दो आंखों से पहले ही विराट् विस्मय एवं सहानुभूति से समस्त संसार का पर्य्यवेक्षण करना आरम्भ किया था, उनमें इस समय भी थोड़ी भी क्लान्ति नहीं हुई। विदेश को मानो किसी रहस्यभरे जादूगर ने अपनी जादूभरी लकड़ी के स्पर्श द्वारा माधुर्य से भर दिया है इसीलिए बार बार देखने पर भी उसमें पुरातनता नहीं आती।

अत्यन्त तड़के, सवेरे, नौकरानियों की व्यस्तता, दूधवाले का द्वार द्वार दूध रख जाना, कुली-मजदूरों का 'बस' अथवा 'अण्डरग्राउण्ड' पथ पर दौड़ने आदि के बीच लन्दन में जागरण के चिह्न पाता हूँ। तत्पश्चात् झुण्ड के झुण्ड मनुष्य अपने अपने काम पर जायंगे, पुरुष

और स्त्री, बालक और युवा, कितनी विभिन्न सज्जा एवं भंगिमा के साथ चलेंगे; कितने दीर्घ बली वीर के समान सुगठित शरीर, चंचल लीलायित फूल के समान मुखों की शोभायात्रा चलेगी। उन्हीं के बीच में या तो कोई युवक पथ में किसी युवती के साथ चलेगा, अथवा दो मित्र या एक ही आफिस के लोग साथ साथ चलेंगे। पथ पर चलते चलते नेत्रों के हास, बातचीत एवं क्षणिक साहचर्य में जो कुछ भी सुख है उसे कर्म के आनन्द तीर्थ के ये यात्री अवहेलित नहीं करना चाहते। जीवन में सम्भव है इनमें से अनेक के अदृष्ट में विवाह नहीं, अन्ततः प्रथम जीवन में, किन्तु फिर भी कर्मस्रोत में ये नर-नारी पास पास रह बहते चले जाते हैं। पुरुष नारी को 'नरकस्य द्वारं' कहकर अवहेलना नहीं करता, नारी पुरुष को भय की सामग्री समझकर पीछे नहीं हटती, और समाज इनके बीच केवल आग और घी के सम्बन्ध का निर्देश नहीं करता। स्त्री-पुरुष के सान्निध्य के परिणाम स्वरूप रूप, स्वास्थ्य और सामाजिक गुणों की चर्चा इनमें मन के अगोचर रूप में बढ़ जाती है। इसके फल-स्वरूप नारी की दृष्टि में जनता के बीच मनुष्य बनने के लिए पुरुष की निशिदिन साधना रहती है, नारी की भी वही साधना है। इसीलिए पश्चिम में मनुष्य जाति की सर्वविधि उन्नति हुई है। हम लोगों के समान क्षीणजीवी एवं असुन्दर होने की लज्जा यूरोप में दिखलायी नहीं पड़ती।

कहानी है, मिश्र की रानी क्लियोपेट्रा का रूप आयु से कम नहीं होता तथा परिचय की ग्लानि से उसका बहुमुखी आकर्षण नष्ट नहीं होता, किन्तु यदि उसे भी सब शहर की गृहस्वामिनी के छोटे-मोटे काम करने पड़ते तो दो ही वर्षों में उसका रूप और आकर्षण समाप्त हो जाते। चार सौ पांच सौ पौण्ड वार्षिक कमाने वाले पुरुषों की गृहश्रम से क्लान्त स्त्रियों की बात सोचकर सब को ही दुख होता है। किन्तु मुझे तो उनके दुख का कारण समझ में नहीं

आता। जितने दिन उनके पास यौवन है—और इस देश में यौवन दीर्घ से दीर्घतर होता है—उतने दिन वह एक घर अथवा 'फ्लैट' लेकर झंझट से रहित होकर खूब स्वाधीनतापूर्वक रह सकती है, किन्तु उसके लिए स्थायी कुछ भी नहीं। किन्तु उसके स्वामी देवता का ही भाग्य खराब होगा। वह जो आफिस के काम में ही सर्वदा जुटा रहता है उसका फल प्रत्यक्षरूप से तो वह कुछ दिखा नहीं सकता; किन्तु गृहस्थी एक घर दिखा सकती है, जो उसके स्वयं हाथों से निर्मित है, उसके सुरुचि सम्पन्न सौष्ठव में उसकी परिकल्पना की छाप है। इलैक्ट्रिक और गैस ने उसके परिश्रम को लघु कर भद्र कर दिया है फिर उसे दुख किसका? वास्तविकता तो यह है कि यह युग सबको बहिर्जगत् की ओर खींच रहा है, घरोन्मुख कोई नहीं। इनके पैरों में रथचक्र बँधा है और मुंह में ये शब्द हैं—

'नहीं जाऊँगा, नहीं जाऊँगा, नहीं जाऊँगा, घर,
बाहर मुझको किये दे रहा है पागल।'

पैदल बाहर निकल आया। ऐसा न होने पर मेरा आज का मानस-भ्रमण व्यर्थ हो जायगा। चलने के प्रेम म मतवाला होकर जनस्रोत में बहते बहते भी अपने उद्देश्य घाट पर तो जाकर ही भिड़ूंगा, ऐसा न होने पर आंखों की प्यास नहीं बुझती, मन का अभियान पूर्ण नहीं होता। भारतीय इंगलैण्ड आकर लन्दन नहीं देखता, वह देखता है, पेरिस, बर्लिन और वियना। उसका कारण है, 'पास की गंगा और घाट का पानी।' काशी के कितने निवासी गंगा नहाने जाते हैं।

कहीं पढ़ा था, पहिले लन्दन का नाम था 'कैथिड्रल का शहर,' यह बात आज कोई मानना नहीं चाहेगा। रोम, सेविल और कोलोन घूमकर आये हुए व्यक्ति ही इस बात को अस्वीकार करते हों, ऐसा नहीं, वरन् लन्दन में आज कहीं कैथिड्रल की छाप न मिलेगी। 'सेन्ट मार्टिन्स', इतना ही क्यों 'सेन्ट पाल्स' पर ही किसकी नजर पड़ेगी?

लन्दन की बस्ती के प्रसिद्ध छोटे छोटे बाग तक आजकल उत्सव का रूप खो चुके हैं। 'ब्लूम्सबरी' के बागों को तो यूनिवर्सिटी ही ग्रास कर गयी है। कार्य और सौंदर्य के अधिकारों में संघर्ष उपस्थित हो गया है। उसपर लन्दन जिस प्रकार व्यवसाय के दस्यु के हाथ में पड़कर बदलता जा रहा है उससे इसकी स्वार्थवृद्धि अवश्य होती है, किन्तु सौंदर्य-नाश भी होता है। जगत् से सम्बन्धित व्यवसाय के कल्याण में लन्दन 'कास्मोपोलिटन' हो गया है, किन्तु उसकी कमनीयता कम हो गयी है। यह निर्माण-कौशल का दृष्टान्त है, किन्तु स्थपति की स्वप्नसृष्टि नहीं। उसकी विलासलीला का केन्द्र 'पिकेडली' का सर्वांग बिजली की लाल-नीली सजावट में बँधा पड़ा है, वे सुष्ठु हैं, किन्तु उनमें सुरुचि का चिह्न नहीं। पथिक की प्रशंसमान दृष्टि विज्ञापन के प्रकाश की बहार देखते देखते 'Eros' की मूर्त्ति से भी दूर हट जाती है। लन्दन महा शहर है किन्तु महा नगरी नहीं, उसकी 'टेम्स' 'सीन' अथवा 'दनियुब' नहीं। 'फ्लीट स्ट्रीट' से 'सेन्ट पाल्स' दोनों ओर के प्रकाण्ड आफिस की छाया में छिप जाने क कारण दिखलाई नहीं पड़ता। नदी के पथ से न आकर 'विक्टोरिया' से आकर देखने से 'वेस्टमिन्सटर एबी' और 'पार्लमेन्ट' की भी यही दशा होती है। पृथ्वीमय वाणिज्य एवं साम्राज्य के विस्तार से इसका ऐतिहासिक गौरव विलुप्त हो रहा है। तिसपर भी जो लोग इस प्रकार डाका डाल रहे हैं उनकी शिक्षा की कमी नहीं, और वे जो कुछ बताते हैं उसे ज्यादा से ज्यादा 'वल्गर' कहा जा सकता है—किन्तु ऐसा बुरा नहीं जिसे नष्ट किया जाना चाहिए। 'सेन्ट पाल्स' के पास जो सांवादिक-गृह बना है उसे सौध नहीं कहूँगा, क्योंकि न तो उसमें सुधा का सौंदर्य है और न ईंट पत्थर का सहयोग, विराट् सरल रेखामय तथा कांचमय एक आकर्षक दानव माथा उठाये खड़ा है। ब्राइटन के एक नये घर की बात ले लो,—पहले के टयूडर-गृहों का अन्ध अनुकरण अब रुक गया है, उसके स्थान पर

कोई जटिल कारुकार्य नहीं अपितु रेखा का सरल सौंदर्य आया है। यह है 'फ्यूचरिस्ट आर्ट' का मूलमंत्र, दीवाल से लेकर दीवाल तक काँच की खिड़की चली जाती हैं, भीतर से मानो आकाश और सागर का एक बहुत बड़ा अंश नेत्रों को बुला रहा है। बाहर से ये खिड़कियाँ प्रत्येक तल्ले में एक के ऊपर एक मेहराब के समान चली गयी हैं। रात्रि को समानान्तर रूप में प्रकाश की पंक्ति दिखलाई पड़ेगी। किन्तु उसे दीपमाला नहीं कहूँगा। ये खिड़कियाँ केवल खिड़कियाँ हैं, वातायन नहीं, काँच केवल काँच हैं, स्फटिक नहीं। इस शिल्प में सारल्य है, शालीनता नहीं; कौशल है, कल्पना नहीं; आवश्यकता है, आभिजात्य नहीं।

इंगलैण्ड में एक श्रेष्ठ स्थपति के भविष्य के ग्रामों की निष्ठुर कल्पना हो रही है—ग्राम के चर्च के ऊपर तल्ले-तल्ले में प्रकाण्ड फ्लैटों की श्रेणी, उनके बीच ग्रामीण और उनके बेतार, टेलीफोन और डाकघर रहेंगे। बिल्डिंग सोसाइटियों के कल्याण में देश के एक सिरे से दूसरे सिरे तक मोटर गाड़ी का अहरह आक्रमण होने से ग्राम इंगलैण्ड का रूप बदलने को बाध्य हैं। फिर भी अब भी लन्दन छोड़ दूर जाने पर ग्राम न सही किन्तु ग्राम की अखण्ड श्यामलता एवं अक्षुण्ण शान्ति पायी जाती है। इतना ही क्यों, किसी किसी ग्राम में 'जिप्सी' का डेरा भी मिल जाता है। ये 'रोमानी' वंश ग्राम्य इंगलैण्ड में बिल्कुल अशोभन नहीं लगते? पुराने समय के लोक-नृत्य (Folk dance) के उदाहरण अब भी कहीं-कहीं पाये जाते हैं। ग्राम और शहर के लोग मिलकर पुराने साधारण लोगों की आनन्द की वस्तुओं को पुनर्जीवित करते हैं। भविष्य के ग्रामों में भी इन पुरानी वस्तुओं के जीवित रखने का प्रयास चलेगा किन्तु उनमें न तो सम्भवतः प्राण रहेंगे और न प्राचीन 'आइवी' से ढँके हुए गृह के अन्दर लम्बी से लम्बी होती अपराह्न की छाया में वंशी के सुर की ताल-ताल पर अपने को भुला देने वाला नृत्य

होगा। तब ग्राम 'गोल्डर्स ग्रीन' के ग्राम संस्करण होंगे। उनके बीच हरे उदार प्रांतर नहीं होंगे और न होंगे इधर-उधर बिखरे कुटीर, गिरजे और 'इऊ' 'विलो' 'पाल्लर' में छायाछन्न आँगन ही। उसके स्थान पर किसी-किसी चुने हुए स्थान पर राष्ट्र अथवा सरकार की ओर से यत्नरक्षित क्षणिक 'ब्यूटी स्पाट' (सौंदर्य-स्थल) होगा, जो रविवार को मोटर तथा साइकिल सवारों से भर जायेंगे। और उस स्थान पर 'स्लाट' मशीनें में चाकलेट से लेकर जूता ब्रुश आदि के सरंजाम तक सब कुछ प्राप्य होंगे। सान्त्वना की बात यही है कि जिस रूप में इंगलैण्ड में मनुष्यों की संख्या कम हो रही है उसी हिसाब से अब गाँवों में गगनचुम्बी अट्टालिकाओं या फ्लैटों की आवश्यकता नहीं होगी। इतना बड़ा शहर भी विश्राम की बात नहीं भूलता। इसी-लिए मुहल्ले मुहल्ले में मैदान, बाग और फूलों के मेले होते हैं। ये सब लोगों के लिए होते हैं, इसलिए इनमें जो सार्थकता है वह पूर्व के इतिहास प्रसिद्ध उद्यानों में नहीं थी। इनमें असाधारणता बिलकुल नहीं। मुगल-उद्यान देखने में अभ्यस्त नेत्रों को इनसे तृप्ति नहीं मिलेगी, किन्तु वे सब असामान्य हैं, साधारण लोगों के समान भाव से उपयोग करने के लिए तो उनका निर्माण हुआ नहीं। 'हाइड पार्क' में जहां राजा स्वयं घोड़े पर चढ़े घूमते हैं उनके पास ही *'सर्पेन्टाइन' में एक शिलिंग के खरीदार नौका चालन करते हैं।* उसके किनारे पुरुष-स्त्रियों के कितने खेल, भीड़ में वक्तृता देनेवालों के मेले और तरुणों की लीलाएँ होती हैं। पानी में हंसों का झुण्ड तैरता दिखायी देता है, जिसको खिलाते समय एक लड़की अपना रूमाल खो बैठी, इसी समय एक पुलिस के व्यक्ति ने आकर उसकी सम्पत्ति का पुनरुद्धार कर दिया। इससे उस समय किसी के हृदय की धड़कन तेज नहीं हुई और पैर भागने के लिए चंचल नहीं हुए। पुलिस इंगलैण्ड की एक प्रधान दर्शनीय वस्तु है, सघन शाल की तरह पथ पर सभी को आश्रय देने के लिए सदा प्रस्तुत और सब ही

उसकी सहायता करने के लिए सदैव आश्वासन देते रहते हैं, इतना ही नहीं पथ की भीड़ भी ऐसा करती है, यह भी इस देश का प्रधान गुण है। शाम को पांच या छह बजते-बजते लोग अपने-अपने घरों को लौट जायेंगे; फिर सम्भवतः किसी किसी से रात्रि के समय पुनः दर्शन हो जायगा, नाच और थियेटर-शालाओं का या कम से कम छोटे-मोटे क्लबों का आकर्षण यहाँ जनता को बाहर खींच लाता है। उस विराट् जनता में गति प्राचुर्य है, प्राबल्य नहीं, सबको शीघ्रता है किन्तु हुड़दंग कोई नहीं करता, सब श्रृंखला मानकर चलते हैं, कारण श्रृंखला उनके पथ की सहचरी है, पैरों की श्रृंखला नहीं, गति का बन्धन नहीं।

(२)

लन्दन के लोग इस युग में कविता नहीं पढ़ते; जीवन में कुछ रोमान्स है, किन्तु वह कविता की परवाह नहीं करते। गत युद्ध का प्रभाव अब और दिखलाई नहीं पड़ता, किन्तु उसकी शिक्षा ये नहीं भूले हैं। घोर आशानाश एवं स्वप्नभंग के भीतर से इनका जीवन अब भी बीत रहा है। जो प्रौढ़ हैं, उन्होंने युद्ध देखा है, जो युवक हैं वे पिता अथवा भाई की मृत्यु का समाचार पा चुके हैं, चारों ओर त्रास का आभास पाकर शिशुओं के मुख कितनी बार सूख चुके हैं, बार बार सिर पर मृत्यु के रथचक्र का निर्घोष सुनायी पड़ चुका है, और इंगलैण्ड के परिवार भंग की क्रमान्वय परिणति देखी है। लन्दन में 'फैमिली' बहुत कम हैं, 'होम' उससे भी कम हैं। सामाजिक रीति नीति के सब बन्धन मानो आधुनिकता के वन्यास्रोत में एक-एक कर बहे जा रहे हैं। उसके फलस्वरूप पुरुष घर छोड़ बाहर घूम रहा है, नीड़ से नारी एकाकिनी बाहर आ गयी है। पुरुष के हृदय का विचरण क्षेत्र बहुत बढ़ गया है और नारी साहसिनी हो गयी है। अब वह पुरुष के सामने अर्धसृष्टि और अर्ध-कल्पना नहीं। जीविकार्जन में भी वह पुरुष से प्रतियोगिता करती

चलती है, इसीलिए उसके सम्मान का आसन प्रतियोगिता के बाजार में नीचे होकर सम्मान सहित लुप्त हो गया है। अब कोई भी उसे 'बस' अथवा ट्रेन में अभिवादन करने के पश्चात् बैठने के लिए स्थान नहीं छोड़ेगा, वह यह चाहती भी नहीं। पुरुष के समान व्यवहार चाहती है, वह सहकर्मिणी है, सहधर्मिणी होना आज उसके लिए महत्त्व नहीं रखता। वह पहले 'कामरेड' है फिर कामिनी। यदि उसका यौवन लावण्य बढ़ भी गया हो तो भी नारी अपना लालित्य खो बैठी है। संसार के बन्धनों से मुक्त होकर वह खेल, व्यायाम और अन्य कई वस्तुओं से जीवन में स्फूर्ति पाती है, किन्तु प्राणप्रिया की मूर्त्ति उसमें नहीं। इसीलिए अब वह विपुल रहस्य के अवगुण्ठन के अन्तराल में नहीं है। फिर भी वह नारी है, कविता की नायिका वह नहीं है। आधुनिक कवि कविता में उसके स्कूल और यूनिवर्सिटी के दान के प्रति सम्मान दिखायेंगे, श्यामल देश में घूमने के उल्लास का और संगीत के साहचर्य का वर्णन करेंगे। किन्तु गृह और एकनिष्ठ प्रेम कविता के उपजीव्य रूप में प्रायः अचल होकर केवल चलचित्र के पर्दे पर गतिशील होकर रह गया है। कविता ने गृह छोड़कर देश को लिया है, स्थानीय भूमिखण्ड को भी आश्रय बनाया है। बन्धुओं का साथ, जीवन की आसक्ति, खूब बढ़ी दिखाई देती है। Loyalty से बढ़कर और कोई बात नहीं। किन्तु स्त्री-पुरुष के सम्बन्ध के समय वह इतना प्रबल नहीं। मार्ग मार्ग पर जो चिन्ताहीन, आत्मगत और कर्मव्यस्त जन-स्रोत बहता रहता है, और जो मुझे साँझ सबेरे प्रतिदिन प्रवाह के बीच खींच लाता है, उसके मध्य मुझे लन्दन के मन की बात की छाप नहीं दिखाई पड़ती। फिर भी यह विषय कविता गान, कथासाहित्य, सहजछन्द और विचित्र विकास में कितना रूप प्राप्त किये है उसकी सीमा नहीं। यहाँ राजपथ केवल गतिपथ में पर्यवसित कभी नहीं कहा जा सकता; ऐसा मालूम होता है कि इस

निरासक्त तथापि कर्मभार-त्रस्त नगर में केवल जीवित रहना भी कम सुन्दर नहीं। यहाँ केवल पोथीगत अध्ययन में दिन नहीं बीतता; मन का वातायन खुल जाता है और नीरव तथा निर्निमेष भाव से मानवमन का निरीक्षण करता हूँ। उसका निरीक्षण करते करते अलक्ष रूप से आविष्कार किया है कि जीवन में काम के समय को छोड़कर अपने विश्राम के समय को सोने में नहीं बिताते वरन् उसमें क्रीड़ा, कौतुक, खेल, फुटबाल आदि के कार्यों में अथवा असमर्थ होने पर उन दृश्यों को देखकर मनोरंजन करने में भी लन्दनवासियों की मानसिक सौकर्य और सबलता कम नहीं है। जीवन की कानन-भूमि में तुम्हारी हँसी और अश्रुपूर्ण मुख कुछ भी प्रभाव नहीं डाल जायेंगे। तुम्हारा अभाव भी शायद किसी की हृदय-सरसी में विध्वंस की काली छाया न डाल सकेगा। किन्तु फिर भी यह बात सत्य है कि जब जून मास अपनी सम्पूर्ण शोभा और सौरभ लेकर शहर में मायाजाल बुनेगा तब तुम कहीं भी रहो किन्तु तुम्हें ऐसा न लगेगा कि तुम्हारा जीवन व्यर्थ बीत रहा है। हलके हलके नीलाभ प्रभात में 'लार्क' पक्षी सुषुप्त वातायन के पास आकर तुम्हें पुकार जायगा, सुरभित मुकुलगन्ध असह्य आकुलता जगा देगी, ऐसा लगेगा कि धैर्य-हीन धरणी तुम्हारे लिए ही सुन्दरी होकर सज रही है। एक दिन सामान्य नागरिक ने शायद सोचा था—

> She singeth and I do make her a song
> And read sweet poems the whole day long
> Unseen as we lie in our hay built home.

वह इस आकर्षण में अथवा इस विराट् नगर और जीवन के विपुल विकास और विलास-वैभव के बीच आत्मविस्मृत होकर रहेगा अथवा काम में व्यस्त रहेगा, यह कदापि कहा नहीं जा सकता। वह भी इतिहास में लिखे जाने के समान आत्मदान के लिए प्रस्तुत हो सकता है। इन्हीं लन्दन के अधिवासियों ने विश्व युद्ध और

साम्राज्य की सृष्टि की है। गत महासमर के समय देखा गया और फिर प्रयोजन होने पर भविष्य में देखा जायगा कि जो प्रेम कोई प्रश्न अथवा प्रतारण नहीं करता, प्रतिश्रुति अथवा प्रतिदान नहीं चाहता, वही प्रेम आधुनिक अंग्रेजी में जिस रूप में दिखाई देता है ठीक उसी रूप में सब कुछ छोड़ चरम त्याग के बीच देश को आश्रित कर प्रकाशित होता है।

लन्दन के मन में शाश्वत शान्ति का विशेष आभास नहीं। जान पड़ता है इसीलिए युद्ध के रुद्र आघात के पश्चात् ये लोग और भी अधिक देश और शान्तिवाद की बातें सोचने लगे हैं। कभी अतीत गौरव की और कभी भविष्य के संशय की बात सोचते हैं, किन्तु निराशा का चिह्न कहीं भी नहीं। नर और नारी का प्रेम कल्पना के सिंहासन से उतरकर वास्तविक जीवन में जो हो सकता है उसी की सम्भावना के बीच कभी विह्वल और कभी विफल वासना का आसन पाता है। अतएव यदि वियोग होता है तो उसके बीच सहनशील शालीनता रहती है, क्लान्त अन्तर की असुन्दर अभिव्यक्ति नहीं, यौवन का उत्तप्त अनुरागसिक्त रक्त वीरों की तरह लापरवाही से बहाकर वे सोच सकते हैं कि विदेश के युद्ध प्रान्त के एक कोने को भी हमने अपना देश बना लिया। वे थोड़ी-सी कल्पना द्वारा यह बात सोचकर सान्त्वना पा सकते हैं कि जीवन के अलक्ष्य अन्धकार के बीच हमारा हृदयस्रोत इस प्रकार बह जायगा कि मृत्यु को भी चकमा दे जाऊँगा, और मेरी रात्रि एक ही ऐसे तारे से स्मरणीय हो जायगी कि और सब लोकों के सम्पूर्ण सूर्य की ज्योति उससे म्लान हो जायगी। यूरोपीय यौवन की यह उद्दामधारा किसी को कहीं भी सहज में ठहरने नहीं देती।

"जीवन के खरस्रोत में तुम सदा ही बहते रहते हो
भुवन के घाट घाट पर—
एक हाट से बोझ भरते हो और दूसरे में खाली कर देते हो।"

यदि व्यथा मिली तो क्यों मिली, इसका विचार करते समय विकार अथवा विरक्ति न हो जाय। वियुक्ता प्रेयसी का नाम सहसा अतर्कित रूप से किसी अपरिचित ओठों से उच्चरित होने पर ऐसा लगेगा कि बाहर की सुदूर की एक छाया उतराती आती चली गयी, जिसके साथ कोई सम्बन्ध नहीं, जिसमें किसी काया की माया कभी थी ऐसा नहीं जान पड़ता।

पुरुष और नारी यदि जीविका के अर्थ अथवा जीवन के आह्वान के लिए एक दूसरे से अलग हो जायँ तो प्रेम की कविता की आवश्यकता का कम होना भी विचित्र नहीं। एवं एकनिष्ठ अथवा 'जन्म-जन्म युग-युग तक अनिवार्य' प्रेम का अनुभव करना 'फ्लैपरों' के लिए केवल भावमय बाष्पमय 'सेन्टिमेन्टलिटी' ही कहलायेगा। टेनिसन् का आदर्श इस काल के लिए नहीं है, ब्राउनिंग का भी एक आदर्श सम्पूर्ण रूप से अचल है। इस काल का प्रेमी, जो इस जीवन में प्रेम निवेदन नहीं कर पाया वह मृत प्रेयसी की मुट्ठी *में एक पत्र रखकर इस विश्वास में सान्त्वना नहीं पायगा कि* जन्म जन्मान्तर के स्रोत में बहता हुआ किसी दिन वह उसे प्राप्त कर लेगा। इस संसार पर ही जिसका दावा दृढ़ नहीं अन्य किसी भावी जीवन में उसकी आस्था क्यों होने लगी ? 'That it fades from kiss to kiss' यह बात जो समझ गये हैं उन्हें बहुत मूल्य देना पड़ा है। इसीलिए उनका हृदय चंचल और अनेक निष्ठ हो उठा है। मार्ग-मार्ग में ही कितने नवीन परिचय, नवीन अनुभव स्मृति के पथ में कितनी मूर्तियों का आना जाना होता है, उनमें कौन प्रतिमा होकर पूजा प्राप्त करेगा कहा नहीं जा सकता। एवं उसके विसर्जन के समय के पूर्व ही अन्य मूर्ति की छाया आकर पड़ सकती है। सम्भव है पहले के चरणचिह्नों तक को मेट दे क्योंकि स्मृति प्रीति के आसन से बँधी तो रह नहीं सकती। जीवन्त होने के नाते यह लोग चाहते हैं जीवन्त प्रेम। स्मृति हिम शीतल है,

उसमे तो प्राणमयता का कव्युष्ण स्पर्श एवं निश्वास सुरभि नहीं, कल जो था आज नहीं है उसके लिए चिरकाल तक रोते रहने का क्या अर्थ है ? नूतन आकर उस व्यथा पर प्रलेप कर शून्य को पूर्ण कर देगा। पहले के चरणचिह्नों को मिटाकर लुप्त कर देगा। किन्तु नूतन भी क्या टिक सकेगा ? इस अवस्था में किसको मर्म के मन्दिर-तल में अनन्त जीवन द्वारा प्रतिष्ठा दी जाय। यह हिराक्लि-ट्स के दर्शन का युग है। इस समय नदी में जो जलबिन्दु यहाँ है दूसरे ही क्षण वे फिर नहीं। किन्तु दोनों ही जलबिन्दु एक दूसरे की अपेक्षा कम सत्य नहीं। 'पथ में जाते जाते पूनों की रात में' किसी नवीना से भेंट हुई, उसके आकर्षण से स्मृति पर जोर पड़ा, पुरातना की याद आ गयी, वह एक दिन अपने प्रेम की वृक्ष-शाखा में पत्तों की तरह सहज भाव से ग्रहण करने को कह गयी थी ; उसने एक दिन कहा था कि रात्रि के अन्धकार में वे दोनों तरणी प्रकाश करती हुई सौहार्द्रमय वाणी की घोषणा कर किसी दिन सम्भव है अन्तराल में छिप सकती है। इस स्मृति और चिन्ता के स्रोत में कलकल करता सम्भव है कभी पुरातना का आसन नवीना के आह्वान के सामने पराजय स्वीकार कर बह जाय, इसका निश्चय नहीं।

विशेषकर जब कि व्यक्ति-स्वातंत्र्य के कल्याण से कौशल्या कैकेयी की प्रतियोगिता उठ गयी है। अपनी बरमाला के सब फूल मुझे दे दो उसमें किसी प्रकार का भाग करना सह्य न होगा, तुम्हारे हृदयाकाश में मैं एक चन्द्र होकर विराजूँगा, किसी म्लान तारा का वहाँ स्थान न होगा एवं मेरी स्वतंत्र सत्ता भी क्षुण्ण न होगी। किन्तु इन आदर्शों से आधुनिका की ज्वाला कम नहीं है। स्वाधीनता के कल्याण में न उसका घर रहा, न उसे वर मिला और सम्भवतः उसके जीवन में प्रियतम का आविर्भाव भी न हो। अतएव वह जीवन को जिस प्रकार लघुभाव से ग्रहण करती है उसी प्रकार एक ही आघात से हिल नहीं जाती, आँसू पोंछ जीवन में नया अध्याय प्रारम्भ करती है। तब क्या इस प्रकार की प्रेमधारा में तत्त्व नहीं ?

ऐसा सोचने पर यूरोप के यौवन को गलत समझा जायगा। इनके मन्त्र को कवि की भाषा में बोलने पर—

I have been faithful to thee
Cynara in my fashion.

*　　*　　*

अंग्रेज़-चरित्र का हिसाब इतनी आसानी से नहीं दिया जा सकता। उसका शरीर जितना विशाल है, हृदय उतना गम्भीर। वह बात कम करता है, आलाप और भी कम करता है और हृदय की अनुभूति को बाहर प्रकाशित नहीं करना चाहता। चित्त के सुख से मस्त, आत्मप्रसाद से युक्त जिसके दिन वर्षाकालीन गंगा में पड़े शतदल के समान स्वच्छन्दतापूर्वक बढ़े चले जाते हैं, एक दुर्लभ क्षण में सम्भव है कि एक आन्तरिक सहानुभूति की वाणी से उसका एक नया वेदना-विद्ध स्वरूप प्रकाशित हो उठे। शैलसम अचपल प्रेम इतनी गम्भीरता पूर्वक किस तरह छिपा रहता है ?'

'जॉन बुल' का चरित्र विचित्र है। एक अध्यापक को पुस्तक-कीट के रूप में ही जानता था। उनका रूक्ष मन प्राचीन वट-वृक्ष की जटाओं के समान जॉन बुल के देश की मिट्टी को सहस्रों ओर से जकड़े खड़ा है, एवं समुद्र वेष्टित द्वीप के चरित्र की सर्वप्रकार कोनीयता (angularities) मानो उनकी बहिराकृति के भीतर से तीक्ष्ण फन के समान झाँक रही है। उस वृद्ध को व्यंगचित्र विशारदों की निष्ठुर तूलिका की नोंक को कितने दिन हुए मन ही मन समर्पित कर चुका हूँ। पहली मई के सबेरे जब उनके सामने के बाग में सुनहरा प्रकाश फूलों पर हिल्लोलित हो रहा था और जिस निर्जन ग्राम के वृक्ष वृक्ष पर पत्तियों के आह्वान में उत्सव की ध्वनि सुनाई दे रही थी, तब वे संगोपन रूप से अपने गृह के पीछे फूलों के शुभ्र हास्य से उच्छ्वसित एक 'चेरी' वृक्ष के नीचे नतजानु होकर 'हाउसमैन' की कविता पढ़ रहे थे। पाण्डित्य एवं वार्धक्य की सहस्र रूक्षता के छद्मवेश के भीतर से एक कवि-प्राण की कृतज्ञता एवं आनन्द अश्रुबिन्दुओं में प्रकाशित हुआ।

स्पेन की खोज में

कल शेषरात्रि को शेष शुक्लपक्ष की ज्योत्स्ना में वोर्दो से हिस्पानियों का गान सुनते हुए पिरेनीज पर्वतमाला के इरुन गिरि वर्त्य में आ गया हूँ। यह गान खूब परिचित जान पड़ा। दो मास तक इंगलैण्ड की शीत की जड़ता में सहृदयता और आकर्षण नहीं मिले।. लन्दन के कान्सर्ट हाल (वाद्य-गृह) की सुष्ठुशीलता और सुकठिन आचार निष्ठा पहले-पहले विदेशी को अभय नहीं दे पाती, किन्तु कल रात्रि को हिस्पानियों के गान ने अपने किसानों के गान के समान ज्योत्स्ना भरे आकाश से मिलकर मुझे आश्वासन दिया। इसीलिए सीमान्त के स्टेशन पर अपरिचित ग्राम्य और पर्वतीय मनुष्यों की दुर्बोध्य भाषा होने पर भी विश्वास कर स्पेन को हृदय में वरण कर लिया।

प्रकाश, प्रकाश! कितने मास के पश्चात् जैसे जीवन में जीवन पा गया हूँ। इंगलैण्ड के म्लान, मेघाच्छन्न और कुहासाच्छन्न आकाश का एक रूप है। उस रूप का उपभोग करने के लिए अत्यन्त धैर्य के साथ इंगलैण्ड का अवगुण्ठन हटाना पड़ेगा, कुहासे में पथ पर भटककर अज्ञात की खोज में आनन्द पाना होगा। 'अण्डर-ग्राउण्ड' से ठीक समय कालेज न जाकर शीत के प्रभात में 'बस्' से रक्त सूर्य का हरिद्राभ अपमान देखते देखते देरी करते हुए और क्लास से अनुपस्थित होकर भी विषण्ण भाव दूर फेंकना होगा।

रात्रि को दूर प्रान्तर में बिजली की बत्ती अथवा ज्योत्स्ना के प्रकाश में 'स्केटिंग' करना होगा। मानता हूँ—सब मानता हूँ कि अन्धकार में, अन्तराल में, आकाश और पृथ्वी की युगल तपस्या के बीच एक स्तब्ध गाम्भीर्य है, किन्तु इंगलैण्ड के भूमिखण्ड में उसके बीच एक क्लान्ति का चिह्न-सा दिखायी पड़ता मालूम होता है। इसीलिए स्पेन के प्रकाश ने मेरे सामने जीवन ला दिया।

पिरैनीज शैलमाला की कितनी ही चोटियों पर एक अपूर्व नील आभा मूर्छित पड़ी रहती है, मानो निशान्त के सुखस्वप्न की एक झुटपुटी स्मृति। कितने दिन से ऐसा स्निग्ध नील प्रकाश से भरा उषा का मोहक रूप नहीं देखा था। आज प्रथम कैशोर के आनन्द के समान एक अकारण आनन्द मन को मतवाला करने लगा। मन परीक्षा की चिन्ता से भाराक्रान्त नहीं, आकाश के पक्षी के लघु-सरल, अस्तित्व के समान मन लेकर शीघ्र बाहर निकल आया। उषा तो निश्श्वास रुद्ध हृदय से प्रभात के जागरण की भाषा सुनती-सुनती मृदु चरण-क्षेप करती इसी समय चली जायगी। पथ-पथ पर हिस्पानी कम्बल में लिपटे जड़ीभूत होकर चल रहे हैं; एक गधा मार्ग के पास से जा रहा है; छोटे घोड़े से खींचे जाने वाली एक गाड़ी व्यर्थ में खड़ी है, एक दूकान के सामने कुछ कीचड़-सा है, जिसे परिष्कृत करने की व्यर्थ चेष्टा की गयी है। लन्दन के प्रभात में चाकरानियों की कर्मव्यस्तता, दूधवाले का क्षिप्रपद (दौड़ते पाँव) द्वार द्वार पर दूध रख जाना, कुली मजदूरों का 'अण्डरग्राउण्ड' अथवा ट्राम के पथ पर ऊर्ध्वश्वाँस दौड़ना आदि यहाँ नहीं दिखलायी पड़े, इसीलिए मार्ग अत्यधिक शून्य जान पड़े। एकाएक देश की याद आ गयी; फिर इंगलैण्ड में सद्योलब्ध उल्लास के प्राचुर्य की बात भी सोची, समझ में आया इंगलैण्ड की शिक्षा का फल मेरे ऊपर फलीभूत हुआ है, इसीलिए उस देश के कर्म बहुल, चंचल, सफल जीवन का स्पर्श इतना अच्छा लगता है।

मन में धूप की तपन का अनुभव कर रहा हूँ । इंगलैण्ड में भी यह तपन देखी थी । जिस दिन सूर्य का प्रकाश अप्रत्याशित जान पड़ता है, झुण्ड के झुण्ड लोग शहर के बाहर चले जाते हैं, बच्चे खेलने लगते हैं, लन्दन के मैदान सूर्योपासकों से भर जाते हैं । लन्दन कलकत्ता नहीं है, वहाँ प्रत्येक मुहल्ले में सांस लेने एवं आराम से घूमने के लिए बाग हैं । प्रकृति के सौंदर्य माधुर्य एवं आवश्यकता की बात इतना बड़ा कर्मचंचल गतिमय शहर भी नहीं भूलता है। केवल धनी लन्दन में ही क्यों ? छोटे शहर एवं ग्रामों में भी इस बात पर ध्यान देते हैं ; ग्राम को भी चारों ओर से सजाकर रखने की कितनी इच्छाएँ और चेष्टाएँ हैं । मेरे नेत्र अब भी यूरोपीय नहीं हुए हैं, किन्तु ग्राम्य यूरोप के पास ग्राम्य भारत को रखने पर लगता है कि हमारे कवियों ने सच्चा वर्णन नहीं किया है, इसीलिए भारत का रूप जितना कविता और कल्पना में पाता हूँ, उतना जीवन में नहीं, मन में भारत के रंग का स्पर्श जितना अधिक रहना उचित था, उतना सम्भवतः नहीं है । यह बात कैसे स्वीकार करूँगा कि मन में ग्राम का जो सुन्दर, प्राणमय, लीलायित एवं आनन्द रसास्पद चित्र अंकित था उसके साथ भारत के ग्रामों की अपेक्षा औपन्यासिक हार्डी के ग्राम ही अधिक मिलते दिखायी पड़े ।

(२)

भारतवर्ष में धारणा है कि स्पेन यूरोप के बीच भारत के समान है । इस बात की परीक्षा करने की इच्छा बारबार जाग उठती है । पिरेनीज् के पहाड़ी अञ्चल एवं अन्यान्य छोटे शहरों में उत्तरीय यूरोप की कर्मचंचलता और उत्साह का प्राचुर्य नहीं पाया । स्पेन और फ्रांस के बीच एंडोरा नामक राज्य की भी यही अवस्था है । पथ और घाट पर गति में आराम है—आवेग नहीं, नगरवासिनी की मृदु-मन्दगति में लावण्य है—लीला नहीं । लन्दन के जनपूर्ण पथ पर

ऐसा लगा मानो इंगलैण्ड में सभी नियम मानकर चलते हैं, कारण पथ की शृंखला इस देश में किसी के पैरों में शृंखला होकर नहीं रहती, सहस्रों जनों की चलाचली में वह सहचरी है, बन्धन नहीं।

स्पेन में पोशाक भी ठीक यूरोपीय ढंग की नहीं। यूरोपीय पोशाक की सुकठिन सुष्ठुता की यहाँ आशा नहीं की जा सकती। स्त्रियों की पीठ पर झालर वाले शाल है—रेशमी शाल से युक्त पोशाक अत्यन्त सुन्दर दिखलाई पड़ती है। पुरुषों के सिर की कैपों में विशेषता है। इस देश में मूर लोग अनेक शताब्दियों तक, १५वीं शताब्दी तक, राज्य कर गये हैं। द्वितीय फिलिप के राजत्वकाल से बहुत पहले इनका और यहूदियों का रक्त-सम्मिश्रण पर्याप्त परिमाण में हो चुका है, उसका परिणाम, आकृति, हाव-भाव और जातीय चरित्र में यथेष्ट रूप से देख पा रहा हूँ। स्पेनिश लोगों की गठन कुछ स्थूल और कुछ नाटे, वर्ण 'आलिव' (जैतूनी) अर्थात् उत्तरीय-यूरोप के लोगों के समान अत्यन्त श्वेत नहीं, नेत्रों के कटाक्ष गम्भीर और काजलीय; और भ्रूभंगी में कुछ प्राच्य प्रभाव पाता हूँ। हिस्पानी सहज ही मित्र बन जायगा, दिल खोलकर बातें करेगा, फिर हठात् धैर्य और शान्ति खो देगा। स्वेज के इस पार की तरह यहाँ का रंग-ढंग है। एक बार पथ पर घूमते हुए एक घंटे में ही नूतन आलाप और निविड़ बन्धुत्व एवं तीक्ष्ण विद्वेष और भीषण शत्रुता मार्ग में ही अभिनीत होते देख आया हूँ। प्रकृति मनुष्य का गठन करती है, धूप और शीत चरित्र पर प्रभाव डालते हैं। उसपर विदेशी मूरों की अधीनता में बहुत दिन रहकर जातीय चरित्र भी परिवर्तित हो गया है। इतिहास बताता है कि स्वाधीन होने के पश्चात् स्पेन ने विदेशी प्रभाव दूर करने की प्रबल चेष्टा की है। स्पेन ने मूर एवं यहूदियों के विरुद्ध शान्तिहीन, क्षमाहीन और मर्मान्तिक युद्ध चलाया है, यूरोप के धर्म और राजनीति के नेता और विधर्मी तुरुस्क के विरुद्ध वह रक्षाकर्ता हुआ है। उस युग में स्पेन न एक ही

समय समस्त यूरोप में और बाहर के जगत् में सैन्य भेजी; धर्म के नाम पर, वीरत्व के आवरण में अमानुषिक अत्याचार किये। फिर भी स्पेन पूर्ण मात्रा में यूरोपीय न हो सका, एवं उसकी राजनैतिक अवनति, अभिजात सम्प्रदाय के अधःपतन और पीड़न के फल स्वरूप अधीन प्रजा का विद्रोह ठीक प्राच्य रूप में ही हुआ। यूरोप कहने का जो अर्थ होता है वह स्पेन में सर्वरूप में हमें प्राप्त नहीं होता।

इसीलिए जब इस प्राच्यभावापन्न पोशाक में सज्जित हिस्पानी लोगों के बीच एक स्त्री को बिलकुल आधुनिक वेश-भूषा में देखा तो विस्मित होकर उसे देखे बिना न रह सका। पहाड़ के ऊपर उस समय धूप, छाया और नीलांजन ने एक अपूर्व मोह विस्तार कर रखा था। अस्तरश्मि उद्भासित वेलाशेष के आकाश का सब ऐश्वर्य तब इरुन से 'सैन सेवास्टियन' के पथ पर एक झील के ऊपर प्रतिफलित हो रहा था। उसी आसन्न अन्धकार की मोहिनी माया के बीच समझ गया कि यह स्त्री जाति से हिस्पानी है किन्तु मेरे ही समान घुमक्कड़ भी। स्त्री सुन्दर नहीं, शोभना है। उसकी अँगुलियों में एक ऐसी सुकुमार कान्ति है कि वह जो कुछ छुएगी उसी में अननुभवनीय स्पर्श जाग उठेगा। कालिदास उसकी चंचलता देख वनहरिणी से उसकी तुलना करते। अथच प्रत्येक रक्तकण से वह नगरवासिनी है। उसे अच्छी लगने वाली कोई वस्तु नहीं, अच्छा लगने पर हृदय से उस भाव का प्रकाश कैसे किया जाता है वह भूल गयी है। इस श्रेणी की स्त्री अपने से बाहर किसी भी बात को सहज रूप से नहीं सोच पाती। मुझे मालूम होता है यूरोप के अबाध मिश्रण के समाज में स्तुतिवावक्लान्त रूप को यह मूल्य देना ही होगा। यद्यपि यह स्त्री रंगीन आकाश के नीचे धूसर पहाड़ के एक सूक्ष्म सौंदर्य को देखकर कह उठती है 'कितना सुन्दर है न'। यद्यपि वह इन मनुष्यों की अद्भुत पोशाक और मनोहर चलनभंगी देख मृदु-स्वर में कहती है: 'कितना आश्चर्य, चमत्कार' फिर भी जानता

हूँ, कि वह इस विराट् और स्तब्ध सौंदर्य के बीच अपने को कुछ बाहर के संसार में समझती है। वह इस निरुद्देश के आह्वानमय दृश्य के साथ हिलमिलकर नहीं चल सकी एवं इसके लिए इस उदास वैराग्य के धूसर चित्रपट के सामने उसकी उज्ज्वल पोशाक, फैशन की चूड़ान्त स्कर्ट की बगल की जेब में हाथ डाल अंग हिलाते हुए खड़े रहना, एक प्रतिवाद के रूप में दिखायी पड़ता है। वह मानो 'बुलेवार' में घूमने आयी है, वह पथिक नहीं है। उसका चरित्र आत्म सचेतन है, उसके मन की जन्मभूमि पैरिस का एक टुकड़ा है, जीवन का मानदंड फैशन।

जहाँ भी जाता हूँ इस प्रकार के टूरिस्ट मिलते हैं। 'अमेरिकन टूरिस्ट' का विषय अवज्ञेय संज्ञा प्राप्त कर चुका है। किन्तु अमेरिकन ही दोषी क्यों? अधिकांश में सभी यात्री किसी भी समूह में अनेक प्रकार की बातचीत करने तथा क्लब और समाज मे नाम पैदा करने के लिए आते हैं। सब ही टूरिस्ट एजेन्सी के विज्ञापन और गाइड के हाथ आत्म-समर्पण कर देते हैं। और विख्यात चित्रशाला, जन्तुशाला, राजप्रासाद और भूतों का दुर्ग देखकर, बड़े बड़े होटलों में खा पीकर अपने दल अथवा होटल के अन्यान्य भ्रमणकारियों के साथ निर्भावना में समय बिता जाते हैं। ऐसे होटलों में डेरा डालकर अंग्रेज और अमेरिकन सदा अंग्रेजी ही बोलते हैं। इस विषय में साधारण वृत्ति का विदेशी छात्र सौभाग्यवान् होता है। वह रहेगा किसी देशी होटल अथवा किसी के घर में थोड़े से दाम खर्च कर। पथ के रेस्तराँ में उसे स्वयं भोजन आविष्कार करना होता है, परिचय अपरिचितों के साथ होता है। और सबसे बड़ा सौभाग्य यह है कि वह अपने को भूलने के लिए वह देश भ्रमण करने नहीं आता, आता है अपने को जगाने के लिए।

यूरोप और अमरीका के पथ के लोग अन्य कोई कारण न होने पर भी एक मानसिक कारणवश भ्रमणकारी होने के लिए बाध्य

हैं। वे अपने को भूलना चाहते हैं, सौभाग्य की अनित्यता, जीवन की लक्ष्यहीनता और बहुत समय उच्चाकांक्षा की निर्बुद्धिता उनके जीवन को उद्देश्यहीन निरवच्छिन्न गति देती है। उसी गति के आवेश में ये कभी कभी घूमने को बाध्य होते हैं। स्पेन के श्रेष्ठ समुद्र-विलास स्थान 'सान संबास्टियन्' में, 'बिस्के' उपसागर में, 'ब्रेक वाटर' के पीछे अचंचल जल में सागर स्नान करते हुए यही बात याद आयी। सामने समुद्र की असीम, नील निद्रा-करुणता है, दोनों ओर आसाम प्रदेश के समान विटपी शोभित पर्वत श्रेणी की श्याम शान्ति है। इस दृश्य के बीच भ्रमणकारी अपने को मिलाता नहीं है, कोई शोर करता हुआ समुद्र स्नान करता है, कोई स्पेन के विचित्र मोटर-पथ से बहुत दूर चला जाता है, कोई संध्या के समय होटल के विस्तीर्ण विलास लीलामय नाचघर में आत्मविस्मृत रहता है। आत्म-विस्मरण की यही प्राणपण चेष्टा उनमें से अनेक के उद्देश्यहीन जीवन का उद्देश्य है। अपने को भुलाने के लिए, चिन्ता को विक्षिप्त करने की प्रबल तृष्णा में वे आनन्द के पश्चात् आनन्द के सम्भार में दिनरात पूर्ण रहना चाहते हैं। आजकल उल्लास एवं उत्तेजना न होने से काम नहीं चलता, कारण सभी गत महायुद्ध के पश्चात् अपनी असहाय क्षुद्रता के विषय में सोचकर भय प्राप्त करते हैं। यूरोप के क्षणस्थायी जीवन में इस युग में अनन्त और चिरन्तन कोई आश्वासन की वाणी नहीं दे पा रहे हैं। किन्तु इस आनन्द का आवेष्टन भी किसी को बहुत दिन के लिए तृप्त नहीं रख पा रहा है, कारण वह लघु, अगम्भीर और विरामहीन है। यूरोप के सब आनन्द की पण्यशाला में एक अतृप्ति का भाव देखता हूँ, जिसे फ्रांसीसी भाषा में 'blasc' कहते हैं; जिनके जीवन में इतनी गति है, इतनी उद्दामता है, वे निर्जन क्षण में बोल उठते हैं—हाउ बोरिंग (How boring)

(३)

दिसम्बर मास का प्रभात बाहर के तुषार प्रतिफलित आलोक में उज्ज्वल, किन्तु नाना रंग में अंकित काँच के एक अत्यन्त सामान्य प्रकाश सालामांका के प्राचीन विराट् गिर्जाघर के मर्मर-स्तम्भ के अन्तराल में क्रास के ऊपर मूर्च्छित होकर रह गया है। इस गिर्जा में मूरीय, बाइजेन्टाइन और गाथिक तीन प्रकार की शिल्पधाराएँ अतुलनीय समावेश और क्रमविकास के उदाहरण हैं, उनसे मेरी दृष्टि अन्य दिशा में जाने के लिए बाध्य हो गयी। मैंने विस्मयान्वित होकर आपाद मस्तक काली पोशाक में ढँके एक स्थिर नतजानु ध्यानरत हिस्पानी को देखा और मर्म मर्म में उपलब्ध किया कि खृीष्ट धर्म प्राची का पाश्चात्य को एक अनोखा दान है। इस दृश्य को भी यूरोप के धर्म मन्दिर छोड़ इतने दिन तक और कहीं नहीं देखा। यह मानो हमारा अत्यन्त परिचित है, इसके साथ अन्तर का परिचय है। जिस भूमिखण्ड पर यह पुजारी रहता है वह मानो यूरोप में प्राच्य का एक टुकड़ा है। प्रतीची का अन्धगत वेग, शान्त और क्षणस्थायी के प्रति अनुराग को खृष्ट धर्म का प्रभाव ही प्राच्य के स्वभाव सुलभ ध्यान की स्थिति शीलता द्वारा संहृत किये है; चित्त-विक्षेप से समाधि, विषय से आदर्श और आत्म विस्मरण से मनन में लौटा लाया है।

सालामांका प्राचीन स्पेन का एक अक्षुण्ण परिपूर्ण चित्र है। सौभाग्यक्रम से वर्तमान को कालोपयोगी करने का प्रयास इस शहर के माधुर्य को नष्ट करने की चेष्टा नहीं करता। जिस युग में गेलिलियो (Galilco) के आविष्कार यूरोप में और कहीं स्वीकृत न होने पर भी यहाँ के विश्वविद्यालय में उस विषय की वक्तृता सुनने एवं कोलम्बस् (Columbus) के नूतन अद्भुत् आविष्कार की कहानी सुनने दस हजार छात्र टेढ़ी-मेढ़ी गलियों से आते-जाते थे वह युग अब यहाँ से चला नहीं गया है।

शंखगृह (Casc de las Conchas) की बुनियादी घराने की श्रेष्ठ निदर्शन कारुकार्य पर बीसवीं शताब्दी की कोई छाप इस समय तक भी नहीं पड़ी है। मध्य युग के रंगीन चमड़े वाले हाथों के बने हुए कागज़ की शिल्पकला में सालामांका वर्तमान वेनिस से बड़ा था। कालेज के छात्र अब भी अपनी पुस्तकों को चमड़े के सुदृश्य आवरण में ढक कर रखते है। अब भी पचीस कालेज और साठ मठों की सम्पत्ति उनके यत्नरक्षित कारुकार्य खचित पुस्तकागार और विशेषतः धर्म पुस्तकों के विभाग के रूप में है। एक-एक के भीतर से जिधर भी देखता हूँ, केवल विराट् गिर्जा ही गिर्जा दिखायी पड़ता है। समस्त शहर छोड़, उसके सम्पूर्ण सांसारिक कर्म और कर्तव्य को छापकर उसके आशा और विश्वास, प्रेरणा और साधना को आकार देकर यह सालामांका गिर्जा खड़ा हुआ है। जो कहते है पाश्चात्य जाति को धर्म की आवश्यकता नहीं वे सत्य नहीं कहते है। स्पेन ने राजा अलफान्सो के पलायन के पश्चात् गणतन्त्र ने कैथोलिक धर्म को राजधर्म के पद से च्युत कर दिया है, कैथोलिक परिचालित स्कूलों को लुप्त कर दिया है, देवोत्तर और धर्मोत्तर सम्पत्ति हड़प कर ली है। उसका फल राजनीतिक चाञ्चल्य और अशान्ति के बीच, नव्य स्पेन के सरकारी स्कूलों में शिक्षकों के अभाव में, कृषक और श्रमिक आन्दोलन में बारबार प्रकाशित हुआ है। स्पेन के गिर्जा में अनेक बुराइयाँ थीं, उनमें वैषयिकता बहुत अधिक परिमाण में थी, याजक होना एक लाभजनक व्यवसाय में परिगणित होता था। किन्तु ख्रीष्टधर्म हिस्पानियों के अन्तर में पर्याप्त स्थान अधिकृत कर चुका था। धर्म से मेरा तात्पर्य किसी पारलौकिक मंगल के अनुष्ठान मात्र से ही नहीं है।

धारणाद् धर्म्मं इत्याहुः.........यः स्यात् धारणसंयुक्तः स धर्म इति निश्चयः।

कुशासित, विभक्तप्रदेश, स्थिरराजनीतिहीन स्पेन के विक्षिप्त

और विक्षुब्ध जनसाधारण के चित्त को धर्म ही एक मार्ग पर ला रहा था। जिस वृद्ध को अपने सामने विराट् आडम्बरमय प्राचीन मन्दिर में उपासना करते हुए देख चुका हूँ उसके अन्तर में धर्म एक गोपन प्रकोष्ठ अधिकृत किये हुए था। जब उसका यह विराम-गृह लुप्त हो जायगा, उसके अन्तर का आश्रय और नहीं रहेगा, तब वह बड़ी सुगमता के साथ बार्सिलोना के छात्र-विप्लवियों के पर्य्याय में मिल जायगा।

(४)

मठ, मन्दिर, प्रासाद और सौध सम्पन्न 'एस्कोरियल' गृह स्पेन और कैथोलिक धर्म को जो कुछ बना रखा है, समय के प्रभाव से अस्पृश्य उन्हीं के कुछ स्मारक चिह्न वहन करते हुए अब भी खड़े हैं। इस हिसाब से 'एस्कोरियल' का स्थान दिल्ली और फतेहपुर सीकरी से ऊपर है। यह स्थान ठीक दिल्ली के समान एक विलुप्त युग का मूक प्रहरी है। वहाँ प्रासाद है, प्रहरी नहीं, राज-प्रेयसी नहीं। किन्तु दिल्ली के पास नयी दिल्ली होगयी। नूतन राज-पुरुषों के पदशब्दों से राजपथ पुनः मुखरित होने लगा है, यद्यपि उमरावों के सब चिह्न धुलमिटकर समाप्त हो गये हैं। एस्कोरियल फतेहपुर सीकरी के समान अतीत युगों के चिह्नों को सगौरव वहन किये आ रहा है, उस युग की परिपार्श्विक अवस्था में भी विशेष परिवर्तन नहीं हुआ है। यहाँ के व्यक्तियों के आलाप में यह धारणा सर्वाधिक बद्धमूल हो जाती है। इनके स्वप्न और चिन्ताएँ अब भी मध्ययुग छोड़ वर्तमान काल में नहीं आ पहुँचे हैं। यहाँ कार्ल्स किन्तो (पंचम चार्ल्स) और फिलिप सेगुन्दो (द्वितीय फिलिप) के सम्बन्ध में इस प्रकार की कहानियाँ कही जाती हैं मानो वे कल ही विदा हुए हैं, 'सियरा ग्वेदारमा' पर्वत की नीलाञ्जन छाया में मानो अब भी अनेक घोड़ों के खुर की धूल ओझल नहीं हुई है।

एस्कोरियल के साथ वहिर्जगत् का कोई सम्बन्ध नहीं। मैड्रिड-

पेरिस एक्सप्रेस द्वारा मैद्रिद से केवल एक घंटे की यात्रा है, किन्तु मैद्रिद की कोई असंतोष अथवा चाञ्चल्य की लहर यहाँ नहीं पहुँ-चती। द्वितीय फिलिप ने चाहा था कि अपने जीवन के शेष दिन यहाँ शान्तिपूर्वक बितायें, इन्हीं सम्राट् का जीवन वृहत् साम्राज्य रक्षा और विस्तार की खींचतान में अशान्ति से भर उठा था, किन्तु उनके संन्यास का प्रासाद आज भी शान्ति से अक्षुण्ण है। यहाँ सन्तों के उत्सव अब भी धूल-धूसरित किन्तु आडम्बरपूर्ण मठों के भीतर नियमपूर्वक पाये जाते हैं। यही यहाँ का सर्वाधिक उल्लेख-योग्य व्यापार है। सियरा ग्वेदारमा के नील चित्रपट के सामने धूसर, धूपसुरभित, उपासनानन्दित इस सौध के चारों ओर एक अननु-भवनीय सौंदर्य है। शहर भी इसी चमत्कारपूर्ण माधुर्य से पूर्ण है। यह माधुर्य मध्ययुग के इतिहास के पृष्ठों से उतरकर यहाँ रह गया है। युवराज के प्रासाद के उद्यानपथ पर छोटे छोटे बच्चे पत्थर से बंधी सीढ़ियों के रास्ते पर इस प्रकार आधा पेसेता (स्पेनिश सिक्का) मांगते हैं कि इसे भिक्षा नहीं कहा जा सकता—यह मानो भारत के कमक्षा पहाड़ पर कुमारियों का पैसा माँगना है। इस विशाल पर्वत की तलहटी में, जलपाईकुंज में जब छाया लम्बी होकर नीचे उतर आती है, जब किसान बालक अपनी बकरियाँ लेकर घर की ओर लौटते हैं, और गधों के गले में घंटे धीरे धीरे बजते रहते हैं; उस समय ऐसा मालूम होता है कि यह मध्ययुग का शहर अब भी पदवी और आभिजात्य मर्यादा से गर्वित, विचित्र वस्त्रों से सज्जित स्पेनिश अभिजातों की प्रतीक्षा कर रहा है। जो सप्त-समुद्र पारकर दुर्गम अज्ञात देश के भाग्यान्वेषियों द्वारा आहृत रत्न 'ग्वादिल किवर' नदी के किनारे 'सेविल' बन्दरगाह से इस भोगविलासहीन प्रासाद में सम्राट को अभिवादन करने आयेंगे। चारों ओर के पत्थरों से बने घर की खिड़कियाँ खोलकर नागरिकाएँ उत्सुकतापूर्वक देखेंगी। गीतार बाजरता कोई तरुणी व्याकुल हृदय से नीचे

उतरकर अपने प्रत्याशित वीर के सन्धान में रत काली कजरारी आँखें एक बार खिलखलाकर खिसक जायगी। माल्टा की बात याद आती है। वहाँ भी इसी प्रकार टेढ़े-मेढ़े पथों पर हरिणाक्षी तरुणियाँ चकित दृष्टि से देखकर खिसक जाती हैं। और स्थिराक्षी गृहणियाँ काले रेशमी शाल से गर्दन ढककर विजय गर्व से चली जाती हैं, विदेशी पथिक की वह तनिक भी परवाह नहीं करतीं।

मठ का दक्षिण तोरण जहाँ सर्वदा दृष्टि आकर्षित करता है, राजर्षि फिलिप की स्मृति जहाँ वातास में व्याप्त रहती है, वहाँ ये चपलता की कल्पना को भी न करना चाहेंगे। 'पेन्थियन' (राजाओं की समाधि-गृह) के ताबूत के संगमर्मर की असंभव उज्ज्वलता आज भी हमारे ताजमहल से बाजी मार ले जायगी। यहाँ के अन्धकारप्राय भूगृहों में पंचम चार्ल्स से लेकर प्रायः सब राजाओं की शेष भस्म रक्षित है—श्मशान की शून्यता में नहीं, ऐश्वर्य की पूर्णता में। यहाँ एक शवाधार दिखाकर गाइड ने कहा कि "यह राजा अलफान्सो के लिए था, किन्तु पिंजड़े में बन्द होने के पहले ही पक्षी उड़ गया।" इस रसिकता के साथ ही उसके दोनों नेत्र चमक उठे एवं मर्मरद्युति से उज्ज्वल इस भूगर्भ पर उसने नतजानु होकर क्षमाप्रार्थना की और वक्षपर क्रासचिह्न अंगुलियों से बना दिया। मन ही मन वह समझ गया सोशलिज्म (Socialism) पर भी राजर्षि की विजय हुई है।

इतिहास की ओर से देखते हुए भी यहाँ चित्ताकर्षक वस्तुओं का अभाव नहीं है, जिस विलासहीन कक्ष में मेज पर जिस घड़ी के सामने अक्लान्त कर्मी फिलिप साम्राज्य का कार्य करते थे वे सब उसी भाँति सजे रखे हैं। फिलिप और इंगलैण्ड की रानी मेरी की बासर-शैया और शयनकक्ष अब भी यत्न सहित सजे हुए हैं। राजदूतों के आसन मानो आज भी उनकी प्रतीक्षा करते हैं। द्वितीय फिलिप का पुस्तकागार एक समय सारे यूरोप में अद्वितीय

था, उन्होंने इसकी उन्नति के लिए कम चेष्टा और व्यय नहीं किया था। यही नहीं चित्रशिल्प के लिए वे और उनके वंशधर 'एस्को-रियल' प्रासाद में बहुत कुछ व्यय कर गये हैं। तितशियन, तिन्तो-रेत्तो और वेलास्केथ आदि के चित्रों से यह गृह परिपूर्ण था। अवश्य ही उसका अधिकांश अग्निकाण्ड और नेपोलियन की फ्रांसीसी सेना की दस्युता के कारण पृथ्वी से लुप्त हो गया है, किन्तु जो कुछ शेष है उसका मूल्य कम नहीं है।

यहाँ के तितशियन के 'शेष भोजन' चित्र और लूवरे लिओनार्दो दा विंची का 'शेष भोजन' चित्र को देख तुलना करने की इच्छा किसी भी चित्र रसिक के मन में जाग उठेगी।

शिल्पकला का एक और उल्लेखयोग्य उत्कृष्ट उदाहरण यहाँ है, वह है भीत-चित्र (दीवार पर अंकित)—पेरेग्रिन, लूई द— कार्वाथाल, कारदुच्चि और लूका जोरदानो द्वारा अंकित यीशु खृष्ट के सारे जीवन की कहानी। सूली से खृष्ट के देह अवतरण का चित्र मन में कितने करुण भाव से आघात करता है। खृष्टीय जीवनी की यह भाव वस्तु कितने ही स्थान पर कितने ही शिल्पियों की कल्पना में, कितनी ही विचित्र व्यंजना में देखी है।

जितनी यूरोपीय भाग्यान्वेषी जातियाँ वाणिज्य और साम्राज्य की आशा से मुसलमान राजकाल में भारतवर्ष आईं, उनमें 'आइ-बेरियन' पेनिनशुला के अधिवासी ही मूर्तिपूजा के विरुद्ध सबसे अधिक खड्गहस्त हुए। जिन साठ वर्षों में पोर्तगीज़ स्पेन के अधीन थे, उन दिनों भारतवर्ष में मूर्तिद्वेष बिन्दुमात्र कम नहीं था। आश्चर्य का विषय है, स्पेन में आकर देखता हूँ उस युग में ये भी कम मूर्ति-पूजक नहीं थे? एवं अब भी इनका इस विषय में कोई परिवर्तन नहीं हुआ है। सालामांका, टोलेडो, और एस्कोरियल के गिर्जों को देखकर बारबार सोचता हूँ कि हिन्दुओं की भाँति कैथोलिकों में भी साकार पूजा कितनी सुन्दर और मधुर प्रथा ले आयी थी;

पूजा के मन्दिर में कितनी धूप-गन्ध, दीपमाला, चामर व्यजन, और संध्या आरती होतीं। हमारे समान ही इनके तीर्थयात्रा और पर्व-दिवस होते, हमारे समान ही इनकी प्रणति का विचित्र विकास था। खृष्ट, त्रिमूर्त्ति, परम माता मेरी, यही इनके देवता थे, इनके चित्र और मूर्ति इनके लिए हिन्दुओं की प्रतिमाओं के समान थे, इनकी जीवन कथा कैथोलिक पुराण हैं। इनके सामने कितने नतमस्तक होकर प्रार्थना करते, पाप स्वीकार और अश्रुपात होता, दूर से 'काटिड्राल' देख कितने विनीतभाव धारण होते। एस्कोरियल के गिर्जे में सबसे अधिक मूर्तिपूजा दिखलाई पड़ी। रेनेसांस (Renaissance) युग की शिल्पकला का सर्वश्रेष्ठ अन्यतम उदाहरण इस गिर्जे की मिट्टी और पत्थर से बनी मेरी की प्रतिमा है, उसके पीछे वन और झरने के चित्र अंकित हैं, वहाँ मोमबत्ती और धूपबत्ती से हिन्दू मन्दिर का वातावरण संपूर्ण एवं सर्वांगीण रूप से उपस्थित है। फिर भी तैंतीस करोड़ देवता का स्थान ग्रहण किये हैं एक यीशु-खृष्ट।

एक खृष्ट की जीवनी ने स्पेन के समस्त लोगों के मन भर रखे हैं। कैथोलिक धर्म, उसका वाहन राजतंत्र, और स्पेन अविच्छेद्य था उसे मैं बारबार समझ रहा हूँ और विचित्र रूप से उसका प्रमाण पाता हूँ। बड़े बड़े सम्राट्, पुरातन और नूतन पृथ्वी के आहृत विपुल ऐश्वर्य देश के लोगों को दरिद्र और अनुन्नत रखकर मन्दिरों के पश्चात् मन्दिर बनाने में व्यय कर गये। देश के साधारण मनुष्यों को क्षुधार्त्त एवं तृष्णार्त्त रखकर उपासना के अनुष्ठान और उपकरण आदि सोने से मढ़ गये। याजक को योद्धा से अधिक सम्मान देकर धर्मसम्प्रदायभुक्त होने के अधिकार को आभिजात्य की अपेक्षा अधिक महत्त्व दिया। पराक्रमशाली देश को निर्वीर्य और सुस्त बनाकर जनशक्ति की हानि कर गये। उन्होंने धर्म के नाम पर देश के श्रेष्ठ वणिक् और कृषक यहूदी और मूर को

विताड़ित कर स्वाधीन चिन्ताशीलता का कंठरोध कर, देश को डुबा-कर, शान्तिलाभ की थी। इस एस्कोरियल के गिर्जा में जो सुकुमार बालक आज प्रभात में सुमधुर कण्ठ से उपासना करते हैं, उन्होंने हरद्वार के पुरोहित-बालकों के मन्दिर के चबूतरे पर साम-गान करने की बात याद दिला दी। इनका जीवन देश और समाज के दृष्टि-कोण से कितना सफल होता है ?

किन्तु इस देश का सौभाग्य कैथोलिक खृष्ट धर्म से ही आया है। इतने मन्दिर और शिल्पकला का प्रसार और उत्कर्ष स्पेन में कैथोलिक धर्म को छोड़कर और कोई कर सकता इसमें सन्देह है। यहाँ शिल्प का एकमात्र आधार और विषय वस्तु कैथो-लिक धर्म और विशेषकर खृष्ट की जीवनी थी। राजा और अभिजात वर्ग ने बहुत सम्पत्ति देवोत्तर की। अनेक शिल्पियों की पृष्ठपोषकता की, क्योंकि उन्हें लगा कि शिल्प के प्रसार से ही धर्म का प्रचार होगा। अवश्य ही यूरोप में सब देशों से शिल्प और रससृष्टि की दृष्टि से कैथोलिकों का दान विपुल एवं प्रोटेस्टेण्टों की अपेक्षा बहुत अधिक है। मध्य युग के शिल्प को देखते हुए प्रोटेस्टेण्टों ने शिल्प के निर्माण की अपेक्षा संहार ही अधिक किया है। बाक (Bach) को छोड़कर अन्य किसी प्रोटेस्टेण्ट मन्दिर संगीतकार का नाम हठात् मन में नहीं आता।

किन्तु इसके लिए स्पेन को कम मूल्य नहीं देना पड़ा। अन्य किसी यूरोपीय राष्ट्र ने देश-विदेश में धर्म प्रचार और प्रसार के लिए इस प्रकार अपना सर्वनाश नहीं किया। फ्रांस भी कैथोलिक हुआ था किन्तु उसने अपने को इस प्रकार रिक्त नहीं किया। यह मानो सर्वांग को क्लिष्ट और अपुष्ट रखकर मुख का प्रसाधन करना हुआ। इटली भी कैथोलिक था और उसने भी धर्म के लिए शिल्प की उन्नति स्पेन से कम नहीं की, किन्तु स्पेन की भाँति कैथोलिक धर्म के लिए अपने को

र्वस्व से वञ्चित नहीं किया। स्पेन ने चूड़ान्त किया, इसी-लए उसके शिल्प की विषय वस्तु में पौराणिकता नहीं, गेनिज्म (Paganism) नहीं।

आश्चर्य की बात है कि सम्राट् ने धर्मप्रवणता के आति-य्य और धर्म प्रचार के प्राबल्य में तलवार की नोक और ज्वलन्त ईंधन के प्रयोग (Inquisition) से कैथोलिक धर्म की रक्षा और प्रसार की चेष्टा की; उनका अपना शेष जीवन बिल्कुल संन्यासी के समान आडम्बरहीन और दुर्बल की भाँति असहाय था। एस्कोरियल का गिर्जा प्रासाद की अपेक्षा अधिक समृद्ध और सुन्दर है। नियति का परिहास! शेष वर्षों की अस्वस्थता के कारण प्रासाद के जिस कक्ष की दीवाल की दरार द्वारा बिछौना से उन्हें "मास" (Mass) उपासना देखकर ही तृप्त हो जाना पड़ता, वही दीनातिदीन घर आज यहाँ सबसे अधिक आकर्षण की वस्तु है।

फिलिप स्पेन के औरंगजेब थे।

(५)

मैड्रिड में भारतवर्ष की फिर याद आयी। मार्गों पर बर्लिन की सुकठिन सुष्ठु-शृंखला नहीं है, लन्दन की गति का स्रोत-प्रवाह भी नहीं है। ३१ दिसम्बर की रात्रि को पूयेर्ता-देल सल अर्थात् शहर के केन्द्रस्थल सूर्य तोरण में सबने नव वर्ष का जिस प्रकार अभिनन्दन किया, उसके बीच केवल आनन्द का उल्लास ही नहीं था वरन् मथुरा के पथ का झूल के दिन-रा हुल्लड़ भी था। पथ में चलते हुए हिस्पानी लोग इस प्रकार पथ पर इकट्ठे होकर गप्पें लड़ायेंगे मानो उनका रास्ते पर खास दखल प्रमाणित हो गया हो। यह मानो हट्टगोल का शहर है, मनुष्यों के चीत्कार को दबाकर "ओटोमैटिक ट्रैफिक" के सिगनल के प्रकाश के साथ साथ घण्टाध्वनि टन्-टन् कर उठती

हैं। स्पेन की सुन्दर राजधानी छोटी है किन्तु उसकी घोषणा पर्य्याप्त अधिक है।

विदेशी पर्यटक के निकट स्पेन को जितना सम्मान पाना चाहिए था उतना उसने नहीं पाया। उसका कारण प्रधानतः देश की अनुन्नत अवस्था, बाहर विज्ञापन का अभाव और भीतर राजनीतिक विप्लव हैं। अन्यथा पृथ्वी की श्रेष्ठ चित्रशाला के रूप में 'प्रावो' के आंगन में और भी अधिक चित्ररसिकों का समागम होता। ऐसा मालूम होता है कि 'ग्रेको', 'म्यूरिलो', 'वेलस्केथ' 'गोइया' आदि का यथोचित प्रकाश अब भी नहीं हुआ है। इसलिए 'प्रादो' के साथ भली प्रकार परिचय करना ही अच्छा होगा।

तितशियन के शिष्य और माइकेल एन्जेलो द्वारा प्रभावान्वित 'क्रीट' के सन्तान एल ग्रेको यदि केवल एक ही चित्र 'काउण्ट अगीथ की कब्र' अंकित कर शिल्प जगत् से विदा ले लेते तो भी यह जगत् उन्हें चिरकाल तक याद रखता। षोड़श शताब्दी के शेष भाग में ये शिल्पकार इटली की शिक्षा के साथ हिस्पानी अनुभव मिश्रित कर स्पेनिश शिल्प के दो भारकेन्द्र वास्तविकता और आधिभौतिकता के समन्वय और सामञ्जस्य का श्रेष्ठ उदाहरण रख गये हैं। विचारकों का मत है कि ऐसा चित्र अतीत के चित्रशिल्प के इतिहास में अभूतपूर्व था एवं भविष्य में भी असम्भव रहेगा। इसमें हिस्पानी जाति के चरित्र की माधुरी, चंचलता, छलनशीलता और तीव्र अनुभूति का जो प्रकाश मिलता है, उसे कोई भी हिस्पानी चित्रकार दिखा पाये है ऐसा नहीं मालूम होता।

आश्चर्य का विषय है, पृथ्वी के अन्यतम श्रेष्ठ चित्रशिल्पी विशेषतः प्रतिकृतिकार 'वेल्सकेथ' का नाम उन्नीसवीं शताब्दी के पहले बहुत कम विदेशी जानते थे। अथवा सप्तदश शताब्दी

के प्रथमार्द्ध का चित्राकाश उनकी तूलिका के स्पर्श से चिरमधुर चला आ रहा है। उनका क्रूश विद्ध खृष्ट का चित्र खृष्ट सम्बन्धी सब चित्रों के बीच निस्सन्देह सर्वश्रेष्ठ है। खृष्ट की जीवनी की चयनिका में इस चित्र के न रहने पर वह असम्पूर्ण रह जाती। रसवेत्ता *यह सोचते कि जीवन की यह शेष अनुकृति वास्तविक राज्य* की कल्पना के मायास्पर्श को छोड़कर बहुत आगे बढ़ गयी है।

'लासमेनिनस' अथवा 'दि फैमिली' नामक चित्र स्वाभाविक प्रतिकृति के कारण पृथ्वी का सर्वश्रेष्ठ चित्र स्वीकार किया गया है। इसमें शिल्पी स्वयं राजा चतुर्थ फिलिप और रानी 'मिरिया याना' का चित्र अंकित कर रहे हैं ऐसा देख पड़ता है। पट-भूमिका के सामने बीच में और पीछे इस प्रकार विषय विन्यास हुआ है कि शिल्पी को चित्र अंकित करते हुए देखते हैं। दूर कोई क्षीण प्रकाश खिड़की के पर्दे के अन्तराल में क्षीणतर रेखा में प्रकाशित दिखाई पड़ता है, और भी दो आलोक के चतुष्कोण हैं। क्षीणतर चतुष्कोण के बीच राजा और रानी प्रतिबिम्बित हुए हैं। दोनों ही चित्रकार की तूलिका लिए प्रस्तुत होकर आये हैं। सत्य और जीवन का एक रूपमय उद्‌घाटन समस्त चित्र में हुआ है। इसमें जिस शक्ति, सम्भ्रम और माधुर्य का परिचय पाता हूँ वह शिल्पी के अपने जीवन की चिन्तालेशहीन शान्ति का आभास देता है। सर टामस लारेंस की याद आती है—*जिसे वे आंकना चाहते हों, उसमें इतनी सफलता मिली कि* इस चित्र को 'आर्ट आफ फिलासफी' कहा जा सकता है। लूका ज्योर्दानो ने इसकी जो प्रशंसा की है उसका अनुवाद नहीं किया जा सकता। उनकी भाषा में यह चित्र—'थियोलाजी आफ पेन्टिंग' है।

सप्तदश शताब्दी के एक और श्रेष्ठ चित्रकार 'म्यूरिलो' की प्रधान वस्तु धर्ममूलक है, एवं खृष्ट धर्म को आश्रय कर ही

उसने रूप पाया है। इस विषय में उन्होंने मानव के अनुभव और प्रेरणा का जिस प्रकार सुन्दर चित्रण किया है, वह इटली के श्रेष्ठ चित्रशिल्पियों के बीच दुर्लभ है। प्रावो में उसके दो पास पास में सजे ' Immaculate Conception ' 'इमेकुलेट कन्सेप्शन' घोषणा का चित्र सर्वाधिक आकर्षक है। जिसका मूलचित्र 'लूवर' में देखा जा सकता है। इसमें रिबेरा का वर्णचातुर्य, वैनडाइक का माधुर्य और वेलसकेथ का प्राणमय वास्तविकता का समावेश और समन्वय देखने को मिलता है।

उनके पश्चात् इतनी शताब्दियों में केवल एक स्पैनिश चित्र-शिल्पी ने विश्वश्रेणी में स्थान पाया है वे हैं 'गोयो' जिन्होंने उन्नीसवीं शताब्दी की और परवर्त्ती आधुनिक चित्र शिल्प की पुनः प्राण प्रतिष्ठा की है। उनके राजवंश के चित्रों में जो अनुसन्धित्व और क्षमाहीन चरित्र विश्लेषण है उसकी तुलना कहाँ? एक गौरवमय युग की शेष संध्या में एक अस्तमान राजसत्ता की अद्भुत चित्रावली वे चित्रित कर गये हैं। नग्न चित्र के एक श्रेष्ठ उदाहरण ने उनकी ही तूलिका में रूप पाया है। जगत् उनके निकट ऋणी है, कभी विद्रूप और कभी सरलता में उन्होंने सम सामयिक स्पेन का अन्तर उन्मुक्त कर दिखाया है।

स्पेन ने नान्-कैथोलिक के ऊपर जितना अत्याचार किया, सौभाग्य का विषय है कि उतना उनके शिल्प पर नहीं किया। इसीलिए सालामांका और सेविल के गिर्जों के मिश्री कारु कार्य की चमत्कार पूर्ण मनोहरता अक्षुण्ण है—जिसका आवेदन शिल्प के छात्र की अपेक्षा रसिक के आगे अधिक स्पष्ट है। इसी लिए सेविल के 'आलकाथार' राजप्रासाद भी इतने सुन्दर मालूम पड़ते हैं। किन्तु स्पेन के खृष्ट धर्म ने कर्डोवा के 'मेथिकिता' को अक्षुण्ण सुन्दर नहीं छोड़ा। अबदर रहमान की यह मसजिद विशालता में रोम के सेन्ट पीटर्स के पश्चात् और सेविल के

गिर्जे के समान है। अपरूप श्वेत-लोहित मेहराबों की इस मसजिद के भीतर एक उच्च वेदी और अन्यान्य खृष्टान स्तम्भ बने हैं। इसीलिए सम्राट् पञ्चम चार्ल्स ने भर्त्सना करते हुए कहा था 'तुमने यहाँ पर जो कुछ बनाया है, वह कहीं भी बना पाते; एवं पृथ्वी पर जो अतुलनीय था उसे तुमने ध्वंस किया है।' ४७०० सुरभित तैल दीपों से आलोकित स्वर्ण और स्फटिक की स्तम्भमय मेहराबों के निकट जब उन्नीस तोरणों से मूर लोग उपासना करने आते थे तो वह दृश्य कैसा लगता होगा, इसकी केवल कल्पना ही की जा सकती है।

(६)

स्पेन उत्सवों का देश है। इसके पथ, घाट पर वर्ण वैचित्र्य मनोभाव का विकास और अन्तर का वहिर्मुखी उल्लास मिलता है। सेविल के राजपथ के प्राणवान् और वैचित्र्यमय दृश्य के बहुत चित्र और वर्णन हम पाते हैं। इतना ही क्यों इसका विशेषत्व गीतनाट्य के सुर में भी झंकृत हो उठा है। मोत्सर्ट के 'फिगारो' और 'डान जोभान्नि', रस्सिनी का 'बारबियेर दि सिविल्ला' और बित्स का 'कारमैन' गीति नाट्य की विचित्र पोशाक से सज्जित नागरिकों और ग्रामवासियों को पृथ्वी के द्वितीय विशाल गिर्जा के चित्रपट के सामने आज भी देखा जा सकता है। ऑपेरा (नाट्यगृह) केवल नाट्यशाला या गीत-शाला नहीं है। तिसपर भी गीतिनाट्य की विशेषता यह है कि इसका सफल अनुकरण अथवा गीति के एकान्त मूल्य की बात सबसे अन्त में आती हैं। किन्तु अमरता के विचार से गीत का मूल्य ही सबसे अधिक है। पर अमरता के लिए ऑपेरा अपेक्षा नहीं कर सकता। तथा समसामयिक गान के इतिहास के प्रांगण में स्थान पाने के लिए जो कुछ गीत मूल्य मिले उसीको प्राप्त करके यह सफलता सहित चल सकता है,

अन्य पक्ष में नाटकीयता का प्रयोजन अत्यधिक है एवं मंच के उपयुक्त गुण न रहने पर कोई ऑपेरा नहीं चल सकता।

जब ऑपेरा की यवनिका हमारे प्रतीक्षमान एवं सप्रशंस दृष्टि के सामने आती है तभी विचित्र दृश्य सज्जा और दृश्य-पट हमारे मनश्चक्षु के सम्मुख नाटकीयता युक्त रंग प्रवण मानव की शोभायात्रा की तरह उद्भासित होता है। साधारण और संगीत के कर्णहीन दर्शकों के लिए गीत के उत्कर्ष का कोई प्रयोजन नहीं। सुर का माधुर्य जहाँ तक ले नहीं जा सकता, दृश्य वैचित्र्य उसे वहाँ उड़ा ले जा सकता है।

हिस्पानी उत्सव प्रवणता मेद्रिद के समान की सुकठिन नियमनिष्ठा, बार्सिलोना और बेलेंसिया की अवसरहीन वणिक् सभ्यता एवं विप्लव की सूचना को भी मात कर देती है। विशेषतः 'सेभिल' में जो ग्राम्य जनता बैलों की लड़ाई, मेला, खेल इत्यादि देखने आती है उनकी विचित्र प्राचीन प्रथा, पोशाकों की बहार, रुचिविशुद्ध रसिकता एवं मार्जित व्यवहार ने ऐति-हासिक 'अन्दालूसिया' को अब भी जीवित रखा है। सेभिल की तरह ऐसा उत्सव और कहीं नहीं होता—विशेषतः ईस्टर के समय। प्राचीन सेभिल की टेढ़ी-मेढ़ी छोटी गलियों में अब भी मूरीय छाप दिखलाई पड़ती है, साधारण होटल की भोजनशाला भी मूरीय कारुकार्य से सज्जित है। गलियों के भीतर, ट्राम के रास्ते के बगल ही जो विस्तृत और सुन्दर 'पाशिओ दि लास् दिलिथियास्' नामक 'बुलभार' है वह अपरूप सौंदर्यमय और मानो अलीक है। सेविल के अरब बनिये, काली पोशाकों से ढके संन्यासी, एवं घमंडी 'मातादोर' के साथ उनका मेल नहीं होता।

ग्रानाडा के 'अलहम्ब्रा' में भी ठीक इसी प्रकार का आभास पाता हूँ। ऐश्वर्य और कारुकार्य में अलहम्ब्रा प्रासाद शाहजहाँ

के आगरा-दुर्ग की याद दिलाता है। किन्तु यह और भी अधिक प्राचीन है; काल की अंगुलियों की छाप ने मानो इसे और भी अधिक अननुभूत आकर्षण दिया है; और जेनारिलिफ के उद्यान के समान आगरा-दुर्ग में कोई उद्यान नहीं है। अनवद्य मूरीय कारुकार्य खचित यह प्रासाद जिस पहाड़ के ऊपर है, वह मानो स्पेन के बीच ही नहीं है, इसके चारों ओर के अलिन्द से जो दृश्य देखने को मिलता है, 'नित्य तुषारा' 'सियरानिवादा' चिरकाल के प्रहरी के समान सम्मुख खड़ा है और पर्वतगुहा में जो जिप्सी रहते हैं वे भी मानो इसके परिपार्श्व में सत्य हैं और शेष सब मिथ्या हैं, सौभाग्य का विषय है, स्वल्पालोकित पहाड़ी गिरिपथ से यहाँ चढ़ना होता है, बीसवीं शताब्दी की मोटर गाड़ी की रूढ़ आत्म-घोषणा अलहम्ब्रा की संध्याकालीन तन्द्रा को भंग नहीं करती।

यहां के दैनिक जीवन में एक चिन्ताहीन उल्लास और आन्तरिक उच्छ्वास है, जिसे देख स्पेन के विप्लववाद और संघर्ष को सत्य मानने में कठिनाई होती है। बार्सिलोना 'रामब्ला' राजपथ पर प्लेन वृक्ष की छाया में बन्धु-बान्धव के दल हंसते हुए कौतुक परिहास के बीच जिस प्रकार घूमते फिरते हैं उससे दैनिक समाचार पत्रों का बार्सिलोना नहीं कहा जा सकता। पैरिस के 'शाज़ेलिज़ी' राजपथ की सभ्यता की कृत्रिमता यहां नहीं है। ये सहज भाव से विदेशी को बन्धु मान लेते हैं मानो इस राजपथ और बैलेन्सिया के उत्सव के मेले फेरिया में कोई प्रभेद नहीं। मार्ग-मार्ग में धूप की आभा में सुन्दर कमल कुञ्जों ने अन्तर के द्वार मुक्त कर दिये। स्पेन की आन्तरिक अभ्यर्थना दूसरों को अपना लेती है। इसी आन्तरिकता के साथ प्रादो में एक शिल्पी ने अपने बहुत श्रम

से अंकित 'इम्मेकुलेट कन्सेप्शन' घोषणा चित्र की प्रतिलिपि के लिए इस विदेशी की कविता को उद्धृत किया है :—

तुम आँक जाते हो क्षणिक का भावना विकास,
असीम की एक कणिका,
हम रख जाते है चिरदिन को हृदय उच्छ्वास
प्राण में पाते हैं सुन्दर का लिखा ;
कितना कह उठते हो तूलिका की नीरव भाषा में
अपनी कल्पना की छाया
हम भी देखते हैं वहीं बार बार आनन्द की आशा में
जिस स्वप्न ने पाई यहाँ काया।

स्पेन का स्वप्न

यूरोप के अन्य देश अतीत को जीवित रख रहे हैं, किन्तु स्पेन अतीत के बीच जीवित है। उनका उद्देश्य अतीत को सजा कर गौरव अनुभव करने, वर्तमान को देखने और विदेशी को वश में आकर्षित करने के लिए है। स्पेन अतीत का स्वयं मुखर प्रतीक है, मूक साक्षी नहीं, उसमें जो अपना अस्तित्व है वह वर्तमान को मिला देता है और स्वदेश के प्राचीन रूप का आभास देता है। स्पेन का अतीत जैसे अपने लिए ही जीवित है, लोगों को दिखलाने के लिए नहीं। विदेशी पर्यटक के लिए वह इतने दिन तक व्यस्त भी नहीं था। देश भ्रमण और अवसर विनोद के लिए कुछ वर्षों से विदेशियों की दृष्टि इस पर पड़ी है। यूरोप के सभी देशों में बाहर के दर्शकों को आकर्षित करने के लिए टूरिस्ट एजेन्सी की सृष्टि अनेक वर्षों से हो चुकी है, किन्तु 'पात्रो नातो नैथनल देल तूरिसमो' बहुत दिन हुए प्रतिस्थापित नहीं हुआ है।

जीवन के विकास में अतीत का अस्तित्व और दावा सब को ढककर उठना चाहता है। विभिन्न प्रदेश अब भी अपने चार सौ वर्ष पहले खोये हुए स्वातन्त्र्य का विसर्जन कर एक नहीं होना चाहते। उसके लिए स्पेन के अमर वीर राजा फर्डिनेण्ड

और फिलिप की चेष्टा और आकांक्षा को व्यर्थ करने में ये बिन्दुमात्र कुण्ठित नहीं। फिलिप के समग्र स्पेन को एक धर्म-राज्य में बांधने की चेष्टा में प्रदेशों की प्रांतिक स्वाधीनता के कौशलपूर्ण हरण की बात ने इनके हृदय में दावाग्नि के समान जलकर स्पेन के प्रति उनके विराट दान की मर्य्यादा को क्षुण्ण कर दिया है। विशेषकर कैटलिन प्रदेश अपने राजनैतिक स्वा-तन्त्र्य को सरक्षित रखने के लिए इतने दृढ़ प्रतिज्ञ हैं कि स्पेन राष्ट्रतन्त्र का भग्न होना यहाँ से ही प्रारम्भ होगा।* लन्दन और पेरिस जितने प्रिय इंगलेण्ड और फ्रांस के लिए हैं उतना मैद्रिद स्पेन के लिए नहीं। बार्सिलोना, सेविल और वेलेन्सिया मैद्रिद के साथ अनेक विषय में प्रतियोगिता करते हैं। राजनैतिक प्रभाव और प्रतिष्ठा के लिए बार्सिलोना केवल स्पेन का बम्बई होकर क्षान्त नहीं, उसकी चिन्ता और गति स्वतंत्र है। मैद्रिद की वह उपेक्षा करने में भी पीछे नहीं है। अतएव मैद्रिद को स्पेन की राजधानी कह देने से ही सब कुछ नहीं कहा जा सकता। उसे इस समय भी शहर 'थिउदाद' (Ciudad) नहीं कहा जाता है, वह केवल 'villa' (गांव) है।

किन्तु यह 'विला' सार्थक नाम है। इसके चारों ओर के गिरि श्रेणी शोभित पारिपार्श्विक दृश्य इतने सुन्दर है कि 'वियना' को छोड़कर सम्भवतः और कहीं तुलना करने को नहीं मिलती। कहा जाता है कि 'वियना' पूर्व और पश्चिम में संगीत, उत्तर में नृत्य, और दक्षिण में प्रणय से घिरा है। मैद्रिद के सम्बन्ध में भी इस प्रकार के किसी प्रवाद की रचना कर लेने से प्रवाद की सार्थकता होती। चारों ओर से यह शहर सौन्दर्य से घिरा हुआ है, राजप्रासाद में दृश्य देखे जाते हैं उन्हें एक छोटी जनाकीर्ण

*स्पेन के गत आन्तरिक युद्ध में वस्तुतः यही हुआ।

राजधानी में देखने की बात पर विश्वास करना कठिन है। पासिओ देल प्रादो के रमणीय राजपथ पर घूमते हुए यह स्थान कोलाहल मुखर, ट्रेड यूनियन संकुल शहर नहीं कहा जा सकता। फ्रेंको विप्लव से पहले यहाँ जितने श्रमिक संघ और समाजवादी संघ थे उतने रूस को छोड़कर और किसी देश के शहर में नहीं हैं। शहर के उपकण्ठ में ही सेना शिविर है, ग्राम-पथ को कलकत्ता का मछुआ बाजार समझ लेने में विशेष भूल न होगी। तथापि यह शहर विराम के लिए अमरावती और चित्त प्रसन्न करने के लिए प्रमोद कानन है। बैंक बस्ती को छोड़ और कहीं पर उद्दामगति का औद्धत्य और ध्वस्तवागीशता का चिह्न नहीं। इस भोजन-विलासी के तीर्थ में साधारण होटल में भी नव-पर्व का भोजन उपभोग करते हुए कितनी बार मन में हुआ कि लंदन के बदले यहाँ के विश्वविद्यालय का छात्र होता तो अच्छा होता। यह होने पर लन्दन के ३१ दिसम्बर की मध्यरात्रि में नव-वर्ष के उद्दाम नृत्य से अभिनन्दन करने का दृश्य सर्वापेक्षा बड़ा न लगता। बारह घंटाध्वनियों में प्रत्येक के साथ एक-एक अंगूर मुख में डाल नव-वर्ष को इसी सुन्दर सरस भाव से उपभोग करने का स्वप्न देखता। यूरोप की वर्तमान सभ्यता को विकास के प्रथम लक्षण के बाहर पृथ्वी के सम्बन्ध में ज्ञानाहरण की चेष्टा में देखता हूँ। पन्द्रहवीं शताब्दी के यूरोप की विराट् स्वर्णमय कल्पना का केन्द्रस्थल भारतवर्ष था। उसके आविष्कार की चेष्टा और उसके फल-स्वरूप अमेरिका का आविष्कार स्पेन का यूरोपीय सभ्यता को सर्वश्रेष्ठ दान है। यह कितना बड़ा है इसी बात से समझा जा सकता है कि वर्तमान पृथ्वी यूरोप का आविष्कार और मानव सभ्यता को दान है। हमारी सप्तद्वीपा वसुन्धरा के सम्बन्ध में एक चमत्कृत धारणा अवश्य थी; पेरू में रामलीला के समान

उत्सव और मेक्सिको में गणेश की मूर्त्ति की प्राप्ति का उदाहरण देखकर भारतवर्ष से अमेरिका के गमनागमन के प्रमाण की चेष्टा भी हुई है। किन्तु इन सब का मूल्य व्यावहारिक विज्ञान सम्मत भौगोलिक ज्ञान के हिसाब से कुछ भी नहीं है। केवल अमेरिका आविष्कार की स्मृति ही यूरोप को कोलम्बस और स्पेन के निकट चिरकृतज्ञ रखेगी। पन्द्रहवीं शताब्दी में हिस्पानियों की अपेक्षा अधिक दुस्साहसी अभियान कोई नहीं कर सका। समस्त पृथ्वी से धनरत्न आहरण, सुचारू रूप से साम्राज्य गठन और शासन व्यवस्था करने में स्पेन अतुलनीय था। पोप के निर्देश अनुयायी ने नूतन आविष्कृत पृथ्वी को पूर्व और पश्चिम दो भाग कर पोर्तुगाल के साथ बाँट लिया और इस एक मात्र प्रतिद्वन्दी पोर्तुगाल को भी साठ वर्षों तक अपने अधीन रखा। आर्मेडा ध्वंस और ओलंदाज स्वाधीनता युद्ध के आगे तक स्पेन की समर पटुता अतुलनीय थी। स्पेन के वे दिन भी नहीं और गौरव भी नहीं। फिर भी लोगों का मन विपुल धन साम्राज्य के अधिकारी के समान इस समय भी दिलदरिया है। इस बात में साधारण लोग बात-बात में डून की हाँकने पर भी वह निष्फल वागाडम्बर-सी हास्यकर नहीं सुन पड़ती; यह मानो अतीत की स्मृति की करुण झंकार है।*

स्पेन में वर्ण समस्या कभी नहीं थी, इस समय भी नहीं है। पन्द्रहवीं और सोलहवीं शताब्दी में यहूदियों और मूरों पर जो अत्याचार हुए उनके मूल में कैथोलिक धर्मान्धता थी, वर्ण नहीं। फ्रांस ने जिस प्रकार अफ्रीकी फ्रांसीसी प्रजा को सैन्यबल

*सेविल के Archivos des Indios में भारतवर्ष के इतिहास का एक असम्पूर्ण भाव से लिखे अध्याय का उपकरण है। क्या कोई पोर्तुगीज और स्पेनिश ज्ञाता भारतीय नहीं है जो इससे ज्ञान आहरण कर इस अध्याय को पूरा करे?

में स्थान और देश के प्रधान मंत्री तथा सेनापति होने तक के जो कानूनी अधिकार दिये थे, स्पेन ने भी वही दिये थे। अफ्रीका में स्पेन का विराट् सैन्यदल है। स्पेन में कोई अश्वेतकाय व्यक्ति उद्धत कौतूहल अथवा आघातप्रवण मन्तव्य न जगाता हुआ मार्ग पर घूम फिर सकता है। नीग्रो श्वेतकाय बालिकाओं के साथ नाच सकते हैं, उनके साथी हो सकते हैं। उससे किसी गड़बड़ की सृष्टि नहीं होती। किन्तु इससे स्पेन की आपत्तियाँ भी बढ़ गईं। लेटिन अमेरिका में एक वर्णसंकर जाति उद्भूत हुई है जिसमें हिस्पानियों के दोष अधिक मात्रा में पाये जाते हैं। स्पेन के अधःपतन का एक ऐतिहासिक कारण जातीय विशुद्धि की रक्षा न करना है। उसके प्राच्य साम्राज्य के ध्वंस का भी यह एक प्रधान कारण है।

अपने को एक दिन के लिए भी अपरिचित विदेशी अथवा अप्रत्याशित अतिथि की भावना नहीं होती, विदेशी इस देश में अवहेलित नहीं होता, असुविधा में नहीं पड़ता, इस प्रयास का परिचय कई बार पा चुका हूँ। सालामांका में जब शेष रात्रि को पहुँचने के पश्चात् सहसा तुषारपात के कारण दूरवर्त्ती होटल में न जा सका और स्टेशन के 'कैन्टिन' में काफी का गिलास हाथ में लेकर कोयले की आग के पास बैठकर सारी रात बितायी, तब इस विदेशी का साथ देने के लिए गृहस्वामी और गृह-स्वामिनी ने तुषारपात की रात को गरमशैया के आह्वान की उपेक्षा कर गल्प और हास्य-कौतुक में सारी रात काट दी। शहर की प्राचीनता और दर्शन योग्यता के विषय में वे उपभोग्य गल्प करने लगे। जो दूर का विदेशी इतनी दूर से सालामांका का गिर्जा और विश्वविद्यालय देखने आया है वह जिससे इनके सम्बन्ध में खूब अच्छी धारणा लेकर जाये इसके लिए उनके कितने वर्णन और चेष्टाएँ हुईं। सेविल में केवल पथ

की बातचीत से कानून के एक छात्र ने विदेशी छात्र का आत्मीय भाव से साथ दिया, सारे दिन अन्तर्जातीय प्रदर्शनी का शहर, डान किकते (Don Quixote), के लेखक की स्मृति, सरोवर, ऐश्वर्यमय राजप्रासाद 'आलकथार' (Alcazar) दिखाते घूमा और संध्या के समय अपने घर पर निमंत्रित करना चाहा। ग्रानाडा से कर्दोवा के दीर्घ मोटर पथ में जलपाई-कुञ्ज में ढके पर्वत के सानुदेश में घूमते हुए मोटर चलाने के समय सब आरोहियों से कितनी बातें हो गयीं जिसमें माधुर्य और आन्तरिकता की छाप मन में बिना पड़े नहीं रह सकती। अथच कितनी भिन्न प्रकार की शिक्षा के लोग वहाँ पर थे। कितने समय तक कितने शिक्षित भद्रों ने—बेकार नहीं—अयाचित् भाव से साथ दिया, अनेक दृष्टव्य दिखलाये, मानो बहुत दिनों का परिचय हो। वैलेन्सिया से बार्सिलोना की ट्रेन जब नील भूमध्य सागर के जल से विधौत शिलाओं के अनुपम दृश्य के बीच से जा रही थी, तब बार्सिलोना के एक प्रतिष्ठावान् गायक ने मन के आवेग में गान सुना दिया—'हे morena', अर्थात् 'बादामी रंग के मेरे बन्धु'। अनेक देशों में व्यावहारिक बन्धुता पा चुका हूँ, यहाँ पाई है आन्तरिक सहृदयता।

यहाँ भारतवासी के लिए विशेष रूप से स्पेन भाव जगत् में अपना जैसा ही मालूम पड़ता है। यहाँ मन की हँसी अधर प्रान्त से न मिलकर झलमलकर आत्मप्रकाश करती है। यहां कोई विरक्ति को भद्रता से ढककर 'दैटस आलराइट' नहीं कह बैठता, अथच भारतवर्ष के समान आन्तरिकता की बड़ाई कर हजारों अप्रिय बातें मुंह से नहीं निकाल देता। इनकी सामाजिकता के बीच एक सुष्टु भद्रता है, जो अन्तर को आकृष्ट करेगी ही। केवल इतना ही नहीं; समय असमय पर प्रवासी मन असतर्क क्षण में अपने देश के लिए धावित होने का सुयोग पाता

है——ऐसे ही एक चित्रपट के सामने वह मन जाग उठा। जो अश्वतरयान धूल-धूसरित राजपथ पर अकारण खड़ा है, जो जनता हाथ मुख के भावों की अभिव्यक्ति दिखाकर शोरगुल करती है, पथ पर जाते हुए सहसा जो घनकृष्ण केशराशि मंच का आभास देती और जो नेत्र-तारिका बिजली से चमक जाती है, वह सब मिलकर मन को उतावला कर देते हैं, और कई हजार मील के दूरत्व को निमेष में लुप्त कर देते हैं।

(२)

दिशा दिशा में इस जाति की उत्सव-प्र[illegible]ता का प्रमाण पाता हूँ। एवं ऐसा जान पड़ता है और किसी देश ने उत्सव की दृष्टि से प्राचीन और नवीन दोनों को इस व्यापक भाव से ग्रहण नहीं किया। इस दृष्टि से अपने देश की अवस्था अत्यन्त शोचनीय हो जाती है। पश्चिम के भावस्रोत के आवर्त्त में पड़कर हम अपने प्राचीन उत्सवों को भूल रहे हैं अथवा वितृष्ण-नेत्रों से देखते हैं यद्यपि देश का रंग हमारे मन में कोई रंग नहीं लगा पाता। दूसरी ओर हम सारे पाश्चात्य आमोद-प्रमोद ग्रहण नहीं कर पायेंगे। यथा, बालरूम के नाच को उसकी आनन्द-दायक सामाजिकता और बहुतों को उस आनन्द के प्रत्यक्ष भागी-दार करने की शोभनता के होने पर भी भारतवर्ष ग्रहण नहीं कर पायेगा। इस प्रकार के और भी उदाहरण दिये जा सकते हैं। उसके विपक्ष में सिनेमा, फुटबाल आदि की बात उठायी जा सकती है। किन्तु मैं केवल उन्हीं अनुष्ठानों की बात कर रहा हूँ जो सम्पूर्ण समाज को आनन्द के बीच खींच लाते हैं। इस दृष्टि से स्पेन बहुत अधिक सजीव और सक्रिय है, पुराने उत्सवों में से एक को भी नहीं छोड़ा है, और नयों को सादर ग्रहण कर लिया है। Zazz का प्रचलन खूब हुआ है किन्तु castinet को किसी ने उठाकर फेंक नहीं दिया।

विख्यात और अति प्राचीन 'बुल-फाइट' वर्तमान काल की रुचि के अनुसार निष्ठुर होगी ऐसा सोच उसमें थोड़ा परिवर्तन कर दिया है। किन्तु 'टेरस' के नाम से यह पहले के समान ही उल्लसित हो उठते हैं, 'मातावोर' का सम्मान अभिजात-महल में अब भी अक्षुण्ण है। श्रेष्ठ वृषयोद्धा का सम्मान किसी सेनापति के सम्मान से कम नहीं। अभिजात सुन्दरियाँ भी इनसे परिचय करने के लिए उत्सुक और बात करने के लिए उत्फुल्ल रहती हैं। एक और जातीय उत्सव वार्षिक मेला (फेरिया) है। इन मेलों में स्पेन के प्राणों का जो परिचय पाता हूँ, वह भारत के खूब ही निकट आ जाता है। नागरदोला पर्यन्त ठीक है, और है उसी धूल धूसरित कोलाहल मुखर जनाकीर्ण पथ पर द्रव्य सम्भार। सब मिलकर हैं प्राण के विचित्र उल्लास, प्रचुर वर्ण-समृद्ध और आडम्बरमय। दुर्लभ अरब की गन्धद्रव्य से लेकर मूरीय कारुकार्य खचित छुरिका तक जो भी मध्ययुग के सम्बन्ध रोमान्टिक कल्पना को चञ्चल कर सकता है वह सब यहाँ सुरुचिपूर्ण ढंग से सजा हुआ पाया जा सकता है।

जीवन का स्रोत यहाँ गम्भीरता की अपेक्षा प्रसार के लिए अधिक बहता है। नारी प्रगति यहाँ अब भी अधिक दूर तक नहीं गयी इतना ही क्यों पर्दा न होने पर भी अभिजात और दरिद्र सम्प्रदाय के अतिरिक्त अन्यान्य श्रेणियों में नारी-जीवन अनेक प्रकार से अवरुद्ध था। उन दिनों में आधुनिकाओं के भाग्य में निन्दा और सामाजिक असुविधा का भय खूब था। युगल-नृत्य का प्रचलन बहुत कम था। इस युग में यूरोप के सभी देशों में नारी स्वाधीना हो गयी हैं, और उनका जीवन बहिर्मुखी हो गया है। किन्तु हिस्पानी-कांड अन्य प्रकार का है। स्पेन ने युगल-नृत्य यदि ग्रहण किया तो उसे 'ओलम्पिक' प्रतियोगिता में खड़ा कर दिया। इस देश में नाच इतना लालित्यमय एवं

मृदुमधुर हैं, किन्तु इससे वे क्षान्त नहीं। मैद्रिद का वार्षिक 'मेराथान' नाच जिस प्रकार के समारोह के साथ सम्पन्न होता है वह मानो एक प्रकार का जातीय उत्सव है। एक हज़ार घंटा जो युगल अविश्रान्त नाच सकते हैं वे विपुल पुरस्कार पायेंगे। रात्रि के पश्चात् रात्रि तक आलोक, उज्ज्वल एवं वाद्य मुखर सभा में दर्शक आयेंगे, कोलाहल होगा, किन्तु उनके बीच भी इनके नेत्रों के पर्दे पर अरब की एक-सहस्र-एक रजनी के समान एक-एक रात्रि नूतन मोह और आवेश ला देगी। नर्त्तक और नर्त्तकियों के दल नींद से आच्छन्नप्राय हो जायेंगे, फिर भी मुख का प्रसाधन सर्वदा ठीक रखना चाहते हैं। इनके समान चूड़ान्त् क्रिया यरोप में कोई नहीं कर सकता। सिनॉ-रिटायों (महिलाएँ) के देश में युद्ध की आवश्यकता पर यदि पुरुषों का आह्वान होता है, तब यह इंगलैण्ड के समान आफिस और युद्ध के साज-सरंजाम के कारखानों में पुरुष का स्थान लेकर निवृत्त नहीं होतीं; राजपूतानियों के समान जौहर में आत्माहुति न देकर रणक्षेत्र में पुरुष की पार्श्ववर्त्तिनी होकर पुरुष का स्थान ग्रहण करेंगी। हिस्पानी कोमलांगी प्रमदाएँ आवश्यकता पड़ने पर आसानी से पुरुष के प्रमाद को भी हटा सकती हैं।

दैनन्दिन जीवन के बीच ये एक सुकुमार स्वप्न की सृष्टि करती हैं जो चिरकाल से हमारा कैशोर कल्पना और यौवन का अन्वेषण है। नित्य की तुच्छता को ये मानो एक जादू की लकड़ी के स्पर्श से उज्ज्वल और सार्थक कर देती हैं,—जीवन के उच्छल मुक्त-स्रोत में, भावनाहीन कौतुक प्रमोद में, सुमधुर गीत-वाद्य में और मार्जित अथच सहज रुचि विकास में। साधारण होटल की भोजनशाला में भी भोजन के अन्त में अंगूर पर्व चलेगा, कक्षान्तराल से गीतार की मादकतामय मृदु मूर्च्छना तैरती आयेगी, मूरीय कारुकार्य खचित दीवाल पर दाविंशी अथवा तितशियन के

शेष भोजन के चित्र की प्रतिलिपि रहेगी, टेबल के आवरण सम्भवतः मूर विशेषत्व के सूचक नीलवर्ण के होंगे। तब धीरे धीरे स्निग्ध आलोक के बीच मानस चक्षुओं में अलहम्ब्रा के मर्मर स्वप्न उद्भासित हो उठेंगे, अथवा सारे दिन के दर्शन क्लान्त नेत्रों को आराम से मूँदकर विलासप्रिया सम्राट् महिषियों के लीलानिकेतन आलकथार की शिल्पकला का पुनः निरीक्षण करने लगेंगे। संध्या के आसन्न अन्धकार के घनीभूत होने के पहले ही उज्ज्वल नीलाकाश पट पर बार्सिलोना का प्रासाद विचित्र वर्ण आलोक के सम्पात से मनोहर हो उठेगा, प्लेन वृक्ष से छायाच्छन्न जो पथ धूप की तेजी से मधुर हो उठा था वही स्निग्ध शान्ति से भर जायगा।

स्पेन में मैं ठीक समय पर आया हूँ। शीत के प्रकोप में अब भी कुञ्ज-कुञ्ज में धूप में संतरे का रंग बड़ा सुन्दर लगता—यद्यपि जानता हूँ कि यह कुञ्ज वसन्त में ज्यादा प्रफुल्लित हो उठता है। मैं परिणत पत्र पुष्प सम्भार के विकास बीच कोई देश नहीं जाना चाहता, कारण उस समय हर देश सुन्दर हो उठेगा। मैं वसन्त का आभास भविष्य की सम्भावना की सूचना चाहता हूँ। मैं कुंज-पथ में इन सुन्दर संतरों की नवीन पल्लव शोभा और परिपूर्णता के रस से आनत प्रथम कैशोर के सौन्दर्य से आकुल अर्धपक्व फलों के गुच्छे चाहता हूँ। इस मिट्टी में स्निग्ध स्पर्श है, भीरु-कम्पित वायलेट् के समान अनिर्वचनीय सुकुमारता है, सरस नवीन प्राण हैं। आवेश में नेत्र मूंद कर एक सुन्दरतर जगत् का आभास पाता हूँ, जो देश पृथ्वी के मान-चित्र में नहीं केवल कविता और कल्पना में है।

मदिरा के साथ मेरा कोई सम्बन्ध नहीं फिर भी मदिर आवेश अनुभव करता हूँ। वैलेन्सिया के नील समुद्र सैकत के कमलाकुञ्ज का मृदु सौरभ मुझे पागल कर रहा है। देहबन्धन मानो शिथिल और मुक्त हो रहे हैं। जीवित रहने का कैसा अनिर्वचनीय उल्लास, कैसा अपरिसीम आनन्द।

प्राण और प्रकृति

चित्र में भी इतनी कविता थी कौन जानता था।

केवल एक प्राण चञ्चल किशोरी एक पैर बरफ पर रख-कर अन्य पैर वंकिम भंगी से उठाये तुषार समुद्र के बीच से स्केटिंग करती चली जा रही है—उसके पीछे चांद निकल रहा है, आनन पर मोहक हास है, चरणों में गीत की लीला है, हाथ के संकेत में सुदूर का आह्वान है। और

"अंग का अपरिपक्व लावण्य ढल ढल कर
पृथ्वी पर बहा जा रहा है"

नीचे लिखा है—मेरे साथ स्विट्ज़रलैण्ड आओ।

यह आह्वान मेरे स्वप्नों के साथ घुलमिल गया।

गरम देश के लोग सूर्य की ओर देख दिन काटते हैं। ब्राह्ममुहूर्त से घर में प्रकाश का आना जान लेते हैं, और अन्धकार इस प्रकार से विदा हो जाता है जैसे मानो बहुत देर से सोते हुए एक दम जग पड़ा हो। कम विलीयमान उषा और संध्या हमारे यहाँ नहीं है। सूर्य कब रंगीन से पीला हो जायगा मालूम ही नहीं होता। फिर सूर्य की ओर देख, अनुमान कर हम समय निरूपण करते हैं। भाग्य से सूर्य मामा हैं, न होने पर ग्राम के लोग किस प्रकार अंगुली उठा और सूर्य कहाँ है

यह दिखाकर समय बतायेंगे? किन्तु स्विट्ज़रलैण्ड में प्रभात की माधुरी अन्यरूप से प्रकाशित होती देखी। यह भी समझ गया कि सूर्य को देखकर समय नहीं बतलाया जा सकता। प्रथम प्रत्यूष से लगातार संध्या तक बर्फ पर केवल प्रकाश की झलमलाहट देखकर कौन समय बताने में समर्थ हो सकता है।

इस देश के आकाश में नीलिमा म्लानता से मुक्त हो जाती है। धूल का थोड़ा भी आभास नहीं, धुआँ नहीं, अन्तरिक्ष का कोई अलक्ष्य व्यवधान आकाश के सूक्ष्म सौन्दर्य को थोड़ा भी नहीं ढक पाता। मन में भी ऐसी मुक्ति का आस्वाद अनुभव करने लगा। उषा के आह्वान से उज्ज्वल नील आकाश के एक कोने में एक पहाड़ के पीछे सूर्य जब निकलने को होता है, उसके अरुण रथ की आभा अन्य कितने ही पहाड़ों को छू लेती है, और प्रत्येक चोटी पर बर्फ की सफेदी लाल अबीर का गोला बन जाती है। सुर-झंकार, तरंग-भंग और सौरभ-विस्तार की तरह रंग बिखर बिखर पड़ता है; मन पर उसका प्रतिफलन उसे प्रफुल्लित कर देता है। ऐसे समय जब नींद खुलती है तो आनन्द बिखेर देने वाला प्रशस्त स्थान स्विट्ज़रलैण्ड का आकाश छोड़कर और कहीं नहीं मिलता। असह्य आनन्द सुदूर-प्यास की वेदना सा-लगता है।

उस मुक्त आकाश में मेरी आत्मा मुक्त होकर बच गयी। लघुपक्ष पक्षी के समान स्वेच्छापूर्वक घूम सकेगी, शैल भृंग के संगीत स्रोत में अपने को डुबा सकेगी।

'अभ्र भेदी तुम्हारा संगीत अनुदात्त उदात्त स्वरित
तरंगों में उठता गिरता बह रहा है प्रभात के द्वार से
संध्या के पश्चिमी नीड़ की ओर
दुर्गम दुरूह पथ पर कौन जाने किस वाणी की खोज में।

केवल मेरी ही नहीं बल्कि सकल मानवात्मा की इस आकाश

के नीचे मुक्ति हो जाती है। इतिहास में भी इसका प्रमाण मिलता है। शिल्पी, वाग्मी, संस्कारक, देश प्रेमिक ने भागकर आवाहमान काल से इस देश की गोद में आश्रय पाया है। स्विट्ज़रलैण्ड में न रहने पर कालविन के समर परायण प्रोटेस्टेन्टिजम की सृष्टि सहज में न होती, ग्रोटियस के अन्तर्जातिक विधान के मूलसूत्र की प्रेरणा न होती; रूसो की साम्य-मैत्री स्वाधीनता की वाणी जैसे यहाँ आदर्श रूप में जाग उठी थी, मैज़िनी की नव्य् इटली की परिकल्पना ने यहीं रूप धारण किया था। ऐसा ही क्यों अभी हाल के रूस विप्लव का बीज भी स्विट्ज़रलैण्ड की भूमि पर ही पहले-पहले बोया और रक्षित हुआ। पर्वत, अरण्यमय स्वाधीनता की लीला भूमि इस देश के न रहने पर रूस के विपुल राष्ट्रयंत्र और राजतंत्र को व्यर्थ कर लेनिन संसार में नूतन मतवाद और राजपाट की प्रतिष्ठा न कर पाता। यह देश अत्याचारियों का चक्षुशूल और सताये हुओं का आश्रय है। चारों ओर चार प्रबल विवद्मान राष्ट्रों को संस्पर्श कर संघर्ष से इस देश ने अपने को बहुत कुछ बचा रखा है। इसके न रहने पर पृथ्वी के इतिहास के अनेक अध्याय राजनीति के अनेक विवर्त्तन बाकी रह जाते। अथच इसकी अपनी शक्ति कितनी है? तीन भाषाएँ और तेरह प्रदेश (कैण्टन) इसको खण्ड खण्ड किये हैं, फिर भी कितनी शताब्दियों से यहाँ गृहविवाद अथवा आन्तरिक युद्ध हुआ ही नहीं।

यूरोप में एक और 'लीग आफ नेशन्स' हो सकती है, किन्तु जेनेवा एक और नहीं हो सकता। सब देशों की राजधानियों के ऊपर मैं जेनेवा का स्थान मानता हूँ। ऐसा कुछ बड़ा शहर नहीं, ऐसा कुछ सम्पत्तिशाली नहीं, किन्तु कितने विप्लवियों और चिन्ताशीलों को अभय वर देकर इसने पृथ्वी को वञ्चित होने से बचाया है। यह शहर 'नान कनफर्मिस्ट' है,

यहाँ आश्रय लेने के लिए किसी को किसी दल अथवा राजनीति का आश्रय नहीं लेना पड़ता। राजरोष से अपने को बचाने के लिए दो शहर याद आते हैं—पेरिस और जिनेवा। पेरिस विराट्, सुरूप और आह्वानमय है, जिनेवा सीमाबद्ध, सुन्दर और आत्म-समाहित। पेरिस में स्वाधीनता का उतना आश्रय नहीं जितना सुकुमार-कला और विलास-लीला का। किन्तु जिनेवा गिरिवेष्टित, तुषार शोभित स्वाधीनता का प्रकाश है, पेरिस के पीछे कितने भावों का विकास है, कितनी ऐतिहासिक 'ट्रेडीशन' हैं जो पृथ्वी को चमत्कृत कर गयी हैं, किन्तु जिनेवा के पीछे 'लेक लेमन' (जिनेवा झील) के उस पार तुषार-शृंग मौं-ब्लाँ है, जो सब संस्कार और इतिहास से ऊपर माथा ऊँचा किये चिरकाल तक खड़ा रहेगा। पेरिस का दान मनुष्य निर्मित है, और जिनेवा का प्रकृति-दत्त ।

इस स्वाधीनता के देश में किन्तु एक बन्दी की कहानी उज्ज्वल हो उठती है । यहाँ आकर बायरन के 'शिलं' (Chillon) बन्दी-दुर्ग को बिना देखे कोई लौटता नहीं है। और बायरन जैसे वीर कवि की वर्णना का यह देश उपयुक्त विषय है। वे वीर थे, इसीलिए मुक्तिकामी बन्दी के मन को जो कि, प्रहरी की आँखों से बचकर मुक्त आकाश में विचरण करता है, सहानुभूति से अनुभव कर सके थे। वे कवि थे यह जिनेवा झील में स्टीमर द्वारा विहार कर उस दुर्ग में जाकर ही समझा जा सकता है। इस पार के निकट का किनारा मानो तीर के समान छूट कर चल पड़ता है, और उस ओर का सुदूर तट पर्वतवेष्टित होकर स्थाणु हो जाता है। उस ओर बर्फ का चित्रपट है, और इस ओर द्राक्षा-कुञ्ज से सजे सानुदेश में कभी कभी सहसा दृष्टि पथ में उदित होते हैं ग्राम—एक एक करके ठीक शिल्पी ड्यूरर के चित्रों के समान ।

इस देश में जितनी सान्त्वना मिली उतनी प्रेरणा भी, 'एमियल के जर्नल' के पृष्ठ पृष्ठ पर इस देश का प्रभाव और तीव्र शीत में मन को जगाने की बात पाता हूँ। प्रकृति जब निराभरण होती है तो भी उसके मन की कितनी सम्पत्ति आहरण होती है। इस देश के सौन्दर्य ने कितने मनीषियों को अन्न की अपेक्षा अधिक धन, प्राण की अपेक्षा अधिक प्रेरणा दी है। चित्रकार हालदीन के चित्रों में जो गम्भीर अनुभव और जीवन के साथ आमना-सामना होने का भाव पाता हूँ, उससे लगता है कि 'जूरा' पर्वतमाला का रंग जुड़कर उसके सब चित्रों में वर्तमान है; और शिल्पी के मन को अभिभूत और सृजन को आच्छन्न किये है। 'जूरा' को छोड़ कर कितने शिल्पी की कल्पना ही नहीं कर पाते।

यदि प्रकृति स्वयं प्राणमयी है और कान्ति में कल्पना है तो सौन्दर्य कभी श्रान्ति उत्पन्न नहीं करता। स्विट्ज़रलैण्ड का सौन्दर्य मनुष्य के लिए कभी पुरातन नहीं होगा। निविड़ हरित् गोचारण भूमि के रंग का वर्णन भाषा द्वारा नहीं हो सकता; केवल अंग्रेजी कविता की एक पंक्ति कही जा सकती है—

The emerald green of leaf enchanted beams

उसके ऊपर जब जुही के फूलों की भाँति बरफ गिरेगी तब उन तुषार कणों को लोभी बालकों के समान मुंह में भर-कर—या पत्तों पर पड़े हीरा मोतियों की तरफ देखकर आँखों को ठण्डक पहुँचाऊंगा। किन्तु सौभाग्य वश मन मूक नहीं रहता, मुखर और उत्तर के लिए उन्मुख हो उठता है, तथा जादू की रंगीन लकड़ी के संस्पर्श से सब देशभाषाओं की अनुभूति से भर जाता है।

यह देश अगणित झीलों से युक्त है। प्रत्येक ही वर्ण-वैचित्र्य-समृद्ध है। सूर्य की किरण में, चन्द्र की ज्योत्स्ना में प्रत्येक

में ही पुनः स्वतंत्र-रूप उद्घाटित होता है। सब से सुन्दर तब दिखाई पड़ता है जब रात्रि का ऐश्वर्य जल पर प्रतिफलित होता है। विशाल पर्वत की छाया और भासमान मेघ की माया पार के चञ्चल वृक्षों के पास इस प्रकार की एक कम्पित माधुरी की सृष्टि करती है जो दिन के समय घूमने वाले स्टीमरों से इन पर किसी प्रकार विक्षोभ आया हो ऐसा नहीं मालूम होता। उस पार के निस्तब्ध 'शाले' समूह को तन्द्रिल माया-पुरी कहने की इच्छा होगी। किन्तु मुझे छोटी छोटी झीलें ही अधिक अच्छी लगती हैं। वे बहुत ऊँचाई पर दिखलाई देती हैं। दुर्गम स्थान में हठात् देखने के विस्मय से उज्ज्वल होकर मनुष्य के रूढ़ चरणक्षेप उनका ध्यान भंग नहीं करते। उनके सौन्दर्य का अनुभव किया जा सकता है, आयत्त नहीं।

पार्वत्य देश होने के कारण स्विट्ज़रलैण्ड इतना अच्छा लगता है। एक एक श्रृंग मानो मानवात्मा की वाणी का प्रकाश है। समतल की माटी का मोह स्वच्छ, लघु और अगंभीर है; उसके ऊपर से आकर्षण बिखर पड़ता है। कहीं न रुकता है और न इकट्ठा होता है। किन्तु असमतल के पत्थर का प्रेम चोटी चोटी पर आकर्षण का किरीट धारण किये है; तरंग भंग के खेल के समान, सरगम की ध्वनि के समान लहरें खेल जाती हैं। और समतल से उच्चता मन को ऊपर की ओर रात दिन अविराम खींचती रहती है। पथिक के लिए, मेरे लिए वह बर्फ की चोटी अतन्द्र निद्रा से अनाहूत, चिरकाल से जाग्रत है।

* * * *

आज प्रकृति का तुषार स्वप्न है। इस देश की प्रकृति को प्राणमयी कहता हूँ, इस बात को साधारण रीति से सोचने पर सब असम्पूर्ण रह जायगा। मनुष्य ने अपने हाथों से भैरवी में प्राण प्रतिष्ठा की और करके आप मन्त्र सिद्ध हुआ। इस

दुरन्त शीत में वृक्ष आदि सब तुषार से ढके है, और उसी देवता का दान तुषार बिन्दु के रूप में सब स्थान पर शोभा पाता है। सारे वर्ष में केवल कुछ महीने के लिए मनुष्य प्रकृति के इस निर्मम दान को भरपूर पाता है, किन्तु जितना पाता है सम्पूर्ण रूप से अपने प्राणों के रस में रसाकर उपभोग करता है।

फ्रांस और स्विट्ज़रलैण्ड के सीमान्त में एक ऊँचे पहाड़ पर चढ़ना दुष्कर है। किन्तु ये इसके लिए चुप नहीं रहते। वहाँ बिजली के तारों क सहारे 'टेलीफेरिक' से ऊपर चढ़ना होता है, यह जादूघर जब नीचे की पृथ्वी छोड़कर ३००० फीट ऊपर उठ जाता है तो जीवन केवल तार समूह पर झूलता है। किन्तु इससे किसी को भय नहीं होता। उसी चोटी पर चढ़ कर यह चिर यौवन सम्पन्नों का दल नाचेगा, गायेगा और फिर खायेगा। ये यदि हमारे देश के लोग होते तो हिमालय के गुप्त साधकों को भागकर पर्वत छोड़ अरण्यवास करना पड़ता और कुछ ही वर्षों में 'एवरेस्ट' न सही, किन्तु अनेक चोटियों पर छुट्टी बिताने का प्रबन्ध हो जाता। ऊपर से नीचे झांक कर देखा, तुषार के समुद्र की तरंगें अपरूप दिखलाई पड़ती हैं।

"भुजंग सा मन्त्रशान्त महासिन्धु तरंगित
पद प्रान्त में पड़ा था
उच्छ्वसित फन लक्षशत किये अवनत"

इस तरंगित भृंगराजि को देखते हुए अचानक (हठात्) नेत्रों की यवनिका खुल जाती है, कान के पर्दे प्रतिध्वनि से स्पन्दित होने के लिए उन्मुख हो उठते हैं। ऐसा लगा मानो इस स्थान पर यूरोप के संगीत का रहस्य उद्घाटित हो गया है; मानो उस संगीत की झंकार विराट् वैचित्र्य और असीम अनुभव लेकर समस्त आकाश में परिव्याप्त होकर चोटी चोटी पर तरंगित हो उठती है। उसका मूल स्वर भारतीय संगीत के

समान विजनता की वीणा पर प्रकाशित न होकर निखिल विश्व-व्यापी 'आर्केस्ट्रा' की झंकार में होगा।

प्रकृति इस देश में निष्ठुरा है, यहाँ के कोमल मलय समीर में शरीर को शिथिल कर काव्य चर्चा नहीं की जा सकती; इसीलिए मनुष्य को उसके साथ युद्ध कर जीवन का आनन्द प्राप्त करना होता है। शीत के आक्रमण से आत्मरक्षा करने के लिए शीत पर आक्रमण करते हैं—स्केटिंग कर, शी-इंग कर बर्फ के ऊपर उछल कूद करते हैं। शीत के आगमन के साथ साथ किस पहाड़ की चोटी पर कितनी बर्फ पड़ी, कौन झील जम गयी, यही इनका प्रत्येक प्रभात का समाचार होगा। एक दिन ऐसा ही एक सुसंवाद सुन 'लूज़ान' से बर्फ पर खेलने के लिए साँ-शर्ग की ओर दौड़ पड़ा। और वह कौन सा खेल? वह है जीवन की उपासना। किन्तु उसमें विनय न होकर परा-क्रम है। बन्धु के स्वतः प्रवृत्त दान में माधुर्य है, किन्तु शत्रु के हाथ से छीने हुए धन की सार्थकता के साथ उसकी तुलना नहीं कर सकता।

किन्तु इतने उल्लास और प्राण-विकास में एक वस्तु का अभाव दिखाई पड़ता है। इस उद्दामता में बुद्धि की दीप्ति नहीं। जो आनन्द इनके शीत के भीतर से बर्फ के ऊपर प्रवाहित होता रहता है उसमें भूमा की असीमता नहीं। सागर-स्नान और देश भ्रमण द्वारा ये वसन्त ऋतु का आह्वान करते हैं और जाड़े के खेलों द्वारा शीत ऋतु को आमन्त्रित करते हैं। केवल आनन्द के अन्वेषण की ही छाप इनके मुख पर है, बहुत बार इसके अतिरिक्त और कुछ दिखाई नहीं पड़ता। वास्तविकता यह है कि अविराम आनन्द लिप्सा ने साधारण लोगों के जीवन में यथेष्ट परिवर्त्तन ला दिया है। यहाँ एक बन्धु से बातों ही बातों में ज्ञात हुआ कि वह चिन्ताशील होकर किसी

दिन ख्याति-लाभ कर सकता था, किन्तु लघु आनन्द के दावे ने उसके जीवन को अन्य दिशा की ओर मोड़ दिया। वह एक नवीन लेखक है, किन्तु जीविका अर्जन के पश्चात् विश्राम के समय वह ढेर की ढेर पुस्तकों के बीच डूब कर समय काटने की अपेक्षा सागर की तरंगों में लीन होना अधिक आकर्षक समझता है। वह कहता है, वह दिन की बेला में विक्षिप्त चिन्तासूत्र को गंभीर रात्रि में ग्रथित कर सकता है, किन्तु यौवन का आह्वान उसके निकट प्रबलता से उठकर सब कुछ मूल्यहीन कर देता है। जीवन्त मनुष्य होने के नाते जीवन का उपभोग करना चाहता है, सिद्धि के पथ पर साधना की आवश्यकता के लिए अधिक त्याग वह स्वीकार नहीं करना चाहता। वह त्याग फिर होगा, वह किसी समय हो सकता है, किन्तु यौवन-सरसी के नीर में यह अवगाहन 'आज यह रजनी जा रही है' केवल इसीलिए है। भविष्य के लिए वर्तमान में वह क्षति क्यों स्वीकार करेगा? एक प्राचीन ग्राम्य कवि की कविता उद्धृत कर बोला—'What had my youth with ambition to do?' मेरे यौवन का आशाओं से क्या नाता? उसकी बात कम सत्य नहीं है इसे अस्वीकार नहीं कर सका। आज जो नशा आँखों को रंगीन कर फूटा पड़ता है वह कुछ वर्षों में धूसर हो जायगा, ऐसा समझकर यदि कोई आज के क्षणों का पूर्ण उपभोग करना चाहता है तो उसे अधिक दोष नहीं दिया जा सकता। आज का आनन्द क्या कल के अनागत साफल्य की अपेक्षा कम मूल्यवान् है?

किन्तु नीरव ख्यातिहीन मिल्टन—जो खिल सकता था पर खिल न सका, उसके लिए दुख करने से क्या लाभ? चिन्ताशीलता सर्व साधारण की सम्पत्ति नहीं हो सकती—साम्यवादी फ्रांस में ही नहीं, समाजवादी रूस में भी नहीं।

यूरोप में ऐसे लोग अवश्य है जो क्षणिक विश्राम के लिए अपने चिन्तन के आश्रम से उन्मुक्त प्रान्तर अथवा नृत्यशाला में आ गये किन्तु तत्पश्चात् फिर इस जगत् को पीछे छोड़ गये हैं। ठीक इसी प्रकार का सामञ्जस्य हमारे जातीय चरित्र में नहीं पाया जाता। यूरोपियनों की आँखों के सामने Typical विशेषत्व मूलक भारतीय के नाम पर फकीर अथवा महाराजा का चित्र खिंच जाता है। भारतवर्ष के कौपीन और मुकुट के सम्बन्ध में ही उनकी धारणा का थोड़ा बहुत परिचय पाया जाता है। यह बात किस प्रकार से अस्वीकृत की जा सकती है? शैशव में कहानी सुनी थी––विलासी ज़मींदार लाला बाबू उदास संध्या को एक बालिका के अनिर्दिष्ट आह्वान में उद्-भ्रान्त संन्यासी हो गये थे। अपरिणत मन में विशेष रूप से विभिन्न एवं सम्पूर्ण सुदूर के दो चरित्रों की छाप पड़ गयी। इतिहास में भी राजा एवं राज्य के उत्थान-पतन एवं वैराग्यमय धर्म के अभ्युदय एवं विलय की कहानी ही सबसे अधिक उल्लेख-नीय हुई। जहाज़ की मधुशाला का काण्ड देख देश पर दृष्टि-पात करते हुए सोचा कि हम मद्य का सेवन नहीं करते, किन्तु जो करते हैं वे साधारणतः 'ताल पर नहीं चल पाते'। हम प्राणों के प्राचुर्य्य में स्वच्छन्द आनन्द मनाने के अभ्यस्त नहीं, इस कारण बह जाने का ही डर अधिक है। जहाज पर बार बार मन में हुआ कि हम लोग भोग और त्याग के बीच किसी अविरोधी अवस्था की सहज कल्पना नहीं करना चाहते। अपनी भी बात सोची––यूरोपीय जीवन में अनभ्यस्त भारतीय छात्र ऐश्वर्यमय आकर्षणमंदिर यूरोप की स्वाधीनता के किस पथ पर जायगा? समुद्र-यात्रा में तरंगों की ताण्डव लीला देखने के लिए चक्करदार मार्ग से उत्ताल विस्के की खाड़ी द्वारा

इंगलैण्ड जाने का संकल्प जिस मन से किया वह ख्याली और दुस्साहसी मन कितना सामञ्जस्य रख सकेगा।

यूरोप के सामञ्जस्यमय जीवन का एक उदाहरण इसी शीत के खेलों के बीच पाया। मेरे परिचित एक प्रवीण मनीषी यहाँ आये थे। इस तुषार समुद्र में उनमें और किसी भी युवक में प्रभेद नहीं। वे कभी हमारे देश के सर्वदा गाम्भीर्य में लुप्त रहने वाले इतिहास प्रसिद्ध अध्यापक की तरह नहीं रहते, किन्तु उनकी ज्ञान की दीप्ति उनको सदैव हमारे पास से दूर रखती थी। हम भली भांति जानते और ससम्मान स्वीकार करते कि वे हमारे समवयस्क नहीं, बन्धु हैं। यहाँ उनके उल्लास को देखकर किसी भारतीय के मन में आया होगा कि वे एक प्रवीण ज्ञान के साधक हैं। यूरोप के आलोक में मैंने अपने लोगों को चूड़ान्तवादी अर्थात् Extremist के रूप में प्रकाशित होते देखा है।

नित्य जर्मनी

जर्मनी नें पौराणिक फिनिक्स पक्षी के समान गत महा-समर की चिताभस्म में से पुनर्जीवन लाभ किया।*

यह बात जर्मनी में एक दिन के लिए आने पर भी ज्ञात हो जायगी। चारों ओर नाना रूप में नवजीवन का उल्लास और उत्साह है। ठीक ग्रीष्म काल में उत्तर मेरु से सलिल समुद्र के समान बर्फ गलने लगता है। शीत की स्तब्ध मृत्यु और निरुपाय अवसाद का चिह्न मात्र नहीं। गत महायुद्ध की पराजय की ग्लानि और लज्जा जर्मनी के मुख से धुल गयी हैं। जातीय जीवन में असीम यौवन एवं अतुलनीय बसन्त आये हैं। राइनलैंण्ड पर जर्मनी की सेना का अभियान, सार की पितृभूमि पर प्रत्यावर्तन और वार्साई की सन्धियों का एक एक कर दृढ़ता पूर्वक अस्वीकार—यह सब आलोचना प्रत्येक को उत्साहित रखती है। म्यूनिक के म्युजियम में विश्राम मग्न ग्रीक देवता 'सैटर' की एक मूर्त्ति है। उसके साथ तुलना करते हुए म्यूनिक के अधिवासी कहते हैं 'इतने दिन तक हमारा देश इसी प्रकार सो रहा था, इस कारण उसकी सुदृढ़ मांस पेशी बहुल देह दुर्बल हो गयी थी, यह न समझना।' उसी निद्रित देवता का जर्मनी में जागरण हुआ है।

---

*(१९१४-१८) युद्ध के पूर्व का जर्मनी।

यूरोप में प्राण सर्वदा गतिशील है। दृष्टि दूर भविष्य की ओर निबद्ध रहती है, गौरव की ओर से नव गौरव के लिए उसकी चिरयात्रा होती है। फिर भी अनेक यूरोपीय देशों में अतीत की ओर एक सतृष्ण दृष्टिक्षेप और सलोभ दुर्बलता का आभास पाया जाता है और भ्रमणकारी भी साधारण वर्तमान की अपेक्षा अतीत का गौरव देखते हुए अधिक घूमते हैं। किन्तु विदेशी पर्यटक की दृष्टि जर्मनी के पुरातन ऐश्वर्य की ओर इतनी नहीं पड़ती जितनी नवीन जर्मनी के अपरूप महाप्लावन की ओर। वर्तमान और भविष्य के गौरव के स्वप्न के दुस्सह आनन्द में देश विभोर है।

कोलोन का इतिहास प्रसिद्ध गिर्जाघर जर्मनी का अन्यतम गौरव है। किन्तु कोलोन आकर देखा कि उसकी अपेक्षा अधिक गौरव पूर्ण यहाँ की ब्राउन शर्ट का देश है। उस दिन एक नात्सी नायक बालक-वाहिनी के प्रचलन के पर्यवेक्षण के लिए आये थे। इसलिए लोगों में कितनी विस्मयकर चञ्चलता और उत्तेजना थी। पथ के दोनों ओर प्रत्येक घरों में जय पताकाएँ थीं, नात्सी अभिवादन का समारोह था। असंख्य शिखर कण्टकित मंदिर में देवोपासना का समारोह नहीं। इतना ही क्यों, अन्तर की आत्मसमाहित विशालता की छाया बहिरंगी उद्दामता की उत्तेजना को---थोड़ा भी स्निग्ध अथवा संयत नहीं कर सकी है। धर्म के स्थान पर देश प्रेम ने अधिकार कर लिया था, नव जागरण के कोलाहल में मंत्रपाठ का गम्भीर निर्घोष डूब गया। क्रास चिह्न के स्थान पर स्वस्तिक ने अधिकार कर लिया।

जर्मनी का इतिहास प्रधानतः व्यक्ति का इतिहास है। युग युग में देश का अधःपतन और मोहनिद्रा हुई, और उससे उद्धार करने के लिए देश को जगाने के लिए किसी अतिमानव ने पाञ्चजन्य (कृष्ण का शंख) बजाया है। विप्लव के वज्रघोष

के बीच देश की निद्रा भंग हो गयी। इन्हीं सब समयों में एक एक आन्दोलन ने रूप धारण किया। देश के इतिहास ने लूथर, फ्रेडरिक, बिस्मार्क और हिटलर की सृष्टि की है। इस प्रकार सम्पूर्ण रूप से और किसी देश में व्यक्ति विशेष भाग्य विधाता नहीं हो सका। जर्मन प्रतिभा ने गणतन्त्र के बीच स्फूर्तिलाभ नहीं किया, किया है नेता के बीच। धर्म के आन्दोलन की सृष्टि लूथर ने की, साम्राज्य की कल्पना को प्रथम प्राण फ्रेडरिक ने दिये, जर्मन साम्राज्य की प्रतिष्ठा बिस्मार्क ने की, और तृतीय राष्ट्र के सृष्टा हुए एक मात्र हिटलर। इस देश में जातीय जीवन का विकास व्यष्टि में हुआ, समष्टि में नहीं।

जीवन गंगा के इस नव-भगीरथ की ओर ध्यान न देने से वर्तमान जर्मनी की कल्पना करना असम्भव है। औद्धत्य, अत्याचार और रक्तपात द्वारा उसके विजय का अभियान राष्ट्र के श्रेष्ठ आसन पर हुआ है। किन्तु नात्सी कहते हैं यही देश का मुक्ति स्वरूप है। विच्छिन्न, दलविभक्त, अपमानित देश के लिए और कोई उपाय ही न था; अन्य किसी मार्ग से उसके हृत सम्मान का इतना शीघ्र पुनरुद्धार न हो पाता। सामान्य रूप से ही नात्सीदल का प्रथम अभियान हुआ था; म्यूनिक में एक बार उनकी चेष्टा का सहज में ही दमन करना सम्भव हुआ था। इस समय जहाँ प्रथम नात्सी निहत होता वहाँ अनिर्वाण अग्नि की रक्षा करनी होती। जर्मनी का यह एक नूतन तीर्थ है। प्रत्येक पथचारी को वहाँ से निकलने पर नात्सी अभिवादन करना पड़ता है। यहूदी और समाजतन्त्रवादियों के प्रति अमानुषिक अत्याचार और बहिष्कार, धर्म और साहित्य को पंगु कर देना, नात्सीवाद के विरोधियों को बन्दी शिविर में अनिर्दिष्ट-काल के लिए अविचार पूर्वक नजरबन्द रखना, और बारबार संसार की शान्ति नाश से आशंका उत्पन्न करना—ये सब जगत्

को नात्सी जर्मनी का दान है। फिर भी देश को इन्होंने जो कुछ दिया है उसे स्मरण कर जर्मनी इन वीर आत्माओं के प्रति ससम्मान बाहु प्रसारित करने के लिए वाध्य होगा। जगत् में कोई भी विप्लव का पथ कुसुम शैया नहीं रहा, फ्रांस और रूस इसके श्रेष्ठ प्रमाण हैं। फ्रांसीसी विप्लव डेढ़ सौ और रूसी विप्लव केवल तीस वर्ष पुराने हैं। इन सब अत्याचारों के पश्चात् अन्तर्जातिक शान्ति और सहानुभूति की बातों की बहुत आलोचना हुई, किन्तु आदिम मानव की प्रवृत्ति का परि-वर्त्तन नहीं हुआ।

जर्मनी का आत्मशक्ति में विश्वास सुदृढ़ है। इस विश्वास के बल पर ही उसने अपना प्राप्य स्थान फिर पा लिया। उसके बीच बीच में जो रण झंकार और वागाडम्बर प्रकाशित हुआ वह बिल्कुल निष्फल और निरर्थक नहीं है। व्यायाम चर्चा की रीति में ब्रिटेन और जर्मनी में कौन श्रेष्ठ है, इसे लेकर तर्क उठते हैं। यद्यपि कोई भी जाति अपने ढंग को अप-कृष्ट स्वीकार नहीं करेगी किन्तु निपुणता और शृंखला में जर्मनी के ढंग ने संसार में भीति और विस्मय की सृष्टि की है। ओलम्पिक क्रीड़ाओं में जिस प्रकार जर्मनी ने उत्तरोत्तर साफल्य लाभ किया है उसे देखते हुए भविष्य में कोई देश उससे प्रति-योगिता न कर सकेगा, स्कूल में व्यायाम एक विषय है, यूनी-वर्सिटी की श्रेष्ठ शिक्षा के पहले शारीरिक कुशलता पर अधिकार कर लेना पड़ता है। व्यवसाय में भी इसकी आवश्यकता स्वीकृत हुई है।

देश के प्रति कोने कोने को इन्होंने गंभीर प्रीति और सहानुभूति की दृष्टि से देखना सीखा है। देश का अर्थ इनके लिए भौगोलिक मृत्तिका-खण्ड नहीं है, उसमें इन्होंने प्राणप्रतिष्ठा की है। देश के प्रत्येक अंश वन, उपवन और पर्वतों पर इसके

साथ घूमते हुए निविड़ चाक्षुष परिचय किया है। श्रेष्ठ 'ग्लोब-ट्राटर' की जाति भू-पर्यटक से स्वदेश-पर्यटक में परिणत हो गयी है। मोटर गाड़ी की प्रचुरता, देश भर में फैले राजपथ की प्रसिद्धि और वायुयानों के प्रसार वाले इस देश के लोग पैदल चलकर देश देखते हैं। 'हूण्डर फागेल' आन्दोलन पहली बार इसी देश में हुआ; तत्पश्चात् 'यूथ होस्टल मूवमेण्ट' के नाम से इंगलैण्ड में प्रचलित हुआ। इस पैदल भ्रमण में जो विपुल आनन्द प्राप्त किया है उसके साथ किसी साधारण प्रथा के देश भ्रमण की तुलना नहीं हो सकती।

किन्तु इंगलैण्ड और जर्मन के देश भ्रमणों में अन्तर है। इंगलैण्ड में मन के आनन्द में हाईलैण्डस् के सागर प्रान्त, हैब्री-डिस द्वीप समूह और लेक अञ्चल में घूमता फिरा। प्रकृति का श्यामस्पर्श, तारिका खचित नीलाकाश की अतन्द्र नीरवता, विजन पर्वत की मौन महिमा मन से संसार और राजनीति की चिन्ता भुला देती है। डर्बीशायर में प्रस्तर शिखर कण्टकित निर्जनता में चन्द्रमा की पीत किरणें पड़कर जिस चिर रहस्य की सृष्टि करती हैं, दूर दूरान्तर का संध्या तारा जिस अपलक दृष्टि से आह्वान करता है, उसे छोड़ और किसी के अस्तित्व की बात मन में नहीं आती। किन्तु जर्मनी में 'केवल अकारण पुलक' में आत्मविस्मृत होने के साधन नहीं। नव विधान के अनुसार तो यह भी निर्दिष्ट कर दिया गया है कि आल्प्स के कौनसे भाग में घूमा जा सकता है। 'हिटलर युवा आन्दोलन' में योग देने के समय शपथ लेनी होती है—अलसता, स्वार्थपरता, सहिष्णुता और पराजय स्वीकार प्रवणता के विरुद्ध क्षमाहीन युद्ध करना होगा। उसके फल स्वरूप राइन की गोद में प्रकृति के किसी भी निभृत अञ्चल में कहीं भी क्यों न जायँ—जर्मन युवकों के कानों में विजनता की वाणी नहीं है, ये शब्द विवेका-

नन्द की अमर वाणी के समान ध्वनित होते हैं—'हे जर्मन ! भूलना नहीं, तुम पैदा होते ही देश कार्य के लिए बलि प्रदत्त हो।' 'आनन्द के बीच से शक्ति-साधना' के संघ का निर्माण हुआ। उसका उद्देश्य है श्रमिकों की छुट्टी और विश्राम के समय को आनन्द में—बलकारक आनन्द में बिताने के साधनों का सन्धान करना। शक्ति ही श्रेष्ठ लक्ष्य है। सारे कामों, चिन्ता, आनन्द और उपभोग का ही लक्ष्य शक्ति सञ्चय है, विदेशियों के आतंक नाम पर शक्ति उपासना युद्ध की तैयारी का ही दूसरा नाम है। जर्मन कहते हैं—'नायमात्मा बलहीनेन लभ्यः', हम शक्ति पथ पर मनीषा की साधना करते हैं।

दैहिक स्वास्थ्य और शक्ति के लिए वर्तमान जर्मनी दार्शनिक चिन्ताशीलता का भी क्षुण्ण करने में पीछे नहीं। इनके अनुसार मनषी की अतिशयता से देश में अवसाद आया; अतएव मानसिक चर्चा की अपेक्षा देहचर्चा ही अधिक आवश्यक है। वही विद्या रहे जो व्यावहारिक उपकारिता से राष्ट्र की वैज्ञानिक सम्पत्ति की वृद्धि करेगी, धर्मशास्त्र पाठ और यहूदी सुलभ अन्तर्जातीयता की व्याख्या दूर रहे। नारी फिर अपने निभृत नीड़ में जाये, पुरुषों की भीड़ में उसकी प्रतियोगिता से अकल्याण होगा। गार्हस्थ्यधर्म और देश को सबल और स्वस्थ सन्तान देना ही उनका श्रेष्ठ कर्तव्य है। अनेक वर्षों के कष्टों से अर्जित नारी-स्वाधीनता नारी ने फिर खो दी। सभ्यता की उन्नति की घड़ी की सुई जर्मनी पीछे छोड़ना चाहता है। बाइबिल पर हस्तक्षेप किया है, बाइबिल के नूतन संस्करण में दैहिक शक्ति की प्रशंसा मूलक व्याख्या हुई है। म्यूनिक का 'ब्राउन् हाउस' ही जर्मनी का 'बेथलेहम' है और हिटलर की 'मेरा संग्राम' पुस्तक ही नई बाइबिल है।

राष्ट्रपति के आदेश से शीतकाल में बेकारों की सहायता

के लिए प्रति रविवार को केवल एक कोर्स का भोजन कर शेषांश के दाम बचाकर रखने होंगे। समस्त जाति अम्लान वदन इसका पालन करती है। इसी प्रकार के एक 'हिटलर सन्टाग' (सन्टाग–रविवार) को अनजान में लञ्च के प्रथम पर्व 'सूप' को लेकर बैठ गया। उसके पश्चात् ही पूरे दामों का एक बिल आया। तब स्थिति समझकर पूछा 'सूप' के साथ रोटी भी मुझे प्राप्य है। रोटी के एक प्रकाण्ड टुकड़े से बहुत–सा 'सूप' पीकर जो कदाचित् कई मनुष्यों के लिए होगा हिटलरीय नियम रक्षा और सारे दिन अनाहार रह राइन भ्रमण की सम्भावना क्लिष्ट आत्मतृप्ति हुई। यह अभिभोजन भी निश्चय ही ब्राउन शर्ट वालों को अनुमोदित न होगा।

कलोन की कोलाहलमय शान्ति-भंगकारक बावामीवाहिनी के जुलूस से कोबलेन्स के स्टीमर भ्रमण में मैंने मुक्ति पायी। एक नव विवाहित दम्पति मधुचन्द्र यापन करने चली थी। फ्रांसीसी स्त्री और जर्मन पति दोनों भाषाएँ मिलाकर बातें कर रहे थे। कोई अतुलनीय जर्मन काफी पी रहा था। एक ओर कुछ लोग मृदु-स्वर में गा रहे थे। इनकी भाषा बड़ी अद्भुत है। लिखने के अक्षर विकट और व्यञ्जन बहुत दिखलाई पड़ते हैं। पुरुष कण्ठ से तीक्ष्ण और रुक्ष सुनाई पड़ते हैं, किन्तु नारी कण्ठ से मानो सुधा वर्षण करते हैं। दोनों ओर पर्वत श्रेणी थी, कहीं श्यामल और कहीं पर्वतीय। अशान्त पवन पर्वत शिखर पर क्रीड़ा कर रहा था, उसके हास्य की लहर स्वच्छ जलराशि को चञ्चल कर जाती थी। लघु मेघ दोनों ओर के गिरि दुर्ग समूह को लेकर खेल कर रहे थे; अक्टूबर की हल्की कुहेलिका नदी के किनारे किनारे तरु शिखरों पर अवगुण्ठन डाल रही थी। मन में होता है यह वही राइन है—अगणित कहा-नियाँ जिसकी तरंग तरंग के साथ प्रवाहित होती हैं, और प्रत्येक

प्रस्तर और दुर्ग के साथ जड़ित हैं। लोरलेई का गान सुनते सुनते जहाँ नाविक हँसते हँसते प्राण दे देते और जिसकी मोहिनी माया में राजपुत्र भी मोहित होगये, वहाँ आकर मन मुखर और वक्ष स्पन्दित हो उठा।

राथेनबुर्ग का प्राचीन प्राचीर वेष्टित शहर भी जान पड़ा वतमान जर्मनी से बहुत दूर चला गया है। इस देश में एक शताब्दी पहले ही मात्स्यन्याय प्रचलित था। प्रूशिया के राजा तथा अन्य राजा लोग पड़ोसी की अक्षमता का सुयोग पाकर उसका राज्य हड़प करने की चेष्टा करते। इस शहर में भी उस अत्याचार के चिह्न हैं। प्रस्तर दुर्ग, परिखा, अन्धकार, भूगर्भ का कारागार, विपद संकेत का घंटा और राजकुमारी की वीरता आदि सब में मध्ययुग का एक परिपूर्ण चित्र पाया। सौभाग्य का विषय है, संध्या का अन्धकार जब दुर्ग के नीचे की घाटी में छा रहा था, उस समय युवा समिति के कवायद के शब्द ने यहाँ की सांध्य शान्ति को भंग नहीं किया।

फ्रेंकफोर्ट के गेटे-भवन में इस प्रकार का एक और शान्ति का आश्रय पाया गया। छायामय एक संकीर्ण गली थी। आस-पास जर्मनी के विख्यात सॉसेज की दूकानें हैं। पुरातन वातावरण सुन्दर रूप से वर्तमान है। मन ही मन सोचा, साहित्य के गुरु के घर के निकट किसी नवीनता का औद्धत्य शोभा नहीं पा सकेगा।

* * * * *

बेवेरिया के एक पर्वतीय ग्राम में एक उत्सव रजनी थी। बहुत दूर ग्राम-ग्रामान्तर से नर-नारी उत्सव में भाग लेने आये थे। इस पर्वतीय प्रदेश की विचित्र पोशाक में सज्जित हास्य मुखी तरुणियाँ परिचित और अपरिचित सब के बियर के ग्लास से अपना ग्लास छुआकर शुभ इच्छा प्रकट कर रही थीं। सब

के सामने पात्र में सॉसेज और उबले हुए लाल बन्द गोभी के पत्ते थे। इन सब पर्वतीय लोगों के बीच विपुल आनन्द उपलब्ध था। बैण्ड बज रहा था। सब मिलकर समवेत स्वर में 'कम्यु-निटी' लोक-गीत गा रहे थे; बीच बीच में हाथ पकड़कर नाच उठते थे। रवीन्द्रनाथ की भाषा में सबके ही "प्राण हो गये अरुण वर्ण", इसी समय उस उत्सव का इन्द्रजाल भंग करने के लिए मूर्त्तिमान उपद्रव स्वरूप 'ब्राउन शर्ट' वाले युवकों के एक दल ने प्रवेश किया। अपने दल की पोशाक पहिनकर इस उत्सव में आने से उन्हें बिलकुल द्विविधा नहीं हुई। सामरिक टॉप बूटों के रूढ़ शब्द से एक मधुर शब्द निपीड़ित होकर मानो समाप्त हो गया। किन्तु तरुणियों ने इनको साग्रह आमंत्रित किया। समझ गया, बादामी दल ही इस युग का एक मात्र ब्राह्मण और क्षत्रिय—वर्ण श्रेष्ठ एवं वरमाल्य प्राप्त वीर हैं।

उज्ज्वल तारों से भरे नीले आकाश के नीचे ग्राम्य पर्वतीय पथ पर घूमते हुए मन में विचार आया—कौन जर्मनी मनुष्य के मन में शाश्वत स्थान पायगा। सहस्र राइन उपकथा की स्मृति से विजड़ित, बिटोफेन-ह्वैगनर के सुर से झंकृत, और गेटे-शीलर का जर्मनी—अथवा फ्रेडरिक, बिस्मार्क और हिटलर का जर्मनी?

उस प्रश्न का उत्तर मुझे खोजना नहीं पड़ा। पर्वतीय वन श्रेणी की निर्जन सुदूरता में पथ भूलकर कुछ विभ्रान्त हो गया। पथ भूलने की कोई बात ही नहीं थी कारण पथनिर्देशक फलक पथपार्श्व में ही बीच बीच में मिल जाते हैं। फिर भी किस प्रकार विपथ पर जा पड़ा नहीं जानता, किन्तु जब उस ओर लक्ष्य किया तब वन के बीच बहुत दूर आ गया था और पथचिह्न का संकेत और दिखलाई नहीं पड़ा। किस प्रकार पुराने पदचिह्न उद्धार कर नूतन रूप से पुराने पथ पर आऊँगा?

उस प्रश्न का उत्तर भी मुझे नहीं खोजना पड़ा। भय कैसा? मन कान के पास कहने लगा—भय कैसा? आगे चलो, सामने बढ़े चलो। पुराने पथ पर, परिचित पथ पर, कौन चलना चाहता है? तुम नवयुग के अभियात्री हो, अनिर्दिष्ट की ओर जय यात्रा करो, अज्ञात की यवनिका उन्मुक्त करो। बढ़े चलो, जिस प्रकार इस विराट् जाति का विशाल इतिहास आगे बढ़ गया है।

बढ़े चलो—यही इस देश के इतिहास का मूल-मंत्र है। एक धर्म-राज्य सूत्र में ग्रथित कर देंगे सारे यूरोप को। नूतन राष्ट्र की इस परिकल्पना ने पवित्र रोमन साम्राज्य में रूप प्राप्त किया। नियति के परिहास में 'खोदा पहाड़, निकला चूहा'—कारण यह था कि वह न तो पवित्र था, और न रोमन और न साम्राज्य। फिर भी राजनीति के इतिहास में इस आदर्श के बीच आज के एक विश्व और एक राष्ट्र के समन्वय के स्वप्न का अंकुर था।

तत्पश्चात् सोलहवीं शताब्दी के आरम्भ होते ही धर्म-संस्कार का विराट् अभियान शुरू हो गया। कैथोलिक धर्माचरण के बीच जो कुछ स्थविर और क्लेदान्त हो चुका था उसके विरुद्ध एक सामान्य याजक ने धर्मयुद्ध की घोषणा की। कोई योद्धा विश्व के इतिहास में इस याजक के समान स्थायी आसन नहीं पा सकेगा। उसका जयरथ मानव को सामयिक भाव से पराभूत और निपीड़ित कर जाता है, किन्तु मार्टिन लूथर का नव-पथ खृष्ट धर्म को नूतन रूप और शक्ति दे गया और नूतन शिक्षा और सभ्यता की ओर ले गया। एटिला के रक्त रंजित पथ के चिह्न आज कौन ढूंढ़ सकेगा? किन्तु लूथर का भक्ति-मय नव विधान सारी पृथ्वी पर व्याप्त है।

साहित्य और शिल्पकला में आगे चलने का वह मंत्र ही युग युग में घोषित हुआ है। गेटे और शिलर के युग में ये दो

दिग्पाल क्लासिक साहित्यिकों की विश्वप्लावी भावधारा के विरुद्ध रोमान्टिक नवीन साहित्यिकों के दल ने शीश उठाकर खड़े होने का साहस किया था, इंगलैण्ड के शेक्सपियर के पश्चात् और भारत में रवीन्द्र के पश्चात् जिस शून्यता अथवा विराट् सृष्टि का अभाव अनुभूत हुआ जर्मन साहित्य में गेटे की मृत्यु के पश्चात् वैसा कोई विच्छेद अनुभव नहीं हुआ, जर्मनी के श्रेष्ठ जगत् में तिरोभाव आया और न अभाव, उसने नये आविर्भाव का आवाहन किया। अतएव जर्मनी के आकाश में गेटे के अस्त होने के पहले ही कवि हाइन का अरुणालोक फूट उठा। हाइन ने केवल अतुलनीय प्रेम कहानी में अपने युग की व्यथा को रूप नहीं दिया, मननशीलता के साथ उसने व्यथा को विचित्र रूप से विकसित किया। समसामयिक फ्रांस की चिन्ता की स्वाधीनता का उपभोग करने के साथ साथ वे चिन्ता करते कि अपने देश के विगत रोमान्टिक युग की शालीनता की उपेक्षा करना ठीक न होगा। 'प्रकाश और भी प्रकाश' की खोज में उनका अन्तर चिर-रत था। यह अनन्त सन्धान ही जर्मनी के अन्तर का मूल मंत्र था।

इसी मन्त्र की प्रेरणा से जर्मन दार्शनिकता में भी अठारहवीं शताब्दी के मध्य भाग से केवल सौ वर्षों के बीच कैण्ट, लायबनीज, हेगेल, शोपनहार और नीत्से के समान विभिन्न भावधारा के दार्शनिकों का आविर्भाव हुआ।

और जर्मन संगीत शिल्प की तो बात ही नहीं है। सारा विश्व उसके वैचित्र्य, माधुर्य और नव-नव विकास का परिचय दे रहा है।

ऐसा मालूम होता है जैसे दूर से पियानो का स्वर आ रहा है और 'बिटाफोन' के एक 'सोनाटा' सुर ने यह बतला दिया कि मैं फिर लोकालय में लौट आया हूँ।

और इनके साथ साथ समझा दिया राजनीति और समर-नीति के रक्ताक्त विभ्रान्त परिच्छेदों से ऊपर उठकर कौन जर्मनी मनुष्य के मन में नित्य हो गया, और सत्य शाश्वत हो गया।

विश्व की प्यारी

जीवन के राजपथ के ठीक ऊपर ही पैरिस के 'काफे' हैं। काफे में बैठे हुए पैरिस के समस्त जीवन का एक सम्पूर्ण-प्राय एवं संलग्न आभास पाया जा सकता है। कवि, शिल्पी, छात्र, आमोद-प्रार्थी, विरामसन्धानी और साधारण सब लोग ही यहाँ आयेंगे और पान-पात्रों से समय काट जायेंगे। उनके बीच आलाप, आलोचना और परिचय का हो जाना विचित्र नहीं है। अथवा सम्पूर्णतः अपरिचित रूप से आकर अपना निर्दोष प्रयोजन पूरा कर चला जाना भी सहज है। पात्र शून्य होते ही बिल नहीं आ जाता अर्थात् उठ जाने का तगादा नहीं होता। कर्मक्लान्त दिन की समाप्ति अथवा उत्सव चञ्चल रात्रि का आरम्भ यदि यहाँ से ही किया जाय तो *'आ ला मोद'* अर्थात् कायदे के माफिक न होगा इसका डर नहीं। वरन् विदेशी की कल्पना में वही आमोद है। काफे फ्रांस का जातीय प्रतिष्ठान है। इसके न रहने पर फ्रांसीसी जीवन का उत्स इतना स्वतः स्फुरित साधारणतः न हो पाता।

यहाँ बैठे बैठे जीवन की शोभायात्रा देखी जाय। एक अमेरिकन धनी आकर बैठे हैं, उनके नेत्रों में पृथ्वी का कामरूप है; एक जापानी छात्र दिखलाई पड़ता है जो गणित-विद्या की

काशी में आया है; एक पेरू की युवक के साथ बातचीत हुई, उसके लिए यह चित्र-विद्या की रौप्य खान है, अब शेष लोगों को नहीं पहिचानता; किन्तु एक पगड़ी देखकर यूरोप के 'फ्लैपर' जो सोचते हैं वही सन्देह मेरे मन में भी हुआ—अर्थात् महाराजा। (भाग्य से भारत का शिरोभूषण दूसरा है)। इस जगत् के गृहदेवता बनाकर रखना उचित है—विशी के चित्र—बैकस का।

वह शोभा यात्रा कितनी विचित्र है। कितने देश कितनी उम्र के कितने उद्देश्यमय नर-नारी विभिन्न वेश-भूषा और भंगी से आते जाते हैं। किसी के मुख पर सविस्मय आग्रह है और किसी पर सकरुण अतृप्ति। कोई आकर हँसकर चला जाता है और कोई इतना आनन्दक्लान्त (blase) है कि कुछ भी लक्ष्य नहीं करता। किन्तु काफे में 'लोरलाई' के समान मोहिनी है, उसके आह्वान में सभी को उत्तर देना होगा। किसी काफे में नहीं गये तो सम्भवतः पेरिस ही नहीं गये। इसका उत्तर ही नहीं।

अंग्रेजों के ऐतिहासिक 'होम' का अभाव लंदन में बहुत अनुभव होता है। फिर भी अंग्रेज और अंग्रेजीपन को इधर उधर पथ में इतना प्रकट देखता हूँ कि होम कहीं भी है इसमें सन्देह नहीं होता। किन्तु पेरिस के विलास-केन्द्र में पेरिस के वास्तविक अधिवासियों को आत्मप्रकाश करते हुए नहीं देखता। जिसको देखो वही विदेशी, जान पड़ा विदेशी ही यहाँ के अधिवासी हैं। और यह अस्वीकार भी कैसे किया जा सकता है? पेरिस विश्व की मोहिनी है। जितने विलासी, धनी, शिल्पी स्वप्न द्रष्टा हैं पेरिस सदैव ही सबको बुलाता रहता है और आश्रय भी देता है। जो करोड़-पति अर्थ-उपार्जन क ज्वर से शान्ति पाने के लिए आते हैं, और जिस राजनैतिक नेता के मस्तक का मूल्य निर्धारित

हुआ है वे दोनों ही समान भाव से यहाँ आश्रय पाते हैं। जो राजा हृत सिंहासन का दुख भूलना चाहते हैं और जो अपने उपयुक्त लीलानिकेतन 'Demi monde" पाना चाहते हैं उन दिनों के लिए यहाँ प्रशस्त क्षेत्र है। सब ही यहाँ आ सकते हैं; यही नहीं वे भी आते हैं जो शंकराचार्य द्वारा वर्णित गतयौवना की अवस्था प्राप्त कर चुके हैं और साधारण विदेशी भी आते हैं जो इस विचित्र कपोतकुल के नाना प्रकार के कूजन-आलापन को कम से कम बाहर से ही सही—दीन भाव से ही सही—सुनकर जाना चाहते हैं। इसका अर्थ यह नहीं, कि पेरिस में फ्रांसीसी नहीं हैं। यथेष्ट हैं, किन्तु उनमें से अधिकांश विश्व के विनोदन में लगे हुए हैं। फ्रांसीसियों की अपनी शिल्प धारा और विदेशी को परितृप्त करने की दोनों प्रणालियाँ सम्पूर्ण रूप से भिन्न हैं। विदेशी सुख का पारावत है, आता है विलास एवं विहार के लिए, उसको फ्रांसीसी जो कुछ देता है पण्य के रूप में, प्रीति के सहित नहीं। वे (Follies) फोलीज में दूकान सजाते हैं किन्तु उसमें स्वयं आसक्त नहीं होते, अपने लिए उनके जातीय प्रतिष्ठान ऑपेरा, थियेटर आदि हैं। अंग्रेज व्यवसायी हुआ है रक्त के खिंचाव से और फ्रांसीसी रुचि के वैशिष्टय में।

यही फ्रांसीसी की विशेषता है। उसे किसी चीज से धक्का नहीं लगता। आवहमान काल से चले आने वाले उसके चित्र-शिल्प और मूर्त्तिशिल्प बाहर वालों के लिए रोमाञ्चकर हैं, किन्तु रुचिसंगत नहीं। किन्तु इस कारण अपने लिए फ्रांस असुविधा में नहीं पड़ता। उसका शिल्परस देह-विश्लेष नहीं देह-विकास है। जिसे देखकर भारतवर्ष का सनातन मानदण्ड संकोच से सिकुड़ जायगा, उसमें फ्रांसीसी खोजेगा आनन्द, किन्तु उसमें थोड़ी-सी भी आत्मवञ्चना नहीं। शिल्प और अश्लील

का विश्लेषण इतना नहीं किया कि सुन्दर भी अश्लील हो जाय। सुन्दर के सत्य रूप में स्वीकार कर शिल्प कौशल और हृदया-वेग की सुष्ठु रचनाओं में फ्रांसीसी ने शिव का निर्माण किया है। हम उसे केवल प्रस्तर के रूप में देखते हैं। जोला बैलजाक, पाल बूर्जे आदि के देश में, केसिनो दि पारी के देश में आश्चर्य का विषय यह है कि विदेशी इसकी खबर नहीं रखता कि सम्भोग स्वाधीनता होने पर भी फ्रांसीसी गृहजीवन में संयत एवं संरक्षणशील हैं।

वास्तविकता यह है कि फ्रांसीसी बैठक सजाना जानता है। यूरोप के अल्प विस्तार वाले सब देशों के साधारण लोगों में भी थोड़ा बहुत रुचिज्ञान एवं सौन्दर्यबोध है। लन्दन में संध्या के समय गृहाभिमुखिनी बिना फूल लिये नहीं लौटती। किन्तु यह उनके अपने घर की सज्जा है। फ्रांसीसी बाहर लोगों को आह्वान करने के लिए सजायेगा। कहीं चौदहवीं शताब्दी में रोमन शासन के युग में एक दुर्ग था, उसके ध्वंसावशेष को वह इंगलैण्ड के समान ध्वंस के साक्षी स्वरूप सजाकर नहीं रखेगा वरन् प्राचीन युग में जैसा था उसका ठीक उसी प्रकार पुर्ननिर्माण करेगा। उसके पार्श्व के प्राकार और परिखा तक प्राचीनता के प्रेमी सौरभ का आभास देंगे, ऐसा न होने पर इतिहास-प्रेमी को छोड़कर और कोई विदेशी नहीं भी आ सकता है। विलासियों के आकर्षण के लिए क्षुद्र नगरी में कार्नेशन फूलों का मेला लगा देंगे; धार्मिकों के लिए किसी साधु के स्मरण का सप्ताह मनायेंगे, गिरिदुर्ग शोभित, पुष्पभूषित दक्षिण फ्रांस के एक शहर काकसिन में ठीक इसी प्रकार का एक दृश्य देखा। इसके फल स्वरूप ठीक इसी रुचि की प्ररोचना से रात्रि के समय 'इफेल टावर' को विद्युतमाला से सजाया गया था। अन्यथा मोटर गाड़ी का विज्ञापन और भी रूप से हो सकता

था। पेरिस के विशाल सुरम्य राजपथ के निर्माण में भी वही इच्छा है।

जाने दो इसे। जिस कारण भी तैयार हुआ हो, 'शांजे लिजी' के लिए जगत् कृतार्थ है। इस राजपथ के न रहने पर अनेकों के जीवन का श्रेष्ठ सुखमय विलास-विहार अपूर्ण रह जाता। यह राजपथ नहीं राजोद्यान है। स्पेन के प्रत्येक शहर में एक एक राजपथ है जिसकी सार्थकता अपराह्न भ्रमण में हैं; इन 'रामब्ला'ओं के विचरण में एक सम्भ्रममय आनन्दघन सामाजिकता है। पेरिस के राजपथों के पीछे सामाजिकता नहीं, स्वाधीन स्वच्छन्दता है और इनका प्रसार। देहली का 'क्वीनस वे' तो इनकी तुलना में सुरंग मात्र है।

भारत के शान्त गृह के कोने में अध्ययनरत निरीह झंझट रहित जीवन से लक्ष्मण की गण्डी रेखा लाँघ बाहर आकर यूरोप के पथ के प्रेम में मतवाला हो उठा। इसी लिए पथ पथ पर कभी मन ही मन और कभी कभी वास्तव जीवन में प्रतिदिन यात्रा करता रहता हूँ। ऐसा लगता है मानो अनादिकाल से अनन्त के आह्वान में—अविराम प्रवहमान धारा में पथ चल रहा है। जन्म से जन्मान्तर तक जाने का पथ एक जीवन में प्राप्त न कर पाऊँगा किन्तु जन्म-जन्मान्तर के सम्पूर्ण मानवों की पदध्वनि दूरागत सागर कल्लोल के समान कान लगा कर सुन रहा हूँ। इस पथ पर शार्लेमन* के नेपोलियन की विजयसेना चली थी, कभी चली थी अत्याचारित कुशासित 'बैस्तिल' विजयी नागरिक वाहिनी, और कभी रूसो, ह्यूगो, जोला आदि की मनीषी वाहिनी। फ्रांसीसी का इतिहास पेरिस के राजपथ और उसके पार्श्ववर्त्ती काफे और शालों में लिखा गया है। यह लन्दन का राजपथ नहीं; वह विराट् विरामहीन दैनन्दिन जीवनस्रोत की एक प्रणाली है।

* Charlemagne

एक स्थान से दूसरे स्थान को जाता हूँ। उसका एक आरम्भ और अन्त है, जहाँ से यात्रा आरम्भ और समाप्त होती है। किन्तु इन दो बिन्दुओं के संयोग करने के अतिरिक्त इसकी कोई सार्थकता नहीं। यदि विषम भीड़ हो तो वह पथ अच्छा नहीं लगता, उसकी अपेक्षा सुरंग के अन्धकार में पाताल पथ से चल रहा हूँ। अपरिचितों का नित्य अभिनय लन्दनवासियों के लिए नहीं है, इसी लिए जान-बूझकर वे कोई अंश ग्रहण नहीं करेंगे।

किन्तु फ्रांसीसी आवास से बाहर ही अधिक रहता है। वह मार्ग में ही परचर्चा, राजनीति, रसालाप, प्रेमाभिनय आदि सब कुछ कर सकता है। अतएव पेरिस के जीवन के सैकड़ों चित्र बाहर ही देखता हूँ। यहाँ ही कितने परिचय और संयोग सूत्र ग्रथित होते हैं। चारों ओर के आलापों के उत्सुक लोगों को वह संयोग सत्र में क्षणभर के लिए एक कर देता है।

किन्तु अंग्रेज घर के बाहर बात नहीं करेगा। उसके समाज सम्मिलन और प्रणयलीला का क्षेत्र गृहाभ्यन्तर, प्रमोदकानन अथवा बाहर मोटर गाड़ी के निभृत संगोपन में होता है। अंग्रेज यदि घुमक्कड़ के समान 'एडवेञ्चर' करता है तो विदेश में, कर्म-चञ्चल परिचित नित्य के राजपथ को वह क्षणभर के लिए भी रंगमञ्च में परिणत नहीं करता।

उसका कारण भी है। लन्दन के पथ में उतना अधिक स्थापत्य शिल्प नहीं है, परिणत अथवा सुकुमार गठन सौकर्य भी नहीं। 'कान्टीनेन्ट' के पथ के समान यदि मलिनता नहीं है तो असा-धारणता भी नहीं है। एक मुहल्ले में यदि एक घर का रंग लाल है तो समझलो कि सब घरों का रंग लाल है। सब मकान के सामने तीन-तीन सीढ़ियाँ हैं और दुतल्ले में एक-एक बरामदा है। प्राणहीन सामञ्जस्य ने सामान्यता ला दी है इसी लिए बार बार ऐसा लगता है, इस पथ में प्रेरणा नहीं है, इस चित्र

में विचित्रता नहीं है। यहाँ जनता 'ला मार्सेल' गान गाती हुई विप्लव का सूत्रपात न करेगी, ये एक एक कर धीरे आलस के साथ विभिन्न पथों से जाकर पार्लामेन्ट के सामने भीड़ लगाकर खड़े हो जायेंगे।

मुक्त वातावरण में आमोद प्रमोद अथवा छुट्टी बिताने का प्रबन्ध लन्दन में कम है। इस देश में आकर चित्त और वित्त-शक्ति के समृद्ध न होने पर विदेशी बहुत ही रिक्त अनुभव करेंगे। रेस्तराँ, सिनेमा, थियेटर, कॉसर्ट, आदि सब स्थान पर तुम जा सकते हो, किन्तु जेब में पैसा और मनुष्यों से परिचय न होने पर तुम्हारा समय काटना अथवा छुट्टियाँ बिताना आसान न होगा; किन्तु वह सीमारेखा अथवा असुविधा पेरिस में नहीं है। रेस्तराँ का जन्म पेरिस में हुआ एवं फ्रांसीसी विद्रोह के समय इनका खूब प्रसार था। यहाँ लोग आसानी से एक दूसरे से मिल सकते हैं। बुलेवार्द, मोंपार्नासे अथवा मोंमार्ते के मुहल्लों में विदेशी छात्र सस्ते काफे में बैठ अकेलापन अनुभव नहीं करेगा। हो सकता है, कोई कोई हंसकर इशारे से अथवा भंगिमा द्वारा सौहार्द प्रकट करेंगे, और लैटिन क्वार्टर के सारे विश्व से आये छात्रों को पेरिस के साथ प्रथम परिचय करा देंगे। और यदि तुम बिलकुल अकेले रहते हो तो विराट् इतिहास अपने मुखर अतीत और मूक भविष्य से तुम्हारे शून्य वर्तमान को भर देंगे।

किन्तु एक हिसाब से ये रास्ते फ्रांसीसियों को अच्छे नहीं लगते। इनकी एक जातिगत धारणा है कि फ्रांस जगत् का केन्द्रस्थल है। मनोरथ का यह विकार राजपथ के प्रसार से खपता नहीं। फ्रांसीसी विदेशी भाषा अथवा इतिवृत्ति सीखने के लिए विशेष उत्सुक नहीं होते। फलस्वरूप जो फ्रांसीसी नहीं जानता उसे यूरोप के अन्य किसी देश में जाकर इतनी असुविधा नहीं होती जितनी फ्रांस में। कान्टीनेन्ट में अंग्रेजी

का धीरे धीरे प्रचार और फ्रांसीसी का लोप हो रहा है, यह फ्रांसीसी अभी नहीं समझता । फ्रांसीसी नागरिक बुद्धिमान है, किन्तु अपने से बाहर वह कुछ भी जानने को व्याकुल नहीं । उसके जीवन का भारकेन्द्र और ध्यान का बिन्दु पेरिस है। इतना ही क्यों, विदेशी टूरिस्ट के लिए चञ्चल अथच विभिन्न देश के विशिष्ट वातावरण में विचित्र पेरिस भी नहीं है, केवल पेरिस का हाल फैशन और अदब-कायदा है । उसके फलस्वरूप सारे यूरोप में विशेषतः नारी जगत् में 'हालीउड' की छाप पड़ती जा रही है, हालीउड के हावभाव, विलासभंगी आदि का अनुकरण होता है, तिस पर भी उसका लक्ष्य एकमात्र पेरिस है ।

यह अवश्य ही ठीक है । संसार में छायाचित्र के कल्याण से पोषाकी जीवन में विशिष्टता नहीं रहती । एक स्थान में वह सुष्ठु होकर आत्मघोषणा करे, पृथ्वी उससे समृद्धतर ही होगी ।

Fetishism वस्तुतः फ्रांसीसी मन में सुनियंत्रित रूप से व्याप्त है, मन की ओर देखने से उसका फल, विपुल किन्तु वैचित्र्य-हीन है । इसके द्वारा एक राजतन्त्र चलाया जा सकता है, एक सेना संघ भी चल सकता है, किन्तु गणतन्त्र के पक्ष में यह पर्याप्त नहीं, उपयुक्त तो है ही नहीं । फ्रांसीसी राष्ट्र के लिए विशेष विशेष व्यक्ति और व्यक्ति विशेष की आवश्यकता है । ऐसा न होने पर राजनैतिक तरणी अनिर्दिष्ट काल के लिए नाविक विहीन कैसे चल सकेगी ? फ्रांस का राष्ट्र केवल सिविल सर्विस के कल्याण से है । प्रधान मंत्री जाते और आते हैं, किन्तु सिविल सर्विस का कर्मस्रोत टेनिस के झरने के समान अक्षुण्ण भाव से होता रहता है । फिर भी राष्ट्र अथवा राष्ट्र-नीति का कोई कर्णधार नहीं है । फ्रांस में हिटलर न सही एक रूज्वेल्ट भी तो नहीं है । इस देश में चारों ओर

व्यक्ति स्वातंत्र्य की आवश्यकता है। फ्रांस में व्यक्ति का अभाव है।

कोई कोई फ्रांस के विद्रोह से इतिहास के वर्तमान युग के आरम्भ की गणना करते हैं। इस सम्बन्ध में बहुत कुछ कहा जा सकता है, नाना मनीषियों के नाना मत हैं। सम्भवतः कोई भावी ऐतिहासिक रूस के गत विप्लव से वर्तमान काल की गणना करेंगे। ऐसा होने पर हमारे समवयसियों का जन्म मध्ययुग में हुआ और मृत्यु होगी वर्तमान के शुभ आह्वान के पश्चात्। किन्तु वर्तमान काल चिरकाल तक बीतता हुआ नूतन वर्तमान में रूपान्तरित होगा। इस सम्बन्ध में तर्क न करने पर भी चिन्तन और राजनीति के जगत् में फ्रांसीसी विद्रोह का दान असामान्य है। उस विद्रोह का रंगमंच इसी पेरिस में था। अब भी साहित्य और इतिहास के पृष्ठों से परिचित पथों पर घूमने के समय किसी कल्पना भाराक्रान्त अंधेरी रात में 'त्यूलेरि' अथवा 'बेस्तिल' के क्षेत्र में खड़े होने पर मानवात्मा के विपुल निर्घोष की प्रतिध्वनि सुनाई देती जान पड़ेगी। कितना विराट् था वह प्लावन जिसके स्रोत में पराक्रान्त बूर्बन (Bourbon) का सिंहासन बह गया था; रूपसी रानी मारी आँतो-यानेते* की सुचारु केशराशि एक रात ही में श्वेत हो गयी। मानव के जागरण का रंगमंच यही पेरिस है। इसके साथ-साथ कितने रक्तस्रोत और युद्ध-विग्रह इसके ऊपर से निकल गये। पेरिस के नेत्रों में कितने दिनों से नींद नहीं, गृहद्वार पर शत्रु बारबार ललकार रहा है फिर भी पेरिस चिर-रुचिर है।

उसका अन्तर शिल्प रसाप्लुत है। फ्रांस को हराकर बिस्मार्क ने अर्थ और देश का हरण कर लिया, जिसका फन्दा

* 'Marie Antoinette'

गत महायुद्ध में भी नहीं छूटा । किन्तु इटली को पराजित कर नेपोलियन मूल्यहीन शिल्प सम्पत्ति ले आये, जिसके लिए इटली निश्चय ही क्षमताशील होने पर भी युद्ध करने को प्रस्तुत न होता । दस्युता ही यदि करना हो तो इस प्रकार रत्न हरण किया जाय जो गले का हार होकर रहे, कण्ठ का कण्टक नहीं । कार्सिका में पैदा होने पर भी नेपोलियन का हृदय फ्रांसीसी था ; फ्रांसीसियों ने उसे हृदय में स्थान दिया था । उन्होंने 'लूवर' का निर्माण नहीं किया, किन्तु एक शिल्पी का स्वप्न कानन बनाकर चले गये ।

'लूवर' के परिचय देने की चेष्टा करना व्यर्थ है। किन्तु छोटी मोटी अपेक्षाकृत अज्ञात चित्रशाला अथवा विद्यापीठ का यहाँ अभाव नहीं है। लुक्सेमबर्ग में जो विदेशी नहीं जाता है वह धोखा खा गया ऐसा समझना होगा। इस प्रकार और भी कितने हैं। 'वोकादेरो' के ऊपर बहुतों की दृष्टि तब पड़ती है जब रात्रि के प्रकाश में वह जगमगा उठता है। अपने देश में 'Sorbonne' का नाम बहुत लोग नहीं जानते हैं, अथच यूरोप के कितने मनीषी यहाँ आते हैं इसकी सीमा नहीं। जिस युग में ज्ञान का प्रकाश अस्फुट और प्रचार सीमाबद्ध था, तथा धर्म जिस युग में विद्या को क्षुण्ण अथवा आच्छन्न करने में द्विधा नहीं करता था, तब भी यहाँ यूरोप के विभिन्न देशों से विद्या के लिए जन समागम होता था। पेरिस का विश्वविद्यालय यूरोप के प्राचीन विश्वविद्यालयों से भिन्न है।

दूर होने पर भी वार्साई को पेरिस से अलग देखने से अपूर्णता रह जायगी। राज समारोह और विलास की दृष्टि से वार्साई पेरिस का पूरक था। यहाँ के विराट् प्रासाद के चारों दिशा-दिग्वलय श्याम वनों के सौन्दर्य से आच्छन्न हैं जिसके बीच चौदहवें लुई के फ्रांस की मूर्त्ति छिपी है। इतने रूप और

पाप, ऐश्वर्य और षड्यन्त्र, विलास और विफलता, जान पड़ते हैं यूरोप में और कहीं नहीं थे। कितनी सुन्दरियों के नृत्य-चटुल-चरणाघात से इस प्रासाद का मर्मर मानो अभी मुखरित हो उठा, कक्ष से कक्षान्तर जाते समय वातास में कल्हास्य ध्वनि का अब भी आभास जान पड़ता है, लालसा का अतृप्त दीर्घ निश्श्वास इन क्षुधार्त पाषाणों में रक्तिम शिखा फैलाकर स्पर्श छोड़ गया है। क्षण क्षण पर 'शाहजहाँ की दिल्ली' याद आ जाती है। राजरोष और राजप्रसाद दिन का श्रेष्ठ प्रयोजनीय संवाद था। वंश सम्भ्रम अथवा पराक्रम उसकी तुलना में नगण्य था। समारोह और राजसम्मान जीवन का ध्रुवतारा था। समर कुशलता के लोप के साथ साथ युद्ध प्रियता बढ़ती ही गयी। सम्भ्रान्त वंशों के अन्दर घुन लग जाने से जातीय जीवन अधःपतन की ओर जा रहा था। इसीलिए विलास, शिल्प-कला और समारोह की उज्ज्वलता में जिस गरिमा का प्रकाश था वह था मात्र अस्तराग। वार्साई उसी की दीप्ति वहन करता खड़ा है।

राष्ट्र से राजा समझा जाता, एवं चौदहवें लुई 'बूर्बन' थे फ्रांस के शाहजहाँ।

पारी को पहिचान रखना बहुत सहज है। विक्टर ह्यूगो के पृष्ठ पृष्ठ पर इसके साथ जो परिचय हुआ वह क्या भूलने के लिए? अथवा उसे खोज निकालने में कष्ट होगा? 'नोतर दाम'* को कौन नहीं पहिचान लेगा, और उसके घण्टों का निर्घोष एक बार सुनकर किसके कानों में दूर तक वह ध्वनि समय समय पर प्रतिध्वनित न होगी? जो सीन नदी सर्पिल गति से नगरों को वेष्टित किये है, जो प्रशान्त उद्यान और प्रशस्त राजपथ इसकी सम्पत्ति है, इसे कौन विदेशी भूल सकेगा? इतना ही क्यों, जिसका चिन्ताहीन उत्सव से केवल एक रात्रि

* 'Notre Dame'

का परिचय है वह भी इसे चिरकाल के लिए याद रखेगा। नेत्रों से जो देखा उससे सैकड़ों गुना अधिक अनुभव हुआ, सहस्रगुने परिचय स्वप्न में। फ्रांसीसी जिसे Flaner (फ्लैनर) कहते हैं उसका आभास यहाँ की वातास में है; क्षण भर के अतिथि में भी उसकी चञ्चलता सञ्चरित हो जाती है।

लूवर से एक बार 'मोना लिसा' चित्र की चोरी हो गई थी। फ्रांसीसी जाति का इससे अधिक सर्वनाश और क्या होगा, इस धारणा को लेकर बड़ा शोरगुल हुआ। बाद में वह मिल गई, किन्तु उसका अधरोष्ठ चुम्बनों के कारण विवर्ण हो गया था। चोर की मनोवृत्ति की बात छोड़ देने पर भी देखा जा सकता है कि यह अत्याचार शिल्पी की चित्रसार्थकता के प्रति कितना बड़ा सम्मान है। यह गल्प लूवर के एक यशःप्रार्थी चित्रकार ने श्रद्धापूर्वक सुनाई थी। मनोविकार के भीतर से भी चोर की शिल्प रसिकता का लोप नहीं हुआ था। यह चोर निश्चय ही फ्रांसीसी था। फ्रांसीसी का अन्तर अत्यन्त-मुक्त एवं उच्छ्वास प्रवण है। वह सहज में आन्तरिक बन्धु नहीं हो सकता, किन्तु बन्धुत्व का उत्ताप उसमें है। इस चित्रकार ने 'मोना लिसा' की जो प्रतिलिपि अंकित की थी उसके लिए विदेशी की एक सामान्य कविता भी ग्रहण की।

आनन्द हास का एक बिन्दु कब हँस गये
भुवन में अतुल,
आज भी वह पढ़ रहा है कितने रूप कितने नव भावों में
कवि शिल्प कुल,
कब मिट जाता है हमारा सुख शान्ति से भरा
दो दिन का हास
तुम्हारे हास से आच्छन्न धरा आज भी तृप्तिहीन है,
उठता है उच्छ्वास।

क्षीण चन्द्रालोक और कुहासा से आच्छन्न 'पारी' रात्रि पेरिस रात्रि की परी है। मृदु आलोक में एक हंसी की बात याद आती है। वह हंसी एक चित्र में आबद्ध न होकर समस्त नगरी के बीच छिटक रही है। यह आनन्द है अथवा विषाद? यह तो केवल पारी (Paris) नहीं विश्व की प्यारी है। "तुम किसे करते नहीं प्रार्थना" स्वर्ग की अप्सरा के समान ही। तुम्हारे तीर्थ में विभिन्न रसास्वादन के लिए मधुमत्त भृंग के समान कितने लोग आवहमान काल से आते हैं—किन्तु उनमें से किसी का परिचय अथवा हिसाब तुम नहीं रखती। अनित्य जीवन के पात्र में सदैव क्षणभर के लिए भी जो सुन्दरी सुधा डालकर चली जाती है उसे किसी ओर देखने का समय कहाँ? इसीलिए पारी में अगणित पथिक आते और जाते हैं, किन्तु पारी किसी का सन्धान नहीं रखती। इस तीर्थ में कभी लोका-भाव न होगा।

"तुम्हारी नयन ज्योति प्रेम वेदना में
कभी न होवे म्लान।"

पथ और विपथ में

इस समय इंगलैण्ड में ठहरना उचित है। अप्रैल का स्पर्श पाकर सारा देश वयःसन्धिकाल के समान जाग उठा है। किसी प्रातःकाल जाग उठने पर देखूंगा कि अलक्षित रूप से 'एलम' पेड़ की शाखाओं पर कहीं कहीं छोटे छोटे पत्ते दिखलाई पड़ने लगे हैं और सेव के कुञ्ज में कोई पक्षी अपना प्रथम आह्वान आरम्भ कर रहा है। चारों ओर से कलरव उठ रहा है, मन भी स्पन्दित हो उठा है। दिन पर दिन नये नये फूल खिल उठे हैं, एक मास में ही कितना रंग बदल गया, इसी की खोज में नेत्र अपने आप घूमते फिरते हैं। एपिंग के उपवन अथवा रिचमण्ड के उद्यान के किसी कोने में कोयल की पुकार प्रथम बार सुन पड़ी, इसकी चर्चा प्रत्येक मनुष्य के मुख और समाचार पत्रों के पृष्ठों पर है। प्रकृति के जागरण में संस्कृत-कवियों का जो उल्लास था उसका आभास इस कर्म-व्यस्त विषयी इंगलैण्ड में पाता हूँ।

इन्होंने प्रकृति को संस्कृत-कवियों के आनन्द से देखा है, आवेग से नहीं। इनके नेत्र और मन पृथक् हैं, व्यावहारिक जीवन से उसका अनुभव करना चाहते हैं, पृथ्वी की धूल में उसका चरण-स्पर्श खोजते हैं, आकाश की स्पर्शहीन प्राप्ति

की अतीत नीलिमा में नहीं। मार्च-अप्रैल में ये पैदल ही दिग्विजय के लिए निकल पड़ते हैं, तैरकर, नौका लेकर, मुक्त प्रान्तर में नाचकर, हँस-खेलकर प्रकृति की संवर्द्धना करते हैं; साथ में मस्त मन और जाग्रत जीवन है। घर घर में फूलों की शोभा और उसके साथ बहिर्मुखी जीवन की लीला है। प्रकृति जाग उठी है, इसीलिए स्वतंत्र भाव से ये भी जाग उठे हैं किन्तु उन्होंने उसके बीच अपने को खो नहीं दिया है। मानव मन की प्रतिच्छवि और जीवन की उपमा ये प्रकृति के बीच खोजते नहीं घूमते। ये प्रिया के हाथ में लीला कमल, अलकों में बालकुन्द, कान में शिरीष और मेखला में नवनीय की माला नहीं सजा देते। यूरोपा ज्यादा से ज्यादा हरिणाक्षी, मरालकण्ठी अथवा रक्त पाटल की तरह हैं, किन्तु यूरोप के बीच कवि उन्हें फूलों से सजाकर फूलों की सेज पर नहीं भेज देंगे।

"श्यामास्वंगं चकितहरिणीप्रेक्षणे दृष्टिपातम्
वक्त्रच्छायां शशिनि शिखिनां बर्हभारेषु केशान्।
उत्पश्यामि प्रतनुषु नदीवीचिषु भ्रूविलासान्
हन्तैकस्मिन् क्वचिदपि न ते चण्डि सादृश्यमस्ति॥"

ऐसी बात उसके मन में नहीं आयेगी। उसके मानसी दर्पण के सामने मुख पर रासायनिक गुलाब की भस्म लगायेगी, शुभ्र लोध्ररेणु नहीं।

यूरोप प्रकृति को अपने सुख दुख से विजड़ित नहीं देखता। शकुन्तला-विरह-कातर वन भूमि यूरोप में नहीं है। यहाँ के निभृत-उपवन भवभूति के 'राम' के सान्त्वना स्थल नहीं होंगे। यहाँ जीवन का उल्लास अनुभव करने को नहीं, विलास करने का है। यहाँ मनुष्य प्रकृति को सजाता है, उसका सम्भोग करता है, उसमें अपने को डुबाकर आत्मा का लोप नहीं कर देता।

उसके साथ अच्छी तरह परिचय करता है। उसके पास सेवक का विनय लेकर नहीं आता, विजय की भोगस्पृहा लेकर आता है।

प्रकृति पर्याप्त होने पर ही प्रगति साधारणत: स्तब्ध हो जाती है। जिसे जीता नहीं जा सकता, जिसे खो देने का भय नहीं, उसके लिए कब कौन दूसरी बार चिन्ता करता है? युद्ध कर यदि छीनना न पड़े तो कौन अपने को सबल कर रखना चाहेगा? इसीलिए सुख का दान पाते पाते हम भारतवर्ष में निर्बल और आलसी हो गये हैं। हमारे उष्ण देश में अगणित जन्म होते हैं; मनुष्यों की करोड़ों की संख्या में गिनती करते हैं; मनुष्येतर की तो गिनती ही नहीं करता। इसीलिए मनुष्य जीवन जितना क्षीण है, मृत्यु भी उतनी सुलभ है। कहते हैं, जन्म और मृत्यु विधाता के कारनामे हैं, उसमें मनुष्य हस्तक्षेप नहीं करना चाहता। लक्ष लक्ष जन्म और मृत्यु अलक्षित है, जीवन भी लक्ष्यहीन है। उस पार का चित्र किन्तु और ही प्रकार का है। प्रत्येक कीट-पतंग के जीवन की धारा और इतिहास लक्षित और लिखित है; प्रत्येक फूल का नाम, गन्ध और वर्ण लोग जानते हैं, रुचि और सौन्दर्य चर्चा के क्षेत्र में उनका स्थान अति उच्च है। अपने देश के समान इनकी सार्थकता केवल कवि प्रसिद्धियों पर निर्भर नहीं करती है। इस देश के फूलों का भी जन्म सार्थक है।

केवल फूल? समस्त जीवन ही फूल के समान शोभा और सुरभि से विकसित किया जा सकता है। चारों ओर हँसते हुए मुख, स्वस्थ, सबल देह और उत्साहित मन देख रहा हूँ। पैरों में अपरूप गति भंगिमा, नेत्रों में स्वप्न और माथे पर सोने के ऐश्वर्य के लिए कितने लोगों को जाते देखा है। इस पूर्व उपकूल के तम्बुओं के शहर में एक भी ऐसे मनुष्य को नहीं देखता हूँ जिसको मन ही मन किसी फूल के नाम से भूषित

न कर सकूं। एक शुभ्र निष्कलंक मुख को नाम दिया 'लिली ह्वाइट' एक लजीले किशोर को 'स्नो ड्राप' और एक आडम्बर-मय प्राणी को 'रोडोडेनड्रन'। शेषोक्त को 'स्नैपड्रैगन' भी कहा जा सकता है।

केण्टर में वसन्त की प्रथम मादकता का उपभोग करने आया हूँ, कारण यहाँ कोई भारतीय शायद नहीं आता है। पैर और मन की शृंखला शायद खुल गयी है, इसीलिए सब ओर से अपने परिचय के हाथों से भी मुक्त होना चाहता हूँ। अपरिचित के साथ परिचय करना चाहता हूँ, और निस्संग के साथ विश्रम्भ आलाप। मैं निस्संकोच रूप से अपने बाहर आऊँगा, कारण कोई मेरी आन्तरिक स्वतंत्रता पर आघात नहीं करेगा; और अपरिचयता को अक्षुण्ण ही रखूंगा, व्यावहारिक सभ्यता का आवरण खोलने का मैंने यह प्रशस्त स्थल पाया है।

पंक्तियों में छोटे छोटे तम्बू लगे हैं, इतनी ही दूर जिससे निर्जनता भंग न हो जाय। कहीं एक परित्यक्त ट्राम गाड़ी पड़ी है, रथविहीन विद्युत रथ के समान। उसमें भी लोग रह सकते हैं। घर-मकान का झंझट नहीं। दरवाजा ठोककर अन्दर नहीं जाना होता है। कवि और कवि-बन्धु वृद्ध मैथ्यू दोनों ही यहाँ समवयसी और परस्पर संकोचहीन हैं। इस समय हमारे तम्बू में तीन किशोरों के हँसते हुए मुख दिखलाई पड़ रहे हैं— इनके लिए यहाँ आँखमिचौनी खेलने का खूब सुविधाजनक स्थान है। ये मां के साथ एक ट्राम में रहते हैं, शोरगुल और उछल कूद करते दिन बिता देते हैं; हमारे "हॉली-डे कैम्प" में इनको कौन नहीं जानता?

यहाँ सब श्रेणी के लोग, अपने अपने परिचय को पीछे छोड़ सबके समान होकर और अपने अंग्रेज सुलभ स्वभाव की कोणीयता (Angularity) घिस-घिसाकर यहाँ आते

हैं। आत्मगोपनकारी रोमान्टिक धनी सन्तान अथवा 'कैमडन टाउन' के किरानी जिस किसी के साथ हास-परिहास करना चाहते हैं तो वह वर्षा के स्रोत के समान स्वयं उत्साहित होता है, उनके कर्म जीवन के माहात्म्य अथवा लघुता के परिचय में बाधा प्राप्त न होगी। कोई याद नहीं दिलायेगा कि यह ब्राह्मण वंशावतंस है और उसके साथ परिहास करना अवाञ्छनीय है। यहाँ जो आते हैं वे सब मुक्त मन और स्वच्छ स्वभाव से सामयिक रूप में आते हैं। उदार आकाश और असीम सागर के संगमस्थल के दृश्य के सामने, कृत्रिम सभ्यता के आराम और आवेष्टन के बाहर आनन्द पूर्णिमा में जो निमग्न हो जाते हैं उनमें दाम्भिकता और संकीर्णता आने ही नहीं पाती। यह हमारे स्वभाव की स्थिति-स्थापकता का परिचय है।

प्रातराश के पश्चात् से ही दिन कैसे बिताऊंगा ठीक से नहीं कहा जा सकता। वह कई प्रकार और कितने ही रास्तों से बिताया जा सकता है। जनता और विजनता दोनों की वाणी कानों तक आ पहुँचती है। कहीं एक दल फुटबाल खेल रहा है, कहीं कहीं अन्य खेल हो रहे हैं। बालू-बेला (Sandy beach) में लड़के तथा लड़कियाँ रंगीन रबड़ की गेंद लिये हाथापाई करते, और गिरते पड़ते हैं। स्नान प्रिय लहरों की ताल ताल पर जल में नाच रहे हैं। एक दल वसन हीनता के कारण नग्नप्राय (दिगम्बर नहीं) नाना प्रकार के वाद्य-यन्त्र लिये गाते हुए सागर सम्मेलन को जा रहा है। वे चाहते हैं जनता। कोई अकेले ही धूप की उष्णता अनुभव कर रहा है, जो जितना अधिक दग्धवर्ण होकर लन्दन लौटेगा वह उतना ही आकर्षक होगा, सब उसकी ओर ईर्ष्या और प्रशंसा की दृष्टि से देखते हुए सोचेंगे कि यह अच्छी तरह छुट्टी व्यतीत कर आया है। दल के दल लोग बालू पर लेटकर धूप का दान

ग्रहण कर रहे हैं। यहाँ केवल चार पाँच मास सूर्यदेवता भली भाँति दिखलाई पड़ते हैं, इसीलिए उनकी किरणधारा संचित करने के लिए इतना आग्रह है। सब आश्चर्य के साथ सोचते हैं, भारतीय के शरीर में कितनी प्रचुरता के साथ सूर्य का उत्ताप संगृहीत है, और इसीलिए जान पड़ता है गरम देश से आने पर भी पहले-पहल उन्हें कम जाड़ा लगता है।

और यदि इच्छा हो तो उस विस्तीर्ण बालूतट पर एकाकी उपलबन्धु के पथ पर सागर जल को छूते हुए मन ही मन निरुद्देश यात्रा की आवृति कर बहुत दूर चला जाऊँगा। शायद किसी से भेंट होने पर विजनता भंग न होगी, अथवा कोई मुख की ओर देखकर केवल हँसकर चला जायगा, शायद कोई पूछ बैठे—"पथिक क्या तुम रास्ता भूल गये हो?"

इस एक प्रश्न से कितने प्रश्न और कितने प्रश्नों की अतीत कथा का आभास मन में उठ सकता है। कल्पना का स्रोत बाँध तोड़कर छूट पड़ेगा। किसी अनजान स्थान में, किसी हठात् दृष्ट सराय में, किसी विजन गुलाब की लता के वितान की छाँह वाले गलीपथ पर कोई तन्वी, सुनील नयना, कनक केशिनी, कपाल कुण्डला, निमिषमात्र को दिखलाई पड़कर ओझल हो जायगी। तब, तब, सम्भवतः

"आशा-सा चञ्चल आलोक,
विकम्पित होता जल के बीच।"

अथवा सम्भव है कभी सागर का कोलाहल त्यागकर नगर का लोकालय अधिक अच्छा लगे। सेव कुञ्ज से पैदल चलते हुए परिचित इंगलैण्ड के दृश्य देख सकेंगे और मन पुलकित हो जायगा। कितनी कविताओं में इसका वर्णन है, कितना घनिष्ट परिचय है, कितने सुकुमार सौंदर्य से इस दृश्य को साहित्य में प्रकाशित किया गया है। प्रत्येक भूमिखण्ड का वर्णन कर उसे अन्य से

पृथक् कर छाँट लेना होगा, कारण इस देश के स्थान वर्णन में कवि की प्रसिद्धि का झंझट नहीं है। ये अपने अन्तर से अपने देश के स्निग्ध सौकुमार्य को देखते है, इसी प्रकार किसी लोकालय को देखने की कभी कदाचित् इच्छा हो सकती है।

"Sweet William with h's homely cot.age-smell,
And stocks in fragrant blow,
Roses that down the alleys shine afar
And open Jasmine-muffled lattices,
And groups under the dreaming garden trees,
And the full moon, and the white evening star."

Jasmine muffled lattices इतने ही में सौन्दर्यमय सुशोभन इंगलैण्ड मूर्त्तिधारण कर प्राणमय हो उठा है।

'नार्फोक ब्राड्स' की नीति है—मधुर बहेगी वायु, बह जाऊँगा रंग में। यहाँ जल में स्वच्छन्द स्वेच्छा-विहार का श्रेष्ठ स्थान है। पाल खोल नौका (Yacht) सप् सप् करती शान्त स्वच्छ जल राशि के ऊपर से चली जाती है। दोनों ओर धान की बालियों जैसी लम्बी जलघास है, उसके भीतर से सर सर वायु बहती हुई नौका के स्तब्ध शब्द के साथ प्रतियोगिता कर रही है। नौका के पाल की छाया में 'डेक-चेयर' पर बैठ एक पुस्तक लेकर अथवा उदार दिगन्त की ओर आँखें खोल अथवा आँखें मूंदकर दिन पर दिन बिता देता हूँ। आहार की सामग्री के लिए स्थल पर नहीं जाना पड़ता। कहीं न कहीं नौका पर ही दूकान तैरती रहती है; किनारे पर नौका लाकर स्वप्न भंग नहीं करना होगा। किसी तृणा-च्छादन के बीच एक बगुला, किसी तट के अन्तराल में प्राचीन समय के चिह्न स्वरूप एक 'विण्ड मिल' दृष्टि आकर्षित करेगा, कल्पना के पाल से उसे लेकर कहीं उद्दाम गति से उड़ा ले जायगा। जो जितना अधिक कर्मक्लान्त है, जितना अधिक अर्थ

के सन्धान और साश्रय में विजड़ित है, रवीन्द्रनाथ के रक्त करवी नाटक के राजा के समान जो जितना अधिक स्वर्ण शृंखलित है, उसके सामयिक मुक्तकामी होने से ब्राड्स उसके निकट उतना ही अधिक विरामस्थल प्रतीत होगा। निस्तरंग निर्भय जलराशि जो शान्ति प्रलेप करती है उसकी तुलना सहज में नहीं मिल सकती। नियमनिष्ठा और व्यावहारिक सामाजिकता का अभाव सबसे अच्छा लगता है। इसीलिए जो धनी यहाँ आते हैं उन्हें विशिष्ठ मनोवृत्ति सम्पन्न कहना होता है। यहाँ जितना व्यय होता है उससे वे किसी सम्भ्रान्त विलास-स्थल पर भी जा सकते थे।

यहाँ आने पर जल से भरे धान के खेतों की बात अवश्य याद आयेगी। किन्तु इस जलराशि से दरिद्र कृषक की आशा और आशंका और कुटीरवासियों की सामान्य कुटीरों की निरापत्ता की समस्या विजड़ित नहीं है। और भी एक अभाव है जिसके लिए इस ब्राड्स को यथेष्ट परिमाण में रोमांटिक न समझ सका। एक चक्रवाक मिथुन सुकोमल शष्पराजि और स्वच्छ जलराशि को परिपूर्ण रूप दे सकता। ये बात तब विशेष रूप से याद आती है जब आसन्न संध्या के अंधकार में और नीचे नौका के भीतर उतरने की आवश्यकता नहीं रहती, सारे दिन के लक्ष्यहीन, व्याघातहीन जलविहार के आनन्द में एक अकारण और परिचयहीन अव्यक्त विषाद छायापात करता है। मालूम होता है सम्पूर्ण पृथ्वी और समस्त आकाश को हृदय में ग्रहण करने का विशेष प्रयोजन है। इस जल के ऊपर जो शुभ्र, शान्त सुप्तप्राय ज्योत्स्ना बिखर पड़ेगी उसको भी अन्तर में न लाने पर सारे दिन के उज्ज्वल आलोक को सम्पूर्णता नहीं दी जा सकेगी।

समस्त देश के बसन्तकालीन स्पर्श के अनुभव के लिए

एक अव्यक्त व्याकुलता जाग उठती है। पुस्तक के पृष्ठों से वृक्षों के पत्तों की ओर कितनी ही बार मन चला जाता है। लाइ-ब्रेरी के बिजली के प्रकाश से नेत्र बार बार बाहर के हल्के सूर्य के प्रकाश की ओर आकृष्ट होते हैं। इस समय परीक्षा का विषय लेकर व्यस्त होना मानो पाप है, अपवित्रता है। घर और बाहर, कर्तव्य और प्रकृति की खींचतान में पड़कर अवस्था संगीन हो उठती है। इस अवस्था में केवल सन्धिस्थापन करना ही एक मात्र उपाय है। मैंने भी वही किया। सप्ताह में साढ़े पाँच दिन काम और डेढ़ दिन बेकार। देश में रहने पर इतनी बेकारी की भी कल्पना करते भय होता और बहुत से हितैषियों के हित वचन और वाक्य वर्षण का भी डर लगता। यहाँ कोई नहीं है, स्वेच्छा विहार की सुविधा सुलभ है, पथ भी प्रचुर हैं। अतएव शनिवार होते ही छुट्टी और बाहर निकल आना। उसके फलस्वरूप पढ़ना भी अच्छा लगने लगा। पुरस्कार निश्चित है यह सोचकर शायद परिश्रम करने में भी माधुर्य प्राप्त होता है। और छुट्टी के पश्चात् काम में जो मन लगा और उत्साह दिखलाई पड़ने लगा उसे देश में कभी अनुभव नहीं किया। देह में क्लान्ति और मन में अशान्ति भी नहीं रही।

किसी किसी दिन घोड़े की पीठ पर बैठ कर घूमने जाता। लन्दन के बाहर बहुत दूर ट्रेन से जाकर एक स्थान पर उतर पड़ता। वन वन में अश्वारोहण का अपरिसीम आनन्द प्राप्त होता; प्रत्येक क्षण मानो नवयौवन ला देता। कभी मार्ग में अपरिचित व्यक्ति से साक्षात्कार होता और कभी सारे दिन मेरा एक मात्र बन्धु यह चतुष्पद रहता। वन की विजनता नगर की जनता के परे अत्यन्त मधुर लगने लगी। कभी कुछ लोगों के साथ मिलकर मोटर से जाना होता। इसी प्रकार

का एक अभियान उत्तर वेल्स के पर्वतीय अञ्चल पर हुआ। किसी किसी स्थान पर शिमला-पथ के समान चढ़ाई और उतराई है, किन्तु उस पथ का श्याम सौन्दर्य यहाँ नहीं था। यहाँ पहाड़ी मार्ग था और पत्थरों के बीच बीच अगणित फूलों का सौन्दर्य था। पार्वत्य स्काट्लैण्ड और पार्वत्य वेल्स का रंग विभिन्न है। प्रथम श्यामल और अयत्न वर्द्धित है, द्वितीय धूसर और सुसज्जित है। वेल्स अधिक सभ्य है, और बात कम करता है।

साधारणतः भ्रमण भी कम नहीं होता। सप्ताह में प्रायः कहीं न कहीं पैदल चला जाता। अवश्य पहले शहर तली के पश्चात् कई मील ट्रेन से चलना होता, कारण इंगलैण्ड में नगर ग्राम को क्रमशः ग्रास कर रहे हैं, और भविष्य में ग्राम नगर के साधारण संस्करण मात्र रह जायँगे। कितने छोटे छोटे ग्रामों को अपनी खोज के आनन्द में नवीन सौन्दर्य से मण्डित देखा। कितनी सामान्य झील, साधारण उपवन और प्राचीन गिर्जा को वर्ड्स्वर्थ के अनुकरण में देखने की चेष्टा और इच्छा की। "The joy of widest Commonalty spread"—का आनन्द कितने दिन कितने तुच्छ वस्तुओं में अनुभव किया जो किसी समय शायद हास्यास्पद लगे।

बीच बीच में अप्रिय प्रसंग भी आ जाते। एक दिन एक साथी ने मिस मेयो की पुस्तक का उल्लेख किया और उसे लेकर खूब आलोचना हो गयी। तब यह भी समझ में आया कि अपने देश के कितने अभिभावक इस देश की 'माया राक्षसी' के प्रभाव से सतत् शंकित रहते हैं। हममें से कोई कोई यदि उनके सम्बन्ध में विशेष अन्याय की धारणा का पोषण करता है, तो वे भी उसी प्रकार का अन्याय और भूल कर सकते हैं। प्रवासी छात्रों के बीच जो उच्छृंखल हो उठते हैं केवल उन्हें ही दोष नहीं देना होगा, जिस सामाजिक अवरोध एवं अन्धकार

से वे हठात् स्वाधीनता और तीव्र आलोक में आ पड़ते हैं उसे भी दोषी ठहराना होगा। यह देश कुछ माया राक्षसी से परिपूर्ण नहीं। कितने लोग इस कृष्णकलि के देश के विदेशियों को निगल जाने के लिए रसना को तेज करना चाहेंगे। हम अपने देश से जो गप्पें सुनते हैं वे व्यतिक्रम हैं, नियम नहीं। और क्या हममें कम खराबी हैं? वरन् वे और भी अधिक नग्न, असहाय और अशोभन रूप से आँखों के सामने आती हैं। कितनी बार यह सोचा है कि जहाँ धर्म दयाहीन, समाज क्षमाहीन और मनुष्य मनुष्य के प्रति उदासीन है, वैराग्य जहाँ आलस्य का आवरण और क्षमा जहाँ दुर्बलता का आभरण है, वहाँ इंगलैण्ड की इतनी अधिक निन्दा आलोचना ठीक नहीं है। वरन् उसकी गुणावली की ओर ध्यान देने से अनेक उपकार हो सकते हैं। सबसे अधिक तो यह स्मरण रखना उचित है कि जिन्होंने इतनी उन्नति की, जिनका इतना पृथ्वी विस्तीर्ण साम्राज्य · इतना ही क्यों हमारे सनातन धर्म और ब्रह्मचर्य के देश पर भी जिनका इतना ऐश्वर्य और प्रसार था, इतना साहित्य और इतनी सुकुमार कला है, उस जाति की यह उन्नति असच्चरित्रता के ऊपर प्रतिष्ठित नहीं हो सकती। दोषदर्शी होने की अपेक्षा गुणग्राही होने में लाभ है।

और एक छुट्टी बिताने के लिए बाहर निकल आया। भारतवर्षीय ग्रामोन्नति के लिए इंगलैण्ड में एक समिति है। उसका ही वार्षिक अधिवेशन होगा। अवश्य मेरा उद्देश्य ग्राम्य सभा नहीं ग्राम्य शोभा है। अति सुन्दर प्रासाद में आनन्द के साथ शहर के आराम की प्राप्ति हुई। यह जाति सौन्दर्य प्रिय है, इसीलिए सभा का अधिवेशन इतने सुन्दर गृह में, इतने सुन्दर आवेष्टन के बीच हुआ। प्रातःकाल 'थ्रास' के कूंजन के आरम्भ होने के साथ ही साथ नींद टूट जाती है, और कितनी दूर जाने

के लिए बाहर निकल पड़ता हूँ। हरे मैदान में हठात् एक स्रोत-स्विनी मिलेगी, कहीं वृहदाकार गायें चर रहीं हैं, कहीं एक हल चल रहा है, एक स्थान पर कटे वृक्ष की ठूंठ पर एक शिशु बैठा है। चारों ओर सम्पूर्णता और तृप्ति का आभास पाता हूँ जिसका अभाव अपने देश में बहुत कष्ट देता है। पास ही एक स्थान पर एक कृत्रिम पहाड़ बना है, उसके भीतर सुरंग में रेलगाड़ी चलती है, कुछ पैसा देकर उसपर चढ़ा जा सकता है। सारे दिन नाना विषयों में व्यस्त रहना आसान है। समिति का विषय अधिक आवश्यक नहीं जान पड़ता क्योंकि मन गृह के भीतर नहीं मुक्ति प्रान्तर में है? कुछ आगे एक लोक-गीत सुनकर आया हूँ, ग्राम के छोटे छोटे लड़के लड़कियों ने दल बनाकर Community Song (लोक-गीत) गाया, उस गान के सहज भाव और सहज सुर थे। उनका सम्मान ग्राम और प्रकृति की आँखों में है, नगर के सुशिक्षित अति-निपुण सुर-शिल्पी के निकट इनका मूल्य नहीं है। किन्तु संध्या की लम्बी छाया में मुझे ये गीत अच्छे लगे, वर्ड्सवर्थ की हाई-लैण्ड वासिनी कृषक बालिका के गान के समान मेरे मन को किस सुदूर का आह्वान सुन पड़ा।

उन्होंने वहाँ भारतवर्षीय गीत सुनना चाहा था, किन्तु हमारे यहाँ लोक-गीत लुप्त हो रहे हैं और शहर में कुछ सामान्य लोग-गीत कुशल हैं शेष सब गीत हीन हैं। अतएव भारतीय कण्ठ उन्हें आनन्द देने का कोई आयोजन न कर सका, अपना तो निरानन्द का देश है।

इस प्रकार हरफोर्डशायर के उस ग्राम में आनन्द में एक दिन सम्पूर्ण शतदल के समान विकसित होने लगा। धरणी फूलों से आच्छन्न हो गयी। 'डेफोडिल' की स्निग्धता से अन्तर स्निग्ध हो उठा। 'हेज' की लता के पास जाते ही पक्षी बोल

उठते हैं, झाड़ियों का स्पर्श जैसे रोक रखना चाहता है। 'गर्स' की सुवास रात की अनिद्रा आकुल करती है और निद्रा गहरी हो जाती है। बार बार समझता हूँ:—

पुकार रहा मुझे
अव्यक्त आह्वान रव में शतवार
सारा संसार !

इटालिया-रूपसी

'रेनेसांस' में मनुष्य ने अपना और पृथ्वी का आविष्कार किया। इसके द्वितीय विषय के विकास में शिल्प और कृष्टि का एक अपरूप और अतुलनीय आविर्भाव पाता हूँ। मानव और पृथ्वी के इतिहास में इतना बड़ा उद्बोधन और कभी नहीं हुआ। मानवता की गौरवगाथा इस प्रकार और कहीं नहीं गायी गयी 'देवता ओलिम्पस से उतर कर फिर मनुष्यों के बीच रहने लगे।' इस जीवन धारा ने जर्मनी में धर्म-जागरण और इटली में चारु-शिल्प जागरण ला दिया।

इटली के नेत्रों का रंग बदल गया। रिक्त, वञ्चित, क्षुधार्त, तपश्चर्या से पूर्ण, भोगमय, ऐश्वर्यमय, आनन्द रसालुप्त प्राणधारण की प्रणाली हो गयी। उसके साथ जीवन की नदी में वर्षा के प्लावन के समान अनेक क्लेद भी बह गये। एक प्रवाद है, Basle के एक गिर्जा के तोरण पर अंकित था—मृत आत्माएँ शेष विचार के दिन कब्र से उठकर शीघ्रता से पोषाक पहन रही हैं। उसके सौ वर्ष पश्चात् इटली में पोप की कब्र के ऊपर ब्रोञ्ज की नग्न नारी मूर्त्ति बिठा दी गयी थी। पृथ्वी पर यही नियम है। क्रिया के पश्चात् अमोघ प्रति-क्रिया नियति का न्याय है।

ऐसा कहने में अतिशयोक्ति न होगी कि मध्ययुग में मनुष्य आधिभौतिक चिंता में मग्न था एवं असहिष्णु याजक सम्प्रदाय और

निरुद्ध-द्वार अनुर्वर ज्ञानमार्ग ने आदिम मनुष्य और उसके साथ सहज सुन्दर प्रकाश का कण्ठरोध कर रखा था। फिर भी यूरोप में रूप पिपासा और काव्य जिज्ञासा एकदम बन्द नहीं हो गयी। इसीलिए कवि और शिल्पी ने सब इन्द्रियों का द्वार न रुद्ध कर बार बार आन्तरिक अनुराग और जीवन उपभोग की स्पृहा लेकर 'शिवैलरी' और रहस्यमयता के जाल और उपमा रूपक के अवगुण्ठन को भेद कर मध्ययुग के बीच स्वाभाविकता लाने की चेष्टा की थी। सा विद्या या विमुक्तये। नव जागरण की उषा में मानवता ने उसी विद्या को दश-शताब्दी की शृंखला भग्न कर मुक्ति दी। मानव को युक्ति-ग्राह्य आकांक्षा-मय पृथ्वी पर जीवित रहने का अधिकारी स्वीकार कर स्वर्ग के मिथ्या स्वप्न और नरक की अलौकिक भीति के पञ्जे से उसका उद्धार किया। उसकी मनीषा को मुमुर्ष याजक शिक्षा और गतानुगतिक शास्त्र, चर्चा के बाहर रूप यौवन और स्वाधीनता की अभिव्यक्ति करने की क्षमता प्रदान की। विद्या चर्चा की लिप्सा अब और आश्रमवासी श्रेणी के विषय का एकान्त अधिकार नहीं रह गया, अनुसन्धित्सा के साथ मिलकर समस्त समाज को रोमान्स के आवेग से परिपूर्ण कर दिया। स्थापत्य शिल्प धर्ममन्दिर में सीमाबद्ध नहीं रहा। इस लोक की ओर आकृष्ट होकर नव जागरण के अग्रदूतों ने भौगोलिक सीमारेखा लुप्त कर नव पृथ्वी का आविष्कार किया।

प्राचीन विद्या के एक नवीन साधक इस समय बोले थे "मैं जाता हूँ मृतकों को जगाने", किन्तु मृतकों को जगाकर ही वे क्षान्त नहीं हो गये; उन्होंने जीवित को स्वीकार किया; धूल की धरती को सुन्दर आनन्दमय कहकर उसका आविष्कार किया। आधुनिक सभ्यता की इस मोहिनी उषा में जीवित रहना भगवान् के आशीर्वाद के रूप में परिगणित हुआ और यौवन

स्वर्ग सुख हुआ। पार्थिव सुख और 'पैगन' भोग क्षणस्थायी हैं, दृश्यमान इहकाल अदृश्य परकाल का प्रतीक है और मानव जन्म परजन्म के प्रस्तुत होने के लिए है, ये सब विघ्न निषेध वाणियाँ अब और नृत्य चटुल चरणों और संगीतोच्छल कण्ठ को बाधा नहीं दे सकीं।

जो कुछ सुन्दर है वही इटली में शाश्वत हो उठा। बहु निन्दित, दीर्घकाल अनादृत मानवदेह पवित्र देवता की सम्पत्ति हो गयी। मानव-अनुभव अतिमानव की महिमा में शुद्ध कहकर विवेचित हुआ। प्रेम कहानी और देव-गाथा के नायक नायिका के मनुष्य के समान व्यवहार करने में धर्महानि का भय नहीं रहा। धर्म के शासन की उपेक्षा कर शिल्प की साधना सम्भव नहीं थी; फिर भी गिर्जा की पृष्ठ-पोषकता में शिल्प जाग उठा। प्रिया की प्रतिलिपि देवी के आलेख्य से फूट-कर बाहर आयी, देवी की मूर्त्ति प्रिया में पर्यवसित हो गयी, वैष्णव कविता की वही अमर व्याख्या—

"और कहाँ मिलेगा?

देवता को प्रिय करें और प्रिया को देवता" (रवीन्द्रनाथ)

यह वाणी मानो 'रेनेसांस' की मर्मकथा की प्रतिध्वनि है। मनुष्य को देवभक्ति की आन्तरिकता से और देवता को मानव प्रेम की अन्तरंगता से शिल्पियों ने देखा और आँका। इसीलिए इटली के चित्र में हम प्रकृत मनुष्य की प्रतिमूर्त्ति पाते हैं, चाहे वह देवता के रूप में हो अथवा मनुष्य के रूप में।

फ्लोरेन्स के उफिफ्त्सि (Uffizi) प्रासाद में यह बात बार बार मन में आने लगी। बेचारे आन्द्रियादेल सार्तो के सब चित्रों में एक ही नारी है; नाना आवेष्टन, नाना भंगिमा और नाना विषय में केवल वही एक नारी है। देखकर यह सोचना कठिन नहीं है कि यह भाग्यवती कौन है। किन्तु शिल्पी

का जीवन बड़ा करुण था। प्रथम जीवन में आन्द्रिया रैफेल आदि के समकक्ष प्रतिभा थी, किन्तु उस प्रतिभा का विकास प्रिया की रूपराशि में ढक गया। वे लूक्रिजिया को छोड़ और किसी को 'मॉडल' नहीं बनाते, उसके लिए अपनी क्षमता का अपचय और प्रतिभा का अपव्यवहार करने में कुण्ठित नहीं हुए। प्रिया उनके शिल्प में कोई प्रेरणा जाग्रत न कर सकी, इस आविष्कार ने शिल्पी रूप से पराजय की वेदना को दूना कर दिया। ब्राउनिंग की एक कविता में उनके जीवनाकाश की करुण आभा बड़े सुन्दर रूप में प्रस्फुटित हुई है। लूक्रिजिया (लूक्रिश) गोपन प्रणाली के पास जाने के लिए व्याकुल है अथच तब भी आन्द्रिया उसी की बात सोचते हैं। इहलोक के उस पार सम्भवतः वे फिर एक बार रैफेल, लियोनार्दो और एंजिलो आदि से प्रतियोगिता का सुयोग पा जायँगे, किन्तु यह बात भी सोचते हैं कि पराजय ही उनके अदृष्ट में अखण्डनीय है, कारण प्रेयसी तब भी पार्श्ववर्तिनी ही रहेगी।*

चित्र प्रतिलिपि के कल्याण में फ्लोरेंस के साथ आजीवन परिचित होने पर भी इसमें इतना माधुर्य और रोमान्स है कि इसे रूप कहानी की राजपुरी कहने की इच्छा होती है। 'पित्ति' प्रासाद में रैफेल के 'मैडोना' को देखकर शैशवकाल की याद आयी। जिस प्रस्तरीभूत बालक ने पैर के तलवे का काँटा निकाल दिया था उसे पुकारने की इच्छा हुई। 'उफिर्जि' से 'पित्ति' तक आने के मार्ग में 'आर्नो' नदी के ऊपर 'भेच्चो' सेतु पर प्राचीन वस्तु और अलंकारों की दुकानों को चित्रराज्य के अन्तर्भुक्त ख्याल

---

* शिल्पी Greuze के 'भग्न कलस' चित्र की कहानी भी बहुत कुछ इसी प्रकार करुण है। उसके भी भाग्य से एक ही नारी में शिल्प प्रतिभा और प्राणप्रेयसी के पाने का व्यर्थ प्रयास हुआ था।

हुआ, और मन में आया 'दान्ते के स्वप्न की' रूपक चित्र की बात, यहां 'पॉपी' फूल निद्रा एवं महानिद्रा में है, निर्वाणोन्मुख प्रदीप विगतप्राय प्राण हो रहा है, और देवशिशु बाहित लघुश्वेत मेघ दान्ते की प्रेयसी वियात्रिच की आत्मा है।

बंकिमचन्द्र ने लिखा है—बाल्यप्रणय में कोई अभिसम्पात है। उत्तरकाल का प्रायः अवश्यम्भावी विच्छेद इस प्रणय को करुण स्मृति मात्र कर देता है। किन्तु इस प्रीति की सकरुण स्मृति जो स्वर्गीय सुर-सृष्टि कर धरा पर ही अमरावती की रचना कर देती है उसका अतुलनीय उदाहरण 'दान्ते' की जीवनी में पाता हूँ। १२७४ सन् में केवल नौ वर्ष की आयु में दान्ते ने अपने प्राणों की प्रेरणा नौ वर्ष की बालिका की मूर्ति में प्रकाशित होते देखी। सांसारिक प्राप्ति की अतीत अवस्था से केवल पच्चीस वर्ष की आयु में वियात्रिच परलोकवासी हुईं। किन्तु इटली के श्रेष्ठ कवि उसी समय काव्यगाथा में अपनी मृत प्रेयसी के वन्दना गीत गा उठे। उन्होंने एक मोहक स्वप्न देखा और उसके फलस्वरूप निश्चय किया कि जितने दिन तक वे इस वरानना का उपयुक्त वर्णन नहीं कर पायेंगे उतने दिन तक उसके सम्बन्ध में कुछ न लिखेंगे। हे परमस्रष्टा, तुम्हारे प्रसाद से ही जीवन पृथ्वी पर आता है, तुम आशीर्वाद दो जिससे मेरा जीवन और भी कुछ वर्ष इस पृथ्वी पर रह सके जिससे मैं उसके सम्बन्ध में इस प्रकार लिख सकूं कि इसके पूर्व नारी के सम्बन्ध में ऐसा न लिखा गया हो। इसके पश्चात् हे प्रभु, मुझे तुम यहां से उठा लेना जिससे मैं पुण्यात्मा वियात्रिच के वरानन दर्शन महोत्सव का लाभ करूँ ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार वह परात्पर परमेश्वर के दर्शन पा रही है। 'विटा नुओवा' की नव जीवनी में अनन्त जीवन का जो आभास और असीम प्रेम का जो आवेग विश्व-साहित्य में पाता हूँ उसका स्थान चिरकाल तक रहेगा।

दान्ते की इस प्रमकहानी में प्रेम ने जितनी प्रेरणा दी है, कवि के संयम और साधना ने उसको इसकी अपेक्षा कम सौंदर्य और अनिर्वचनीयता नहीं दी। हमारे क्षणिक उच्छ्वास की पलक में प्रकाश की जीवनधारा में दान्ते की शिक्षा और सहिष्णुता का विशेष प्रयोजन है।

किसने इसका नाम 'फ्लोरेंस' रखा? इतना मधुर नाम छोड़ उसे और कुछ जँचता ही नहीं। Duomo (गिर्जा) का बाहरी भाग स्वप्न में दृष्ट एक कारुकार्य है, और उसके ही उपयुक्त पास का वर्ण वैचित्र्यमय स्तम्भ Campanile है। Baptistry के तीन ओर के तीन द्वार देखकर माइकेल एञ्जेलो ने उसे स्वर्ग तोरण के उपयुक्त कहा था। गिर्जा के ऊपर से शहर का जो दृश्य पाया जाता है वह अपूर्व है।

रूप का आदर्श क्या है? हम सब के ही मन के गहन अतल में स्वप्न-संगिनी अथवा निखिल मानस रंगिणी का एक आदर्श रहता है जिसे भाषा में प्रकाशित करने पर वह अन्तर्धान हो जाता है, और जो चिरकाल ही हमारे सम्पूर्ण प्रश्न और प्राप्ति के अतीत तट पर रहता है। फिर भी हम एक आदर्श रखते ही हैं—वह चाहे देह सौष्ठव का हो, प्रकाशभंगी का हो, अथवा प्राणमयता का। उसको कवि वर्णित करता है और शिल्पी व्यञ्जित। अपनी स्वप्न-मूर्ति और कल्पना के प्रकाश के लिए हम चिरकाल उसके निकट आते हैं। इसीलिए हम शिल्प के इतिहास में अनन्त सौंदर्य की शोभायात्रा देखते हैं। प्रस्तरयुग में नारी विशेषतः वंश की जननी थी—जिस वंश को बर्फ के युग में यूरोप के कठिन शीत से जीवन-रक्षा करनी पड़ी थी। इसीलिए प्रस्तर युग की नारी थी स्थूलांगी-वीरांगना, केवल गजगामिनी नहीं साक्षात् गजेन्द्राणी। गुहा-मानव गुहागात्र में 'वैसन' शिकार-प्राप्ति के लिए उसका चित्र अंकित करते थे। इससे ही उन्होंने शिल्प को किस रूप में ग्रहण किया

था, समक्ष में आ जायगा। युग-युग में पुरुषों ने संगिनी की जिस रूप में आकांक्षा की उसे उसी रूप में अंकित किया और नारी भी पुरुष के सामने उसी रूप में आविर्भूत हुई। सौष्ठव एवं सामञ्जस्यमय निरवद्य गठन भंगिमा का सौंदर्य ग्रीक का आदर्श था। भगवान् ने अपनी आकृति से मानव का निर्माण किया, धर्म की इस शिक्षा को ग्रीक शिल्पियों ने देवी के सौंदर्य को मानवीय आकार देकर अक्षरशः प्रकाशित कर दिया; उनकी वीनस स्वर्गीय अथवा स्वर्ग सुषमामय नारी की श्रेष्ठतम अभिव्यक्ति है। उनके निकट तिलोत्तमा सुन्दरी नागरिक फ्राइनी श्रेष्ठ देव सुन्दरी के मानवरूप की प्रतीक थी एवं इस कल्पना से उन्होंने देश के सम्पूर्ण शिल्प-रसिकों का समर्थन पाया था। आर्ट के स्वर्णयुग में इटली के पर्वतीय शहर की सुन्दरियां (मैज्डोना) देवमाता के मॉडेल रूप में खड़ी हुईं। उन्होंने ही प्राचीन धर्म कहानियों के देवियों के चित्र और मूर्ति को रूप दिया। लियोनार्डो की मोनालिसा की ही बात नहीं कहता। अन्य सभी शिल्पियों ने मानवीय मूर्ति में देवी को उपलब्ध किया। करेज्जियो सब प्राचीन देव-कहानियों के चित्रों में श्रेष्ठ सुन्दरियों को 'वीनस' के रूप में सजाते थे। फ्लेमिश और शिल्पी भी यही करते थे, किन्तु उनके देश के सौंदर्य का मानदण्ड सब के लिए आकर्षक न था, इसीलिए रूबेंस और रेमब्रांट की हंसमुख गृहणियाँ कभी सौंदर्यजगत् में चंचलता नहीं ला पायीं। चित्रशिल्प की एक और शताब्दी में शिल्पी नारी का चित्र आँकते समय देवी को भूल ही गये। अठारहवीं शताब्दी के फ्रांसीसी पम्पाडुर, डुवारी आदि ने राजप्रेयसियों की कक्षसज्जा में मनोनिवेश किया, और अंगरेज शिल्पी अभिजातों के चित्र रूप लेकर व्यस्त रहे। शेषोक्त चित्र इस समय अमेरिकन लक्षपतियों के आदर की सामग्री हैं—

कारण ये मार्किन धनी के पूर्व-पुरुष के परिचय का श्रेष्ठ विज्ञापन और उपकरण हैं।

फिर भी तो वह मानवी हैं। किन्तु चित्र राज्य में और भी अनेक देवी अथवा नारी की प्रतिकृति है जिनका मानवीय आकृति में गठन हुआ है या नहीं इसमें सन्देह है। रसेटी के युग की सारस कण्ठी वेत्रवती आदि की आकृति अथवा वर्तमान युग के Cubist आदि के नारी चरित्र के अनुकरण में यदि मानवी को देखा जाय तो मूर्तिकला के यंत्रों को प्रस्तर के स्थान पर रक्त-मांस की देह पर चलाना होगा। रुचि का वैचित्र्य इसी को कहते हैं। फिर भी युग-युग से विभिन्न रुचि और शिल्पधारा का प्लावन प्रतिहत कर ग्रीस की सौंदर्यसृष्टि अपनी महिमा का श्रेष्ठ सम्मान पाती रहेगी। मिलो की वीनस अथवा मेदिची की वीनस-मूर्ति चिरकाल जगत् में श्रेष्ठ मानवी मूर्त्ति के रूप में पूजा प्राप्त करती रहेगी। 'चाकलेट' बक्स की रूपसी मूर्त्ति को देखने के अभ्यस्त और संतुष्ट शिक्षाहीन मनुष्यों के भी नेत्रों में यह नूतन आलोक में नूतन स्वप्नलोक का सन्धान देगी।

एक चित्र को छोड़ देने से फ्लोरेंस का परिचय पूर्ण न होगा। 'वीनस का जन्म चित्र' रवीन्द्रनाथ की उर्वशी कविता की अनेक पंक्तियां याद दिला देता है। मंत्रमुग्ध महासिन्धु उच्छ्वसित सहस्र उर्म्मिमाला के फन अवनत कर चिर यौवना के पैरों तले लोट रहा है। वीनस अथवा उर्वशी कोई भी नाम दिया जाय, शिल्पी की स्वप्न प्रतिमा का परिचय वह स्वयं है, 'नहीं माता, नहीं कन्या, नहीं वधू' 'विकसित विश्व वासना के अरविन्द' ऊपर 'अति लघुभार' चरण रखकर वीनस खड़ी हुई है।

विधिलिपि विचित्र है। इन ऐतिहासिक अनिन्द्य सुन्दर गृहों ने चिर दिन मनुष्य का आनन्दवर्धन नहीं किया है। वार्गोलो प्रासाद का सुन्दर अलिन्द्य चिर दिन शान्त सौंदर्य का स्थान नहीं

था। एक समय यहाँ अनेक व्यक्तियों ने सूली पर प्राण दिये थे, और म्यूजियम में रखे विभिन्न अस्त्रों का विभिन्न दृश्यों के अभिनय में व्यवहार किया जाता था। यहाँ पहले कारागार था, फिर नगर रक्षकों का कार्यालय हुआ। इस सुन्दर प्रासाद के साथ ऐसे असुन्दर कार्य के सम्बन्ध की चिन्ता कर कुछ कष्ट होता है। माइकेल एंजिलो के 'बैकस' को देखकर यह बात याद आये बिना नहीं रहती। 'लानसि' भवन के तोरण पर चेल्लिनी की अमर सृष्टि 'Perseus' है, 'भेक्ची' प्रासाद के सामने ही (Neptune) वरुणदेव खड़े हैं, किन्तु यह भवन विभिन्न युगों में नागरिक भवन था, कारागार और प्रासाद के रूप में इसका व्यवहार हुआ था, और इस समय गवर्नमेंट का आफिस है। इसी स्थान पर कर्म और धर्म के वीर संन्यासी 'सावोनरोला' बन्दी थे और बाहर के चबूतरे पर उनका जीवित अग्निदाह हुआ था। इस नगर का अद्भुत भाग्य है। इस इतिहास के साथ विभिन्न भाग के तीन महामानव—माइकेल एंजेलो, गैलिलियो और मेकियावेलि सम्बन्धित हैं, तीनों की एक ही मन्दिर में स्मृति है।

मिलान, जेनोआ, फ्लोरेन्स, वेनिस आदि ने स्वातन्त्र्य के बीच से ही विश्व सभ्यता को जो सहस्र अवदान दिया है उसकी तुलना एकीभूत इटली में नहीं भी मिल सकती है। प्रत्येक छोटे राष्ट्र में जनमत प्रबल और संहत रहता है, प्रत्येक नागरिक के नेत्र एक विशिष्ट व्यक्ति पर रहते हैं, जनसाधारण की करतलध्वनि में बन्धुओं के उत्साह और आनन्द ध्वनित हो उठते हैं, इस प्रकार उत्साहित छोटे राष्ट्रों के दान ने एक इटली के बदले बहुत से देशों के सम्मिलित दान के समान सम्भार दिया। इसीलिए इटली के प्रत्येक नगर को एक एक देश के रूप में अनुभव करना होगा। उनकी विभिन्न सम्पत्ति

एवं शिल्प धारा को एकबार ही मन में रख लेने से उनका प्राकृतिक परिचय नहीं पाया जा सकेगा।

To see Venice and then die—चलचित्र के कल्याण में इस चित्र के समान सुन्दर शहर के साथ पूर्व परिचय न रखने वाला कोई विदेशी नहीं मिलेगा। किन्तु चित्र देखने से जो धारणा होती है उस कल्पना के वेनिस की अपेक्षा वास्तविक वेनिस अधिक सुन्दर है। यही एक स्थान है जहाँ 'Yarrow unvisited' की अपेक्षा 'Yarrow visited' अधिक विस्मयकर स्थान है, यह अधिक आनन्द देता है।

सम्पूर्ण शहर को एक खाल ने सुन्दरता प्रदान की है, ठीक जिस प्रकार कंगन बाहुलता के सौन्दर्य को बन्धन से घेर-कर पूर्णता प्रदान करता है। यह खाल यहाँ का प्रधान राजपथ है, इसी के दोनों ओर अभिजातों की प्रासादमाला, इतने दिन के लवणीय जलस्पर्श से भी खराब नहीं हुई है। 'गण्डोलिया' (नाव) के सामने की ओर मुख कर 'Poppa' में खड़े होकर मांझी एक ही डाँड से उस नाव को चलाते हैं। यात्रियों के लिए बीच में एक छोटा घर (felze) बना हुआ है। वेलेनी की तसवीर में जो दोनों तरफ खुला हुआ, हल्की लकड़ी के ऊपर सुनहले रंग से सजा हुआ 'गन्डोला' (नाव) देखते हैं वह आज कल दिखाई नहीं देता। फिर भी जितने यहाँ पर हैं उतने में भी अन्ततः जल विहार न करने पर वेनिस आना ही व्यर्थ है।

पृथ्वी के इतिहास में वेनिस के राष्ट्रगत मूल्य की तुलना आसानी से प्राप्त न होगी। प्राच्य आक्रमणों के विरुद्ध यूरोप के प्रहरी इस क्षुद्र शहर ने एक नूतन राष्ट्रतंत्र का गठन किया था। नौयुद्ध विशारदता में इसका समकक्ष नहीं मिल पाता। मध्ययुग में विलास और ऐश्वर्य में भी वेनिस यूरोप की ईर्ष्या

और आदर्श था। विभिन्न शिल्पधारा को आश्रय देकर उसने उदार मनोवृत्ति का परिचय दिया है; एवं वैजेन्टाइन, गाथिक, पूर्व रेनेसांस और उत्तर रेनेसांस के कला कौशल को विभिन्न युग में ग्रहण करने में इतस्ततः नहीं की। साधारण रूप से कहने पर नाना प्रस्तर मण्डित 'मोजायेक' शोभित 'सेन्ट मार्क' के मन्दिर में वैजेन्टाइन शिल्प और ठीक उसी के पास ड्यूक के प्रासाद में 'गाथिक' शिल्प का उदाहरण पाता हूँ। अथच इसके एकाकित्व एवं यूरोप के प्रान्त में अवस्थिति के कारण दोनों शिल्पधाराओं का विकास स्वेच्छा-प्रणोदित रूप से हुआ। यूरोप का प्रान्त ही कहना होगा क्योंकि उसके द्वार पर तुरुष्क सेना सतत ललकारती रही और तुरुष्क साम्राज्य ने उस पर पहरा दिया है। अनेक शताब्दियों के राजनीतिक इतिहास में स्वाधीनता जिस प्रकार अक्षुण्ण थी, उसी प्रकार शिल्प का विकास भी। धर्मप्राणता ने शिल्प को कोई बाधा नहीं दी; प्रादेशिकता ने उसकी उदार मर्यादा को कलंकित नहीं किया।

इटली के आकाश की अनुपम नीलिमा और 'लागुन' की बैजनी आभा में मिश्रित संध्या के अस्तराग में डोजे (Doge) के प्रासाद के मर्मरशिल्प को देख जाली के सूक्ष्म काम का भ्रम होता है। आसपास की गलियों में काँच के कारखाने में जिस अपरूप सूक्ष्म और सुकुमार वस्तुओं की तैयारी होती है वह इन्हीं प्रासादों के शिल्पियों के वंशधरों के हाथ से ही होती है इसमें कोई सन्देह नहीं है। और सुचित्रित चमड़े से पुस्तकों की जिल्द इन्हीं के हाथों से बनी हैं यह भी आसानी से समझा जा सकता है। केवल शिल्पकला में ही नहीं पारिपार्श्विक वातावरण की दृष्टि से भी वेनिस अठारहवीं शताब्दी के बाहर पैर बढ़ाने में कुण्ठित रहा। सान मार्को के गुम्बज एवं मोजाइक के कारुकार्य के ऊपर जब संध्या का म्लान प्रकाश तिरछा होकर पड़ता है

तब मन्दिर के चबूतरे पर सघन अन्धकार में समवेत रूप से लोभी पारावत के दल को देखकर वही बात याद आती है। इनके पूर्व पुरुषों ने दान्ते और पेत्रार्क के हाथों से भोजन लेकर खाया था; कासानोवा जब अपने असंख्य प्रणयिनियों को यहाँ बैठकर चिट्ठी लिखते तो ये उनको चारों ओर अक्लान्त कल-कुञ्जन से विह्वल कर देते।

कासानोवा की कहानी शायद अतिरंजित हो। उसके युग में अत्युक्ति ही विलास थी और विलासिता ही गौरव। वेनिस के जीवन के चित्रकार गार्दी (Guardi) के चित्रों में भी वही प्रमाण पाता हूँ। अठारहवीं शताब्दी के वेनिस में विलास लीला और छलाकला सहित प्रतिरूप उसके चित्रों में है। गम्भीर राष्ट्रतन्त्र के व्यवस्थापक-दल के नेत्रों में अधीर भोगलिप्सा है। Domino शोभिता महिलाओं के पास योद्धाओं का वीरत्व-हीन कोमलभाव है। तास-पाशा के केन्द्रस्थल अथवा ridotto में परचर्चा और नौका विहार समान आनन्ददायक था। यह अठारहवीं शताब्दी के वेनिस का इतिहास है। असंयम अस-च्चरित्रता और उसकी आवरण स्वरूप आडम्बरमय साजसज्जा की आकृति में भाराक्रान्त शहर की दूषित जल की लहर केवल राष्ट्र के मेरुदण्ड स्वरूप सम्भ्रान्त वंश को डुबाकर ही क्षान्त नहीं हुई अपितु गम्भीर रात्रि के अन्धकार के साथ साथ संन्यासियों के आश्रम और संन्यासिनियों के मठ में भी जा पहुँची। वेनिस के अभिजातियों ने वीरों की तलवार छोड़ विलास की वंशी ले ली, एवं यूरोप में जहाँ जितने सुख के पारावत थे सब आकर उनके साथ मस्त हो गये। गार्दी के चित्रों में सब से अधिक आकृष्ट करने वाली वस्तु यह है कि इतने प्राचीन गौरवमय राष्ट्रतन्त्र में जब मृत्यु का विष धीरे धीरे दुर्निवार रूप से प्रवेश कर रहा था तब भी इन लोगों के मुख पर जीवन की व्यर्थता के सम्बन्ध में सचेतनता की छाप नहीं थी।

उसी प्रकार इसके जीवन में अनुताप भी नहीं था। यह कृतकर्म के कारण गत जीवन के लिए अनुताप नहीं करते। ब्राउनिंग की एक और कविता याद आती है। ड्यूक-फर्डिनेन्ड रिकार्डि की नव विवाहिता पत्नी की कामना कर प्रतिदिन रिकार्डि प्रासाद के निकट जाते और वधु वातायन से सप्रेम दृष्टि विनिमय करती। उन्होंने भागने का प्रबन्ध किया किन्तु भाग नहीं सके। उनके जीवन में केवल दृष्टिविनिमय ही सार रहा। किन्तु हाय, यौवन स्वप्न क्षणस्थायी है, उसका इन्द्रधनुषी सप्त-वर्ण धीरे धीरे मिटने लगा। प्रेम में भी मलिनता आयी। उस स्वप्न और स्मृति को स्थायी करने के लिए वधु ने उसकी आवक्ष मूर्त्ति खिड़की में और ड्यूक ने उसकी प्रतिमूर्त्ति नीचे के उद्यान में स्थापित करा दी। अनन्त प्रेम स्थिर मूर्त्ति में परिणत हो गया। कवि ने कहा है, उनके जीवन में मिलन न होने से व्यर्थता का अभिशाप लगा; प्रेम की शून्यता मिलन की अपूर्णता में रह गयी। प्रदीप नहीं जलाया गया, शुभयात्रा नहीं हुई। यह उनके जीवन में पाप हुआ। ब्राउनिंग के जीवनादर्श में अनुताप का स्थान नहीं है—यदि यही जीवन का आदर्श है तो जीवन को भोग में मग्न होने दो।

आश्चर्य की बात है वही वेनेसियन लोग केवल चित्रकार की तूलिका में ही विस्मृति के गर्भ का अतिक्रमण कर जीवित रहे यद्यपि वही वेनिस आज भी पूर्ण मात्रा में प्राणमय है। यहाँ इस समय जलपथ में दोनों ओर के होटलों के विद्युत् आलोक की प्रतिच्छाया को दोलायमान करते हुए स्टीमर चलते हैं; आधुनिकता के कल्याण में वृहत्तर वेनिस में शायद किसी दिन मोटर गाड़ी भी चलने लगेगी, फिर अन्धकारप्राय पुराने प्रासादों की छाया में ढके जल की चमक-दमक के ऊपर जब किसी गन्डोला में रंगीन कागज़ की बत्ती का प्रकाश और मृदु गीतार

की ध्वनि के साथ O Sole Mio गीत चञ्चल जल-राशि के कल्लोल के साथ ताल रखते रखते प्रवहमान होगा तब वेनिस का पुरातन एवं प्रकृत रूप प्रकट होगा।

एक दुर्लभ रात्रि है। वातायन के बाहर से ही पूर्ण चन्द्र का प्रकाश जान पड़ रहा है और 'ग्रैण्ड कैनाल' का झिलमिलाते प्रकाश का टुकड़ा साइप्रेस श्रेणी के भीतर से दिखलाई पड़ता है। ऐसी मदिर रात्रि में अमेरिकन टूरिस्ट के समान 'आज की रजनी का फ्रांसीसी विशेष' भोजन के लिए मन व्याकुल नहीं हो उठता। उद्यानपथ में झाऊकुंज के पास पास प्रस्तर मूर्तियाँ आह्वान करती हैं; उसी पथ से आज बाहर जाना उचित है।

वह रास्ता किसी को रोम नहीं ले जायगा, यद्यपि रोम का अहंकार था कि सब पथ आकर रोम में मिलते हैं। यह पथ वेनिस के जलपथ में सांग हुआ है।

'सान् मार्को' के चबूतरे पर यह कैसी व्याकुलता एवं मदिर चंचलता है। सारा दिन 'डोज' के प्रासाद में तित्सियन चित्रों के सामने कट गया; आज रात को भी उसी तित्सियन का रंग देखता हूँ—उसी वर्णमिश्रण की सुषमा इटली के आकाश और 'लीडो' की सुनील स्वच्छ जलराशि में है। ऐसा ही क्यों पृथ्वी के वृहत्तम चित्र 'तिन्तोरेत्तो' के 'पैरेडाइस' को भी 'तित्सियन' का समझने की बार बार भूल हुई।

वेनिस की वायु ने मेरे मन में हलचल मचा दी। प्रत्येक पथचारी मेरे नेत्रों में किस नूतन आलोक में प्रतिभासित होता है। जो सार्थकता इनके जीवन में नहीं ह, जिस अस्तित्व की बात ये सपने में भी नहीं सोचते, उसी गौरव से ये महिमान्वित हो रहे हैं। साधारण भोजनशाला में जो भिक्षुक शिल्पी मैण्डोलिन बजाकर भिक्षा माँगता है, रियाल्टो सेतु के नीचे

जो गण्डोला का माँझी बुझते हुए निःकम्प प्रदीप के समान कम्पायमान छोटी नाव में त्रिभंगिम होकर खड़ा है, वे सब मानो चित्र से ही उतरकर आगये हैं। जो अपरिच्छिन्न अपरिसर वाली पथ के पथिक हैं वे भी आज रात्रि को निरुद्देश यात्रा के लिए बाहर निकल आये हैं। चलते चलते भूलकर कितनों ही ने पथ की सहज भूल को मन में ठीक समझ लिया। उद्भ्रान्त मन का सुयोग पाकर एक वृद्ध ने अपने हृदय विदारक एवं निराशामय प्रेम की कहानी भी सुना दी।

उस कहानी का नायक तो मैं भी हो सकता था। और अनेकों के मन को टटोलने पर शायद इसी प्रकार दुख भरी कहानी बाहर निकल पड़ेगी। इस वृद्ध के समान ही कितने लोग नीड़ बनाने की साध त्यागकर प्रिय गृह और प्रिया सान्निध्य से दूर दक्षिण अमेरिका के जंगल में, 'एमेजन' नदी के तटवर्ती हरित प्रान्तर में अथवा अफ्रीका के दग्ध ऊसर अरण्यों के बीच चले गये हैं। तत्पश्चात्, तत्पश्चात् कितने ही लोगों के यौवन स्वप्न का अवसान हुआ इसी वृद्ध के समान वार्द्धक्य के आविष्कार में, उनका प्रेम किसी कैशोर चंचलता के साथ अज्ञात रूप से मन के धूसर मरु में मिल गया। तब शायद जीवन में और कोई सहारा नहीं रहता, संतोष नहीं रहता, और सान्त्वना नहीं रहती। यह बात सोचते ही एक दीर्घ विश्वास अज्ञात रूप से निकल गया। समग्र मधुरजनी उस दीर्घश्वास का उत्तर देने के लिए व्याकुल भाव से प्रतीक्षा करने लगी।

होने दो उसे प्रवंचना। नहीं तो लोग सोचेंगे अनभिज्ञ के ऊपर वारुणी के प्रभाव से ही ऐसी भूल सम्भव हुई थी। विज्ञ और काम के लोग अनुकम्पा के अमूल्य हास्य से ही उस रात्रि का सम्मान करते हैं। विदेश में जो पर्यटन के लिए

जाकर 'विडेकर' की गाइड बुक के 'प्रासाद के राजपुत्री' अथवा 'दुर्गम दुर्ग का अन्धकार सुरंग पथ' आदि को छोड़ अन्य किसी कहानी में विश्वास कर खोजता फिरता है इस संसार में उसे मूर्ख ही कहेंगे। यह सब बातें भद्रोचित अर्थात् 'रिस्पेक्टेबल' नहीं हैं। न हों। मैं उस कहानी में आज भी विश्वास करता हूँ। इसके अतिरिक्त उपाय ही क्या है? वेनिस में मदिर चाँदनी रात में रियालटो के नीचे सुनील जलराशि कल्लोल करती घूमती है। वेनिस की स्मृति प्रत्येक समय याद न आयेगी। सान मार्को की चोटी जिसे अस्पष्ट आलोक में अन्तिम बार देखा उससे ही धीरे धीरे मिली जाती है। शायद और किसी निशीथ में नेत्रों में स्वप्न का स्पर्श और हृदय में सहानुभूति की करुणा लिये अपने घर वापिस आकर सोचने नहीं बैठ जाऊँगा। कार्य की भीड़ में पूरे दिन की अस्फुट गीतार और मैन्डोलिन के सुर की झंकार इसी प्रकार मिल जाती है। सम्भवतः वेनिस की रात्रियाँ केवल स्वप्न हैं, किन्तु वह रात्रि तो स्वप्न नहीं।

इटालिया—जीवन-संगीत

मिलान ! मिलान के साथ मानो इटली के प्राणों का संगीत मिला है । विक्टर इमैनुयेल गैलरी की छायामय विशालता जैसे गीत की झंकार में परिपूर्ण है, विशाल तोरण उसके विस्तृत सम्मुख भाग में यूरोप के अन्यतम श्रेष्ठ गिर्जा को लुप्त कर देने की स्पर्धा रखता है । काँच छोड़कर अन्य कोई पदार्थ यहाँ दिखलायी ही नहीं पड़ता है । संस्कृतयुग होने पर इसका नाम स्फटिक—तोरण रखता ।

इटली के शहरों की विशेषता यह 'गैलेरियाँ' हैं, सब शहरों का एक सामाजिक केन्द्रस्थल है और वह है गैलरी, या नगरोपकण्ठ में कोई शैलशिखर पर प्रमोदोद्यान । गैलरी के चारों ओर सुशोभन दुकान, रेस्तराँ तथा और भी बहुत कुछ हैं । विक्टर इमैनुयेल गैलरी के एक ओर सात हज़ार प्रति मूर्त्तिमय 'पृथ्वी का अष्टम आश्चर्य' (La huitieme merveille du monde) यह मन्दिर है, दूसरी ओर लियोनार्दो द विंशी का स्मृतिस्तम्भ और स्काला थियेटर है । गैलरी के चारों ओर की विस्तृत बाहु के बीच चार जलस्रोत प्रवाहित होते हैं, और केन्द्रस्थल में 'काफे विफ्फीरी' है। मिलान के प्राण खोजने के लिए उसके मन्दिर में नहीं, ऐश्वर्यमय राजवंश की क़ब्रों में

नहीं, इस काफे में आना होगा। सब ही सुवेश में सुरुचिपूर्ण भावभंगिमा के साथ रसालाप में व्यस्त हैं; इधर उधर पदध्वनि अथवा किसी का अभिनन्दन होता है, ऊपर के कांच की skylight इन मनुष्यों की बातचीत की प्रतिध्वनि में गूंज रही है। यह पृथ्वी के गायकों की श्रेष्ठ पण्यशाला, चरम उच्चाकांक्षा का नन्दन कानन है।

पृथ्वी के सब देशों से साधारण गायक यशःप्रार्थी दल बह्निमुख पतंग दल के समान उच्चाकांक्षा से आकृष्ट होकर यहाँ आते हैं। बेचारों के दल। वे आज मुख पर प्रशान्ति का भाव दिखाकर साधारण 'त्रात्तोरिया' (छोटे रेस्टराँ) में 'मैकारोनी' (सिमई) खाते हैं, मन में आशा है, एकदिन उनके पदप्रान्त में कुबेर का ऐश्वर्य्य और शिर पर सरस्वती का किरीट आकर जड़ित होगा। कौन गायक यहां नहीं आया है? प्रथम चेष्टा में मिलान के पास किसी शहर में काम मिल जाने पर समाचार पत्र में केवल नाम का उल्लेख देखकर प्राण पा जाते हैं। प्रवीणों का कुल अपने अतीत मूल्य एवं वर्तमान मान की बात सुनकर नवीनों के मन में भय उत्पन्न करने की चेष्टा में व्यस्त हैं। ये अतीत के भग्नदूत हैं। एक दल उच्चकोटि के ऑपेरा गायक अपने 'कोमों' झील के तटवर्ती, प्रासाद और कुञ्ज कानन की कहानी सुना रहा है, वे इस गीत के राज्य में अप्रतिद्वन्द्वी हैं, अन्य दल अपने दुर्भाग्य की निन्दा कर रहा है। फिर भी आशा है।

संगीत तीर्थ के बीच 'स्काला' काशी है, मर्त्य-जगत् में अमरावती है। यहां पाद-प्रदीप जिसके आनन को उज्ज्वल करते हैं उसी का भाग्याकाश उज्ज्वल है। किन्तु यह आशा मरीचिका कितने भाग्यों को अभिशप्त कर स्वयं लुप्त होगयी; इसकी सीमा नहीं। स्काला में देखा, जातीय ललित कला को अक्षुण्ण रखने के लिए जो शिक्षागार है उसमें एक किशोरीदल प्राणपण से शिक्षा-

नवीशी कर रहा है। फिर याद आया ये बेचारी कितनी लीलायित स्वच्छन्द गति से घूमती फिरती ह, शायद इनमें से अनेक को अपनी घोर निराशा अपने हँसी भरे मुख से ढाँकनी होगी। सूक्ष्म केशिनी अंग्रेज बालिका, तुषार शुभ्रांगी रूसीया, वह्निशिखासमा हिस्पानी, हास्यकौतुक की लीला निर्झर पैरिसाना कितने देशों से ये आयी हैं, सहज अथच आत्मविश्वासमय भंगिमा से चलते चलते कलहास्य में आलाप के बीच भी आशा के प्रकाश का स्वप्न मन में देखने को मिलेगा। बाहर घूमने के लिए निकली हैं, किन्तु इनकी अवस्था भीता चकिता हरिणी के समान है। ये क्या केवल इस मन्दिर के बाहरी द्वार तक ही पहुँचेगीं ? इतनी किशोरियां; कितनों के भाग्य में रंगमंच की उज्ज्वल आलोक दीप्ति हैं ? स्काला म्यूजियम में अमर गीतिनाट्य रचयिता हार्दी के स्मृति-विजड़ित वृष्टव्य अब और याद नहीं आते, केवल सोचता हूँ इनके बीच शायद कोई किन्नरकण्ठी मंच, साम्राज्ञी 'जूदित्ता पास्ता' के समान मनोमोहिनी और विश्वविजयिनी होगी, और बाकी सब ?

* * * *

Niobi of Nations ! (Byron) रोम अवर्णनीय है। प्राचीन विशाल रोम; अति मानव का रोम।

केवल रोमन ही नहीं, रोम के साथ जिसका भी संस्पर्श हुआ है वही अतिमानव के समान कुछ कर गया है। उसके चिह्न जिधर देखो उधर ही हैं। रोम यदि केवल वैटिकन प्रासाद एवं सेन्ट पीटर्स में ही शेष रहता तब भी यह वही रोम रहता; सब राजपथ यहाँ आते।

रूप के बिना मनुष्य का काम नहीं चलता। हम जब निराकार रूपहीन की बात सोचते हैं तब अलक्ष्य में ही क्यों न हो अज्ञात रूप से एक रूप मन में मूर्त्त हो उठता है। तरंग

की गति, पुष्प की सौरभ, शिशिर सिक्त तृणदल के मुक्ता-लावण्य के समान गुप्तरूप से वह मन में एक निभृत स्थान प्राप्त कर लेता है। वैज्ञानिक जगत् में जिस आकाश का कोई रूप नहीं उसकी असीम मोहक नीलिमा के न रहने पर जीवन में जड़ता आ जाती और मन में मुक्ति न रहती। सांध्य गगन के तरल रक्त हृदय को बहाकर सीमा जहां असीम का घनिष्ट सम्बन्ध चाहती है, आकाश और पृथ्वी जहाँ निभृत मिलन में आत्महारा है वहाँ हम कितनी रूप और कल्पनाओं की सृष्टि कर लेते हैं। इसी लिए दिग्वलय रेखा इतनी सुन्दर है, उसके बीच इतनी अमर ज्योति का अनिर्वाण अक्षरों के सन्धान पाता हूँ। 'रूप सागर में रूपहीन रत्न की आशा में डुबकी लगाई है।'

'खृष्टमस डे' (बड़ा दिन) के दिन रोम में खृष्टानों की उपासना देखकर यही याद आया। हम लोग मूर्त्ति पूजक से ईश्वर के रूप के पुजारी का अर्थ लेते हैं। हमारी ही तरह यह भी रूप की आराधना कम नहीं करते। खृष्ट जीवन एवं अन्य साधु कथाओं की कितनी विभिन्न घटना और व्यञ्जना की प्रतिमूर्ति सेन्ट पीटर्स में हैं; उसके सामने नतजानु होकर कितनी उपासना, पाप निवेदन हुई, तथा धूप सौरभ और दीप सौष्ठव में कितनी दैनिक आरतियाँ हुई। साल के श्रेष्ठ उत्सव के दिन पोप के प्रार्थना के गम्भीर उदात्त कण्ठ में मन्त्र पाठ के साथ उच्चारण किया 'Santa Maria Madri' सेन्ट पीटर्स का एक पद प्रान्त जो भक्त विश्वासियों के बार बार चुम्बन के कारण क्षयप्राप्त हो गया है, वहाँ आने पर रोम के 'क्वो वेडिस' मन्दिर में जहाँ नीरो के अत्याचार से भागे हुए सेन्ट पीटर्स को खृष्ट ने दर्शन दिये थे वहाँ के प्रस्तर में उनके पदचिह्नों की बात याद आई। हिन्दुओं के समान रोमन कैथोलिक के धर्म में भी कितने काव्य, कहानी और

कल्पना का विकास और प्रकाश हृदयंगम किया। क्या केवल हम ही रूप साधना करते हैं ?

प्राचीन रोम का रूप अपरूप है। वह जाति विराट् मानव थी जिसने इस सब जयस्तम्भ और जन-मंच (फोरम) की सृष्टि और कल्पना की, जिसके विजय अभियान का अभिनन्दन करने के लिए राजपथ का निर्माण करना होता, जो उत्सव अनुष्ठान के समय पचास हज़ार लोगों को एक 'कोलिशीयम' में स्थान देते थे। प्राचीन ध्वंस स्तूप की सहस्र पाषाण जिह्वा अपनी अनिवार मौनवाणी से विदेशी पर्यटक के अन्तर को ध्वनित और प्रतिध्वनित कर देती हैं। यहाँ 'कोलिशीयम' है, यहाँ देवता के प्रति उत्सर्गीकृत कुमारी भेस्ताद का मन्दिर है, यहीं जूलियस सीज़र की समाधि और भग्न स्तूप हैं। मूर्त्तिपूजक और खृष्ट आदर्शों के संघर्ष के समय यहाँ मानवात्मा के त्रास एवं परित्राण की कहानी का कैसा विपुल अभिनय हुआ। ऐतिहासिक दृष्टि से इतनी सत्यता नहीं, फिर भी कोलिशीयम में हिंस्र प्राणी के साथ युद्ध अथवा उसके निकट आत्मविसर्जन की बात 'काटाकूम' में आते ही समझ में आजायगी। जिनकी कर्म-कुशलता विशाल थी, उनकी निर्ममता भी अमानुषिक थी। इसी लिए मृत्यु के पश्चात् भी खृष्टान का निस्तार नहीं था। उनको छिपकर इन तथाकथित मन्दिरों की दीवारों में गुप्त भाव से उन्हें कब्र बनानी होती थी।

निष्ठुरता एवं यन्त्रणा को रूप देने के कौशल में जान पड़ता है 'लैटिन' जाति अतुलनीय है। धर्म के लिए जिन्होंने प्राण दिये थे उनकी अन्तर की अनुभूति नहीं मानो बाहर की वेदना ही बड़ी बात थी। मिलान के मन्दिर में सेन्ट बार्थोलोमिउ की जीवित ही चर्महीन कर हत्या करने की एक बीभत्स एवं विख्यात मूर्त्ति है; और यह ही वहां का अन्यतम दृष्टव्य है।

वैटिकन के सिस्टाइन चैपल में माइकेल एंजेलो के अतुलनीय 'फ्रेस्को' चित्र 'शेष विचार'; मूर्त्तिकला का श्रेष्ठतम उदाहरण 'लाउकुन'; एपोलो का अनुपम सौंदर्य, यह सब देखकर जितना आनन्द प्राप्त हुआ उसे एक भीषण टैपेस्ट्री चित्र ने म्लान कर दिया। एक मील के आठवें भाग तक लम्बे इस विराट् चित्र में निरीहों की हत्या दिखाई गयी है। सेन्ट पीटर्स में भी इसी प्रकार कितनी मोज़ायक* की मूर्त्तियाँ हैं जिनका निर्माण कौशल असाधारण है किन्तु वे किसी बालक को अनेक रात्रियों तक दुस्स्वप्न दे सकते हैं।

किन्तु वेदना भी किस प्रकार रमणीय हो उठती है इसका भी एक उदाहरण यहाँ के एक चित्र में पाता हूँ। बाणविद्ध सिवस्टियन के मुख पर जो आनन्द एवं माधुर्य की दीप्ति फटी पड़ती है वह पृथ्वी की धूल का अतिक्रमण कर स्वर्ग-स्वप्न दिखलाने की प्रेरणा देगी। पैलेटाइन म्यूजियम में मुमुर्ष 'गोले' की जो मूर्त्ति है वह हमारे मन में भय उद्रेक नहीं करती, करुणा जगाती है, विफल वीरत्व के शेष परिच्छेद में जो मृत्यु है उसी की अव्यक्त कहानी का मर्मोद्घाटन करती है। देह की प्रत्येक रेखा कितनी दृढ़ता व्यञ्जक है, मुख के यंत्रणा-चिह्न और कपाल की कुञ्चित-रेखाएँ कितनी जीवन्त हैं, किन्तु इस मृत्यु में बीभत्सता नहीं। जिस जीवन को वीरता के साथ धारण किया उसे उतनी ही वीरता के साथ त्याग देने में जो महत्त्व है उसे हम इस मूर्त्ति में पाते हैं।

सभ्यता के साथ निष्ठुरता का इस प्रकार का सम्मिश्रण और कहीं हुआ है इसमें सन्देह है। विलास कभी वेदना की मर्मकहानी नहीं समझता। भोग और लालसा, दुख और लांछना के प्रति कोई सहानुभूति नहीं दिखलाता है। अतिमात्रा में विलासी

* Mosaic

और आत्मपरायण 'पेट्रिशियन' तुच्छ सामान्य मूल्य के क्रीतदास अथवा चिरदास के परिश्रम के फल के ऊपर जीवन धारण करते थे; अतएव उन्हें दुख का अनुभव कभी नहीं हुआ। किन्तु उसने जीवन में कम दुख नहीं पाया है। वहिःशत्रु बार बार राज्य जय करने के लिए आये; और आन्तरिक शत्रु लगातार ललकारते रहे। इस रोम के अल्प भूखण्ड पर जितने परोप-जीवी थे उनकी तुलना 'एथेन्स' में भी नहीं है। यहाँ जितना धन राशि, विलास और पापाचार हुआ उसकी तुलना नहीं हो सकती। इस कुबेर और बैकस के राजत्व में जीवन संशयमय था, मृत्यु गोपन में अतर्कित रूप से पदार्पण करती। लूकल्लास का पिनचो पहाड़ पर प्रमोद गृह और काराकल्ला का स्नानागार दोनों ही रोमन चरित्र की विशेषताएँ हैं, किन्तु इन विलास निकेतनों का वातावरण निष्ठुर था। प्रमोदचंचल चेलाञ्चल के मृदुवीजन में कितने वसन्त समीरण के कवोष्ण निश्श्वास उड़ जाते, फिर शायद ईर्ष्याफेनिल षड्यन्त्र संकुल ऐश्वर्यप्रवाह में भासमान कोई अभागा सम्राट् अथवा अभागिनी राजप्रेयसी गुप्त पथ से सहसा मृत्युनद में फेंके जाते। इस प्राचीन रोम के वातास में कितनी उद्दाम कामनाएँ हैं, कितनी उन्मत्त सम्भोग की ज्वालामय शिखा आलोड़ित हैं, अब भी दो एक स्पर्श हठात् वायु के साथ आकर मन को चंचल कर जाते हैं।

पौराणिक फिनिक्स पक्षी की भाँति रोम ने अपनी ही चिता भस्म से अपने को फिर जीवन दिया है। पाषाणी अहिल्या ने मुसोलिनी के स्पर्श से पुनर्जन्म पाया है। रोम एक दिन में नहीं बना, एवं आश्चर्य का विषय है कि पुरातन रोम और नूतन रोम के अस्तित्व के लिए कोई द्वन्द्व नहीं है, कितनी ही नूतन सृष्टि क्यों न हो वह केवल प्राचीर प्रसार और प्राचीन संहार नहीं है। सप्त शैल वेष्टित रोम सुदूर विसर्पित है।

मुसोलिनी एक प्रकृत स्रष्टा थे। रोम का विशाल राजपथ, यान-वाहन नियन्त्रण, विभिन्न उत्सधारा, प्रमोद कानन, आभ्यन्तरीण शृंखला, इटली के नेत्रों के सामने नूतन भविष्य के स्वप्न सब ही उनकी सृष्टि हैं। इटली के समान देश और रोम के समान नगर में नूतन शिल्पकला का जो आवर्त्तन हुआ उसके लिए उनको ही धन्यवाद देना होगा।

फासिस्ट प्रदर्शनी गृह में फिउचरिस्ट आर्ट का जो निदर्शन पाता हूँ वह मन को विमुग्ध करेगा ही। अथच प्राचीन गौरव एवं दर्शनीयता की रक्षा वे सब समान आग्रह से करते हैं; पहले इतने सहज और सम्पूर्ण भाव से रोम देखना सम्भव नहीं था। विलुप्त सम्पत्ति के शेष भग्नप्राय स्मृतिस्तम्भ उन्हीं की चेष्टा के फल हैं जो अनेक दिनों तक दर्शकों के उप-भोग के लिए सुरक्षित रहेंगे। इटली जो आज नूतन जगत् पर विजय पाने को टूट पड़ा था, महा समारोह के साथ साम्राज्य में राजपथ (via del impeto) निर्माण कर रहा था, उसके पीछे बहुत अधिक परिमाण में नवप्रबुद्ध अतीत के गौरव की स्मृति थी।

पुरातन रोम के ध्वंस स्तूप के अपूर्व चित्र पर नूतन रोम के कैंपिटल प्रासाद हैं। नवीन गरिमा ने प्राचीन महिमा को अन्तराल नहीं किया है, उसका अन्तराय भी नहीं हुआ है, उसे सुन्दरतर एवं सम्पूर्णतर कर दिया है। ऐसा आश्चर्यमय साम-ञ्जस्य अनुभव करने पर दिखलाई पड़ता है, दूर से ऐसी वैशिष्ट्यमय विचित्र कल्पना नहीं की जा सकती।

इसी प्रकार का सामञ्जस्यमय चित्र 'नेप्ल्स' का है। उपसागर के पार नेप्ल्स का प्रशान्त रूप चित्रवत् मनोहर है, और पीछे विसुवियस का अग्नि उद्गीरण, सामने का अदूर आकाशपट के विचित्र वर्ण गौरव के ऊपर विसुवियस की धूम्र-

माला धूमिल आच्छादन डाल देती है। फिर भी आकाश का वर्ण समुद्र विलोप नहीं कर पाता है। केवल याद दिला देता है—

"यही जहाँ जलती हैं संध्या के कूल में
दिन की चिता"

दिन की चिता का ऐसा परिपूर्ण रूप कहीं नहीं देखा।

विसूवियस के उद्यत रोष और प्रच्छन्न हुंकार के सामने जो जाति इतने उत्सवों में उत्फुल्ल एवं विलास में लीन हो सकी, उस जाति के मेरुदण्ड के प्रति लोभ और प्रशंसा बिना किये रहा नहीं जाता। जीवन के भोग और त्याग करने की क्षमता उनकी असाधारण थी। इसी लिए अग्निगर्भ गिरि के पदतल में, उसकी भ्रूभंगी के सामने ही पाम्पी (पम्पिआई) प्रतिष्ठित हुआ। उस युग के भस्माच्छादन को दूर फेंके यही शहर हमारे सामने रखा गया। आइसिस का मन्दिर, रंग-निकेतन (amphitheatre) नाट्य-भवन सबही देखने को मिलेंगे। जो कुत्ता यंत्रणा से विकृत हो गया था, और जो रमणी सम्भवतः ललित लास्य से अनेक पुरुषों का यौबन स्वप्न हो गयी थी उन दोनों के अस्थिकंकाल अविकृत अवस्था में देखने को मिलेंगे। पौर भवनों के चित्रांकन के कौशल का सुन्दर उदाहरण भी दिखाई देगा।

कैसा सौभाग्य है, मेरे सामने आज विसूवियस की पूर्व-स्मृति जाग उठी है। विपुल वज्र निर्घोष एवं मुहुर्मुहुः भूमिकम्प के बीच मेरा 'गाइड' 'क्रेटर' के पास ले जाने को बिलकुल तैयार नहीं है। और एक भारतीय के जीवन में ऐसे 'एडवेन्चर'* का क्षण शायद दुबारा न आये। उस अग्निगर्भ के कितने पास जाया जा सकता है आज देखा ही जायगा। केवल अनुल्लेख योग्य ग्राह्यिक दिन यापन के बाहर कुछ नहीं तो साहसी

*adventure

बनने को ही चेष्टा की जाय,

"अरे सावधान पथिक

एक बार तो पथ भूल मारे फिरो"

गाइड ने हाथ पकड़कर मना किया, किन्तु प्रचण्ड शब्द में उसकी कथा कान तक नहीं पहुँची, हृदय की तो बात ही नहीं। गन्धक की गन्ध में जितनी देर श्वास ली जा सकती है और तपन में पैर रखे जा सकते हैं उतनी दूर आगे गया। और कुछ भी दिखलाई नहीं पड़ा, जीवन में इस प्रकार की कोई विषम विपत्ति अथवा विशाल कीर्ति नहीं आयी। फिर भी दो रूमालों में जड़ित गलित लावा प्रवाह के प्रस्तरीभूत पिण्ड की ओर ताकते हुए कभी अकेले बैठ कर सोचूँगा कि हिसाब और सावधानता कुशल भारतीय होते हुए भी एकदिन इस सब की उपेक्षा कर दौड़ पड़ा था।

* * * * *

रोमा सुन्दर है। उसे रमणीय रखने के लिए समस्त इटली को व्यय भार वहन करना पड़ता है, हम विदेशी यह खबर नहीं रखते और रखना चाहते भी नहीं। किन्तु इतने सुन्दर प्रमोद कानन से यदि चित्रशाला को सजाया जाय तो कर भार भी शायद वहन किया जा सके। बोर्घिस प्रासाद में इतिहास के वर्तमान अध्याय के इटली के गौरव चमत्कार पूर्ण रीति से सजे हुए हैं। कैनोवा के भास्कर्य गौरव और पाउलिना की अर्द्धशयना मूर्त्ति ने नेत्रों में स्वप्न का आवेश भर दिया। पाउलिना जब मूर्त्ति के लिए मॉडेल होकर बैठी तो बड़े भाई नेपोलियन उसकी वसनहीनता देख सिहर उठे थे। भगिनी ने उसको उत्तर दिया, तुम चिन्ता मत करो, कमरे में पर्याप्त गर्मी है। व्यावहारिक जगत् में नहीं, उसकी मूर्त्ति में प्रतिभा की गर्मी की मादकता अब भी अनुभव करता हूँ। इटली के

शिल्पियों की कहानी जन्म से सुनता और जानता आ रहा हूँ। यूरोप कहते ही जो चित्र जाग उठते हैं उनमें इटैलियन-शिल्पियों के चित्र ही सर्व श्रेष्ठ हैं। किन्तु एक और सुयोग मिला। भास्करबर्णिनि को नूतन सिरे से जाना। उसके डेविड की मूर्त्ति की सहज संहृति ने मन को अभिभूत कर लिया। मन ही मन कहा बर्णिनि एकान्त भाव से मेरी ही खोज है।

कैपिटलाइन हिल के ध्वंस स्तूप पर बैठे क्या क्या सोच रहा हूँ इसकी सीमा नहीं। भाषा में जिसका आभास नहीं दिया जा सकता, मुख जिसके प्रकाश करने के समय मूक हो जाता है, उसी इटालियन की जातिगत विशेषता मधुर है, इटली की प्रसिद्ध कहावत 'dolce far niente' अर्थात 'कुछ न करने में मजा है' के अनुसार देह विभोर हो गयी और मन मुखर हो उठा है। अतीत और वर्तमान दोनों विलासिता और वीरता इस जाति में समान रूप से प्रकाशित हुई। सारा देश सामरिकता का आडम्बर जुटाता है फिर भी झीलें पत्र पल्लव की शोभा में माधुरी-मण्डित स्निग्ध उज्ज्वल शान्ति वितरण करती हैं। रोम के बीच ही कैपिटल के सामने विराट् फैसिस्ट शोभा यात्रा के चले जाने के पश्चात् कितनी सौम्य शान्ति फिर हो गयी थी, वर्तमान के साथ अतीत का कोई सम्बन्ध नहीं है, फिर भी सामञ्जस्य का अभाव नहीं देखता। यही वैचित्र्य विशेषता है। इसके एक प्रान्त में वर्जिल की कविता है, अन्य प्रान्त में सिसरो की वाग्मिता है, एक ओर नीरो है, दूसरी ओर मार्कस ओरेलियस है, एक ओर शौर्य, दूसरी ओर विलास, तथा एक युग में साधना और दूसरे में भोग है। ये सब मिलकर रोम के भग्नावशेष हैं। ऐतिहासिक की शिक्षा, शिल्पी की दृष्टि एवं भावुक की प्रेरणा न रहने पर रोम के अन्तर में प्रवेश करने की चेष्टा व्यर्थ है। बर्घिस के प्रासाद में बर्णिनि

की एक मूर्त्ति की याद आती है। एपोलो ने प्रजारपिना को पकड़ने के लिए उसका पीछा किया, किन्तु वे जिस जिस अंग का स्पर्श करते वही अंग वृक्षलता में परिणत होकर सारे स्पर्श को विफल कर देता। उसी अप्रापनीया प्रजारपिना के समान अवर्णनीय रोमा है।

सभ्यता से दूर

सभ्यता से एक पूरे दिन का निर्वासन हुआ। बिलकुल अकारण मिडेलवर्ग के दूध मक्खन की हाट में घूमता फिरता हूँ। बाजार में विशेष उल्लेख योग्य कुछ भी नहीं है, कुछ सूती और रेशमी कपड़े, काँच के मोतियों की माला, रबड़ और काँच के खिलौने, कुटीर शिल्प का कुछ सामान, दूध, मक्खन, अंडा और मछली। गारो पहाड़ के नीचे की किसी हाट को पर्य्याप्त अवस्थापन्न और कुछ अधिक रंगीन अर्थात् यूरोपीय कर देने पर ही बिलकुल ऐसा ही चित्र खिंच जायगा। मोलभाव कायदे के अनुसार चलता है। छप्पर के मकानों में 'चाकलेट' बिक रहा है, वहाँ बालक बालिकाओं की भीड़ है, दूध-माखन की लुब्ध गन्ध स आकृष्ट होकर ही क्या ये माखन-चोर बालक बालिका भीड़ लगाये खड़े हैं?

ऐसा नहीं है। आज इस डच ग्राम के एक उत्सव का दिन है। ये सवेरे गिर्जा गये हुए थे, इस समय बाजार में आये हैं, केवल घूमने और मई के महीने की रमणीक धूप के उत्ताप का उपभोग करने। बालक-बालिकाएँ काले वस्त्र पहिने हैं। माथे पर समस्त मुख को मधुरता से पूर्ण कर देने वाला एक प्रकार का सफेद कनटोप है, हाथ में डोलची और पैर में काठ की नौका के समान जूता। यह इनके उत्सव का

वेश है। आधुनिकतम सूक्ष्म विलास वास का आकर्षण नहीं, प्राचीन शोभन एवं विचित्र सज्जा का आवेदन ही आनन्द के दिन इनके निकट सबसे बड़ा हो उठता है। इनके सरल हँसते मुख पर कहीं अभाव और अभियोग की छाप नहीं। माला के समान परस्पर हाथ के भीतर हाथ गूंथकर डोलची हिलाते हुए आनन्द का प्रभातकालीन आलोक बिखेरते पंक्तियों में चले जाते हैं। उनमें से मानो प्रत्येक विधाता के हाथ का गढ़ा हुआ फूल है, जो इस मधुर प्रभात की कमनीयता को परिपूर्ण कर रहा हो। मैं और अब उस बाल्यावस्था के पावन आनन्द के बीच वापिस नहीं जा सकूंगा। एक दीर्घ निश्वास रोक लिया।

उस दिन बेलजियम आने वाली ट्रेन पकड़ने की बिलकुल इच्छा नहीं हुई। एक नामहीन अख्यात उस धीवर ग्राम ने मुझे आकर्षित किया। समुद्र की नमकीन वायु तथा मछलियों की मिली हुई गन्ध और कभी शायद इतने सहज रूप से ग्रहण करने की इच्छा न होगी, किन्तु उस अंधेरी बिजली विहीन रात को विजातीय बन्धुओं के साहचर्य में सबही अच्छा लगा। पैर फैलाकर बैठ उनकी सरल, फिर भी कठिन, जीवन यात्रा की कहानी सुनी गयी। ट्रालर ही क्यों, बड़ी नौका में ही वे समुद्र से मछलियां पकड़ लाते हैं। समुद्र से केवल मछली पकड़ने के लिए वे दल बाँधकर नैश अभियान के लिए बाहर हो जाते हैं। कितना सरल और उदार मन है उनका, यद्यपि वे समुद्र के उस पार क्या है यह न जानकर अपनी भूमि की संकीर्णता से ही संतुष्ट हैं। जलपथ में उनका विजय अभियान अबारित है। कभी कभी प्रतिकूल वायु में बहुत दूर अथवा विपथ पर चले जाने पर ग्राम की आबाल वृद्ध वनिता उनके लौटने के पथ को देखती हुई किनारे पर प्रतीक्षा करेगी। वृद्ध अपनी अतीत वीरता और विपद् की कहानी सुनायेंगे और माताएँ शिशुओं को

स्वामियों की कीर्ति की लोरियाँ बनाकर सुनायेंगी। जिस दिन तूफान खूब जोर से आता है उस दिन अभ्यस्त होने पर भी तीर पर खड़े कितने शंकित और उत्कण्ठित वक्षों में धड़कन बढ़ जाती है। मैंने उन्हें हिन्दू ग्राम-वधुओं के जल में दीप प्रवाह कर सौभाग्य गणना की बात बतलाई। उन्होंने मुग्ध होकर सुना, और भी अनेक बातें जानने क लिए वे उत्सुक हुए। किन्तु आज मैं अपनी बात तो सुनाने आया नहीं हूँ, आया हूँ उनकी बात सुनने, एक रात्रि के लिए शिक्षा और सभ्यता सुलभ अभिमान भूलने तथा जीवन को सहज और सरल का अनुभव करने।

समुद्र के पश्चिमी तट पर तीस चालीस मील दूर पृथ्वी के इस भूमि खण्ड में जाकर पूर्ण विराम पाया। हालैण्ड और बेलजियम के प्रायः सब स्थानों पर बीसवीं शताब्दी की वणिक सभ्यता को भूल मध्ययुग के वातावरण में प्राचीन फिर भी नवीन शहरों में घूमता फिरता हूँ। घेन्ट शहर यूरोप का एक वाणिज्य केन्द्र है, फिर भी वह बात नाम निशान सहित भूल निश्चिन्त मन मध्य युग के शिखर कण्टकित दुर्गों में शान्ति की साँस ले सकता हूँ। शहर के केन्द्रस्थल में सात राजपथों पर सात सौ गज के बीच इस प्रकार के सात स्मृतिस्तम्भ दृष्टव्य हैं जो मन को इतिहास के पृष्ठों पर से बहुत पीछे ले जाते हैं। क्रूसेड की याद आती है। इसी प्रकार का एक क्रूसेड योद्धा काउण्ट के दुर्ग के भीतर अथवा जेरार्ड नामक विख्यात ऐतिहासिक दस्यु के हृदय कँपा देने वाले प्रासाद के भीतर आने पर यह याद न रहेगा कि ठीक बाहर व्यस्त जनाकीर्ण धूल धूसरित राजपथ शेयर बाजार की विचित्र चंचल बातों से स्पन्दित हो उठता है।

और कुछ दूर संन्यासिनियों के दो मठ हैं। तेरहवीं शताब्दी

से ये दोनों ऊँची प्राचीर द्वारा शेष से अलग होकर वर्तमान युग के विशाल शहर के बीच मध्य युग के एक छोटे शहर के रूप में मध्य मणि के समान विराज रहे हैं। इनके रास्ते संकीर्ण, टेढ़े मेढ़े हैं, घर विचित्र हैं, और प्राचीन पंथी पोशाक में नम्र शत् शत् संन्यासिनी दीन भाव से प्रार्थना में दिन काट देती हैं। उनमें से एक मुझे अपने घर ले गयी और एक प्रार्थना द्वारा मेरी उपस्थिति पवित्र कर दी। उस असबाब रहित सामान्य उपकरण के घर की अधिवासिनी इस संसार की नहीं है, उसने अपने आवास एवं बहिर्वास, जीविका और जीवन को पृथ्वी से दूर कर लिया है। इतना ही नहीं हालैण्ड और बेलजियम की अपरिहार्य धूल का प्राचुर्य भी यहाँ प्रवेश नहीं करता।

बारहवीं शताब्दी के प्रतिष्ठित सेन्ट बावों के गिर्जा में अज्ञातरूप से फ्लेमिश चित्रशिल्प धारा की श्रेष्ठ सृष्टि वैन-डाईक भ्रातृद्वय की 'रहस्यमय भेड़ की सम्वर्द्धना' ढूंढ़ निकाली। और एक मजे की बात ज्ञात हुई। जान आफ गन्टे का यहीं जन्म हुआ था, यद्यपि शेक्सपियर ने उसे प्रकृत पक्ष में हमारे निकट जन्म दिया।

इसी लिए बेलजियम में आधुनिकता का अभाव नहीं है। ब्रूसेल्स तो छोटा मोटा पेरिस है, वही एक प्रकार का आमोद-प्रमोद, राजप्रासाद, बुलवार, काफे और भाषा तक। सभ्यता के विकास की ओर देखते हुए फ्रांस और बेलजियम में जो तारतम्य है वह इन दोनों देशों की राजधानी में भी पाया जाता है। ऐतिहासिक विवर्त्तन, चारुशिल्प का प्रसार, शौकीन वस्तुओं का व्यवसाय सब में ही पेरिस का एक क्षुद्र संस्करण है—अनुकरण नहीं कहा जा सकता। अनुकरण केवल शहर की गठन-प्रणाली, आधुनिक शिल्परुचि और अधिवासियों की नागरिकता में जान पड़ता है। यद्यपि इस देश में फ्लेमिश और फ्रांसीसी

दोनों भाषाएं चलती हैं फिर भी राजधानी ने सभ्यता की सभ्यतर भाषा को ही परिपाटी के रूप में ग्रहण किया है।

केवल एक विशेषता ने इसको बेलजियम की जातीयता का अभ्रान्त और असंशय चिह्न दिया है। नीदरलैंड में दो वस्तुएँ जातीयता के गठन में मेरुदण्ड स्वरूप थीं, एक 'गिल्ड हाउस' अर्थात् वणिक सभागृह और दूसरा 'टाउन हाल' अर्थात् पौर गृह, पहिला वाणिज्य और दूसरा राज्य परिचालना का प्रतिष्ठान था। प्रत्येक देश्ज शहर में ये दो रहेंगे ही। इनकी गृहशिल्प धारा ने इन सौधों के बीच उन्नति लाभ की है। घेन्ट का 'स्पीकर्स हाउस' इस देश के 'गाथिक' शिल्प का सर्व श्रेष्ठ सुन्दर वणिक सभागृह है। प्रत्येक पौर गृह के साथ इतिहास की स्मृति जड़ित है। ब्रूसेल्स के गृह में भी सामने के 'ग्रांद प्लास' में इस देश के स्वाधीनता युद्ध के प्रथम भाग और स्पेन के साथ संघर्ष की कई करुण कहानियों की स्मृति है।

बेलजियम वाले प्रधानतः धर्मपरायण हैं। धर्म को लक्ष्य कर ही इनका स्वाधीनता युद्ध हुआ था। किन्तु इतनी शान्ति पूर्वक धर्म ने आसन ग्रहण किया है कि चमत्कृत हुए बिना नहीं रहा जा सकता। ये व्यवसाय वाणिज्य में पर्याप्त आगे हैं किन्तु मन कृत्रिम नहीं हुआ है। और मध्ययुग के वातावरण के नष्ट न होने के कारण इनके जीवन में धर्म और आधुनिकता की विरोधिता के दर्शन नहीं होते। इस देश के केन्द्रस्थल 'मालिन' में यही बात मिली। नीरव धर्म चर्चा के फल स्वरूप धर्मपरायणता इतनी व्यापक है, फिर भी राष्ट्र और धर्म में कोई संघर्ष नहीं होता।

जान पड़ता है 'होली ब्लड' की शोभायात्रा यूरोप की सब धार्मिक शोभायात्राओं से विख्यात है। सब स्थानों से दूसरी मई के पश्चात् प्रथम सोमवार को कैथोलिक लोग तीर्थ करने

आते हैं और 'हमारे अश्वारोही प्रभु' के रक्त के स्मारक का सम्मान कर जाते हैं। शोभायात्रा के प्रथम और द्वितीय अंश में बाइबिल की कहानियों का वर्णन और अभिनय होता है। पुराने टेस्टामेन्ट से ख्रीष्ट की यंत्रणा की कहानी और नूतन टेस्टामन्ट से उनके जीवन की कहानी ली गयी है। उसके पश्चात् 'फ्लैन्डर्स के काउन्ट' का समारोह के साथ प्रवेश होता है, और उसके बाद बिशपों के पीछे पीछे और नगर पिताओं और 'महाशोणित के धर्म भ्राताओं' के सामने स्वर्ण पात्र में उसी पवित्र रक्त के चिह्न का प्रवेश होता है। इस शोभायात्रा को पार करने में दो घण्टे लगते हैं। चारों ओर से घण्टाध्वनि होती है और बिशप रक्तचिह्न देखने के लिए नतजानु हुई जनता को आशीर्वाद देते हैं। फिर वही 'क्रूसेड' की याद आजाती है। द्वितीय क्रूसेड में विशेष वीरत्व के निदर्शन स्वरूप फ्लाण्डर्स के काउण्ट ने इस रक्त के स्मारक को जेरूसलम में उपहार के रूप में पाया था। उन्होंने उसी को ब्रूज शहर को दान किया और मजिस्ट्रेट संघ तभी से श्रद्धापूर्वक साधारण लोगों के लिए उसकी रक्षा करते चले आ रहे हैं। इस देश में न तो धर्मान्धता थी और न धर्म के नाम पर व्यवसाय परायणता।

उत्तर देश के इस वेनिस को मध्य युग का स्रोत वेनिस की खाल के समान ही घेरे हुए हैं, यद्यपि इस ब्रूज में अनेक परिवर्तन हो गये हैं। उसकी खाल के जलपथ से घिरे हुए प्रासाद और मन्दिरों को देखने के लिए आधुनिकों का आगमन हो रहा है और दिखाने के लिए आधुनिक उपायों से चेष्टा की जा रही है, फिर भी ब्रूज अभी मध्ययुग पार कर वर्तमान में नहीं आ पहुँचा है। वर्तमान युग की सर्व श्रेष्ठ प्रतीक गत महायुद्ध की अग्निशिखा ने इसका भी स्पर्श किया था। यहाँ से 'बस्' पर ही 'ईपर' (बृटिश टामी का विख्यात वाइपारस)

डिक्समूड, न्यूपोर्ट आदि युद्ध क्षेत्रों में आना जाना हो सकता है। मरण-लीला की इस श्मशान भूमि में 'ट्रेञ्च' (खाई) अब भी इस प्रकार सजाई हुई है, कि उसी सुरंग पथ में पृथ्वी के नीचे नाम मात्र के आश्रयस्थल में अथवा चोरगृह में घूमते घूमते शरीर काँपने लग जाता है, और डर लगता है कि अभी ही कोई संगीनधारी शत्रुसैनिक अट्टहास्य कर मेरी ही अवस्था संगीन कर देगा। इतने समीप हैं ये युद्धक्षेत्र। तब भी ब्रूज के प्राणों को ये स्पर्श नहीं कर पाये हैं। वर्तमान की चंचल उद्दाम जीवन यात्रा की लहरें ब्रूज की नहरों तक नहीं आ पहुँची है। इस युग का यंत्रशिल्प यहाँ नहीं है और न विशाल मसृण 'मैकाडम' का राजपथ। संकीर्ण गलियों की दोनों ओर अनुच्च प्राचीन गृहद्वार में प्राचीन स्त्रियाँ 'लेस' (फीता) का काम करती हैं,—उनके सामने के पहाड़ी रास्ते पर विदेशी उत्सुक आधुनिकों की एकदम उपेक्षा करती हैं। बारहवीं शताब्दी से आज तक Belfry (घन्टा घर) की चोटी पर Carrillon के काठ के डंडों पर हारमोनियम की रीड के समान ठोंक ठोंक घन्टा बजाकर नाना विदेशी सुर के ऐकयतान वादन के बीच शाम को ही ब्रूज सो जाता है। सारे रात्रि के 'बाल' नृत्य के चटुल चरणाघातों से उसकी निद्रा भंग नहीं होती।

पश्चिमी समुद्रतट के 'अस्टेन्ड' के नृत्य और जुआ का तीर्थ कुसीआल, के सामने के वास विरल समुद्र स्नान के वालु-वेला में भी ब्रूज के उसी स्वर की झंकार कानों में गूंजती रहती है—

Somewhere a voice is calling.

"कहीं से एक आवाज़ पुकार रहा है"

स्वर्ग से विदा

"कण्ठ की मन्दार मालिका म्लान होने को आयी"। अपनी कैशोर कल्पना के स्वर्ग से विदा लेने का समय आगया। निशान्त के सुखस्वप्न के समान तीन वर्ष। बहुत अधिक दिन नहीं। तथापि मानो जन्मान्तर के उस पार से पूर्व दिगन्त के अरुणोदय की ओर पहले पहल देख रहा हूँ। और अन्तर में है एक करुण निस्तब्धता। इसीलिये अब मन का हिसाब आँक कर देखने का समय आया है।

याद आता है, कमला सौरभमदिर 'वैलेन्सिया' के बालुका-तट पर बैठ पूर्णिमा रात्रि में पूर्व मुख होकर नील भूमध्य सागर में देश के नाम पर उत्सर्ग कर एक फूल छोड़ दिया था। फिर याद आता है, स्वप्न में एक बार आकुल भाव से समुद्र पथ पर पैदल यात्रा की थी, और हर एक पदक्षेप के साथ एक एक पद्म पुष्प जल के ऊपर जाग उठे थे, वह स्वप्न देश की भूमि का स्पर्श करते ही समाप्त हो गया। अब देश लौटने के समय उस आकुलता के साथ उद्वेग मिला जा रहा है। इतने दिन में न जाने कितना बदल गया हूँ, और देश अभिमान वश उसे न समझना चाहूँ तो? किन्तु मुझे बदलना तो होता ही। यूरोप के विचित्र बहुमुखी प्राणों के संस्पर्श में आकर भी कोई न बदले तो उसे जड़ पदार्थ ही कहना होगा। यूरोप

ही क्यों यदि भारतवर्ष में ही रहता तो भी नये नये भाव संघातों में पड़कर कितना बदल जाता इसका ही क्या ठीक है, एवं प्रत्येक दिन का देखा वह परिवर्तन किसी क नेत्रों में न पड़ता। कोई भावधारा ही इस व्यवधान लोपकारी परस्पर के संयोगमय युग में भौगोलिक सीमा के बीच आबद्ध नहीं रह सकती। और उसी भाव के आवर्त्त के बीच से बहुत दिन पश्चात् जब अचानक उठ कर आऊँगा तब सब ही विस्मय से देखेंगे। उसकी अपेक्षा यह अधिक मर्मान्तिक होगा यदि कोई कह उठे—"अहा! क्या अच्छा नमूना विदेश से देश में लौटा है; बिलकुल नहीं बदला है।" इस प्रकार की बात प्रकारान्तर से गतिशील मन के लिए अपमान जनक होगी। जो मेरा हुआ है वह परिवर्त्तन नहीं, परिणिलि है। जीवन भर ही इस परिणिति का कम यिकास होता रहे।

देश वापस लौट आऊँगा, किन्तु शकुन्तला के तपोवन वास त्याग काल के समान विच्छेद का मोह क्या पद पद पर अनुभव न करूँगा? क्या यह क्षणिक कुटीर कुछ क्षणों के लिये भी याद न आयेगा? उसके वातायन को, जिसके भीतर से विराट् लन्दन का दूर का कोलाहल नौका के नीचे छलछल शब्द के समान अस्पष्ट रूप से उतराता रहता था; एवं नीचे पथचारी और पथचारिणियों की उल्लासमय शोभायात्रा देख उनके जीवन को कल्पना में काव्य सा अनुभव करता था, जिसके भीतर से आसन्न शीत के छोटे से छोटे होते हुए दिन मेरे कक्ष कोण म आलोक के सुदीर्घ चिह्न रख कर जा रहे हैं, जिसके भीतर से देख रहा हूँ इस चिन्ताहीन प्रवास के कितने नव परिचित सुख, नव नव विस्मय के दान, दिगन्त की वर्ण म्लानता में शरत की शेष रश्मि रेखा के समान करुण अवसान प्राप्त करेंगे? उन दिनों की बात क्या याद न आयेगी, जब आशा और सफलता

कर्मभार से सार्थक दिनों की समाप्ति में, अग्नि उद्भासित अपने कमरे में लाइलाक गुच्छ के नीचे बैठकर एकान्त में आत्म उपलब्धि किया करता था?

किन्तु यूरोप के मन में शान्ति नहीं है। उसमें समृद्धि है, संहति नहीं, शक्ति है, शान्ति नहीं। निशिदिन परिवर्तन और नित्य नूतन का अभिषेक है। उसी अंग्रेजी गान की याद आती है, " Paris, stay the same " ("पारी, ऐसी ही रहो")। किन्तु पारी (Paris) क्या वैसी ही रहने वाली है? यूरोप तो ध्यानमग्न, आत्मसमाहित, अपरिवर्तनीय भारत-वर्ष नहीं है उसे परिवर्तन के स्रोत में प्रवाहित होना ही पड़ेगा। नव नव विकास के पथ पर उसकी गति है, उसकी भावी परिणति तो वर्तमान में ही पूर्णता का लाभ नहीं कर पाती।

जो अन्तहीन जीवनोत्सव मैंने देखे हैं केवल वे ही यूरोप की शेष कथा नहीं। उसके अभ्यन्तर में मरणोत्सव के बीज प्रच्छन्न हैं। नटराज के इस चिन्ताहीन उद्देश्यहीन अकारण पुलक में नृत्य के बीच केवल जीवन का ही नहीं, अपितु मृत्यु का भी राग बजता है। प्रत्येक महायुद्ध के समय में यह राग जाग उठता है, और फिर किसी समय भी जाग सकता है। सृष्टिकर्ता की सृष्टि और संहार दोनों की लीला यूरोप में प्रचुर मात्रा में होती है। अपने देश पर मानो स्थिति का भार पड़ा है। इसीलिये वह शताब्दियों से आत्मसमाहित होकर पश्चिम की चञ्चलता से बहुत दूर एक-सा रह गया है, यद्यपि उस चञ्चलता और परिवर्तन की लहरें प्राची को कम आघात नहीं देती। एक विशेषण में एक महादेश का सम्यक् परिचय नहीं हो सकता, यदि सम्भव होता तो यूरोप को चिर नवीन कहता। इसका अर्थ यह नहीं कि वह चिरकाल एक ही नवीनता में रहता है,

युग २ में उसके विभिन्न रूप हैं; काल प्रवाह किसी रूप के पुराने होने के पहले ही उसे बहा ले जाता है।

यूरोप का मेरा पहिचानना पूरा नहीं हुआ। अनन्त जीवनोत्सव एवं आसन्न मरण समारोह के बीच जो प्राणों का वैचित्र्य है उसके कितने ही चित्र अभी भी बाकी हैं। किन्तु सबको ही क्या समाप्त कर देखा जाता है? अपने ही मन को क्या पूर्णतः जान सका हूँ? सिन्धुगामी तरंग के समान जीवन प्रवाह कितने देशों के तटों का अनुभव करता और कितने ही पल विषम अथवा सहानुभूति श्यामल पथ पर निरुद्देश यात्रा में घूमता हुआ फिरा। फिर यदि अपने कैशोर स्वप्न के तीर्थ पर आऊँ तो कितनी नूतन वस्तुओं को खोज निकालूंगा इसकी सीमा नहीं। यूरोप आगे बढ़ जायगा, मेरा मन भी आगे बढ़ेगा, कारण इन दोनों में कोई भी स्थाणु नहीं है। इसीलिए फिर नित्य नवीन के साथ नव परिचय होगा। यह शतदल पद्म तो नहीं, यह नित्य-प्रसारी प्राणपुष्प है, उसके प्रत्येक दल का रूप रस और परिचय स्वतंत्र है। उस विचित्रता की आशा में दिन गिनना भी तो कम नहीं है।

फिर भी—फिर भी कितनी ही मोहिनी क्यों न हो यूरोपा, वह मेरी नहीं है। मेरी नियति यहां नहीं, मेरे देश में है। यहाँ जो पाया उसने मेरा मन उर्वर कर दिया है, किन्तु उद्बुध तो यहाँ नहीं हुआ। अतएव जो कुछ पाया वह कम नहीं, फिर भी सब कुछ नहीं है। मेरे जीवन की परिणति यहाँ नहीं हो सकती, यहाँ कोई मेरे लिये प्रार्थना नहीं करेगा, सौभाग्य की कामना कर तुलसी के नीचे संध्या दीप न जलायेगा; रवीन्द्रनाथ के शापभ्रष्ट के 'स्वर्ग से विदा' के समय के समान अश्रुबाष्पहीन मेरा प्रत्यागमन होगा। और इधर मेरा देश भी मुझे छोड़कर अनेक दिशाओं में चला गया होगा। वह जिस प्रकार

मुझे परीक्षा कर ग्रहण करेगा उसे भी मैं नूतन प्रकाश में देख सकूंगा। जिसके बीच जन्म और प्रथम जीवन यापन किया है उसीके बीच सब रूप, सब सत्य, और सब आशाएँ निहित नहीं हैं, इसी ज्ञान के आलोक में देश को देख पाऊँगा। और अपनी अनावृता मातृभूमि की ममता और स्निग्ध हास्य की माया उस ओर की तीव्र आलोक दीप्ति को धीरे धीरे ढक देगी, उसके अभाव को सहनीय और क्रमशः सहज कर देगी। मेरा रूपान्तर हो जायगा।

फिर भी यूरोप की विच्छेद व्यथा पद पद पर अनुभव करूँगा। विशेष रूप से जब ग्राम ग्राम में दिन दिन वैचित्र्य हीन जीवन सरसी के श्यामल शैवालदल के साथ जड़ित हो जाऊँगा, इस आलोकोज्ज्वल लीलामय जीवन स्रोत में शरीर प्रवाहित कर अपनी सत्ता भूल जाने में विपुल विरति नहीं पाऊँगा। और क्या नहीं पाऊँगा, आनन्द चञ्चलता और अपरिसीम उत्साह। अपने को भूलकर विश्राम देना भी नहीं पाऊँगा। इसी प्रकार पथ पर भीड़ रहेगी, मन में अनाडम्बर भीरुता रहेगी, केवल परिचयहीन बह जाने का सुख नहीं रहेगा। मैं इसी प्रकार रहूँगा, मेरा अनुभूति प्रवण मन भी ऐसा ही रहेगा, केवल पारिपार्श्विक बदल जायगा। मेरा मैं शायद सांसारिक प्रयोजन-वश कृत्रिमता और सहानुभूति हीनता के मलिन आवेष्टन में संकुचित हो जायगा। किन्तु क्या सचमुच ऐसा ही होगा ? जीवन के श्रेष्ठ तीन प्रभावान्वित वर्ष यूरोप में बिताये, उसकी तुलना और होगी कि नहीं, नहीं जानता। और सब वापस पा सकता हूँ, किन्तु उस समय को वापस न पा सकूंगा, जिस समय में असीम की शेष सीमा भरी अमरावती की इस पृथ्वी पर रचना की, अपने व्यक्तित्व विकास का जो समय सकल प्रश्न, द्वन्द्व और संशय के ऊपर जाकर भरी कल्पना में जीवन

के साथ प्रथम शुभदृष्टि के समान रह गया। उसका आनन्द-आभास प्रतिदिन के जीवन यापन की ग्लानि पराजित कर प्रभात-दीप्ति के समान जाग उठेगा। मानता हूँ, देश की कसौटी पर विदेश का बहुत सा सोना शायद केवल सुनहला ही प्रमाणित हो। फिर भी यूरोपा ने हाथ मे जो माधवी कंगण और नेत्रों मे रूप काजल पहिना दिये हैं वे चिरदिन अम्लान रहेंगे।

मेरा पूर्वाचल पश्चिम के आलोक में उद्भासित होकर रह जायगा।